अविरल धारा

अविरल धारा

www.archanameena.com

अविरल धारा

जसकौर मीना

एक कर्मयोगी,
एक प्रेरणा

www.archanameena.com

द्वारा

रचना मीना

www.archanameena.com

अविरल धारा

www.archanameena.com

समर्पित है मेरे पिता

श्री श्रीलाल जी मीना को

जिन्होंने स्त्री की योग्यता एवँ क्षमता को कभी सन्देह की दृष्टि से नहीं देखा।
पत्नी को बन्धन मुक्त आकाश व अखण्ड विश्वास के सुदृढ़ पंख दे,
उसकी सफल उड़ान को सुनिश्चित करने वाले,
उन जैसे पुरूष, देश व समाज के विकास का आधार स्तम्भ हैं।

www.archanameena.com

प्रस्तावना

इस क्षणभंगुर जीवन के प्रत्येक क्षण में हम विचारों से मुक्त एक क्षण के लिए भी नहीं होते, यह सत्य है। चेतन-अवचेतन मन सदा अपने आप से संवाद करता रहता है। अमूल्य है ये क्षण, हम सभी जानते हैं, किन्तु विचारों के इस अनवरत प्रवाह में कितने विचार सार्थक होते हैं, यह सोचने लगें तो सच जानिए ऐसा प्रतीत होता है, जैसे ईश्वरीय वरदान स्वरूप मिले इस जीवन का बहुत महत्वपूर्ण अंश हमने उस वैचारिक मन्थन पर व्यर्थ गंवा दिया, जिनसे किसी अन्य का तो क्या स्वयँ का भी कोई हित हम नहीं कर पाए। किन्तु जब मैं उस व्यक्तित्व के बारे में सोचती हूँ, जिसके जीवन संघर्ष की यात्रा का वर्णन मैं करने जा रही हूँ, तो सहसा ही मुझे यह आभास होता है कि, यह विचारों व स्मृतियों की एक ऐसी श्रृंखला है, जिसे स्वयँ तक रखा तो स्वहित है और कलमबद्ध किया, तो परहित।

यह मेरी स्मृतियों का वह सार्थक अंश है, जो ना केवल मेरी धरोहर है, मेरे संस्कारों का उद्‌गम स्थल है, मेरे हृदय की चेतना है, मेरी आत्मा की सरल अभिव्यक्ति है, जीवन की विपरीत परिस्थितियों में मेरी संचित ऊर्जा है, वरन् भारत की प्रत्येक बेटी विशेष रूप से वे, जिनके पास सुविधाओं व संसाधनों का अभाव है, के लिए अन्धेरे में मार्ग दिखाते प्रकाशदीप की भाँति है।

मुझे विश्वास है कि यह जीवनी साहस एवँ योग्यता उत्पन्न करने का प्रेरणास्त्रोत है। हर उस नारी के नाम एक खुला पत्र है, जो रचनात्मक सोच के साथ जी रही है, चाहे वह सुदूर देहात से ही क्यों ना हो। आवश्यकता सकारात्मक सोच की है। आवश्यकता सफल होकर कदम उठाने की है। आवश्यकता मात्र अपनी और अपनी सोच की परिधि विस्तृत करने की है।

मेरे प्रयास को बल मात्र इस विचार से मिला कि जिसकी यह जीवनी है, मैं उसके जीवन का एक अंश हूँ। वह मेरी जीवनदात्री, मेरी मार्गदर्शक, मेरी जननी, मेरी माँ हैं।

उनके जीवन का प्रारम्भिक समय निःस्सन्देह कहीं अधिक संघर्षपूर्ण रहा होगा। ऐसा नहीं है कि संघर्ष ने कभी भी उनका साथ छोड़ा हो, किन्तु मेरी धारणा है कि जब व्यक्ति संघर्ष करता है और कठिनाईयों पर विजय पाता है तो, उसके आत्मविश्वास को बल मिलता है। किन्तु प्रारम्भिक समय इसलिए अधिक कठिन प्रतीत होता है, कि वहाँ

आत्मविश्वास, व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के स्वयँ पर विश्वास के कारण नहीं वरन् स्वयँ पर स्वयँ के विश्वास के आधार पर प्राप्त करता है और ऐसी स्थिति में डांवाडोल होने या प्रगति मार्ग पर पुनः पीछे धकेल दिए जाने की सम्भावनाएँ पग-पग पर होती है।

परिस्थितियाँ जो नारी को आज समाज ने प्रदान की हैं, यह निश्चित है कि वे उस समय नहीं रही होंगी। इसी कारण उनके बचपन में या उसके पश्चात् जो कठिनाईयाँ व उतार-चढ़ाव रहे, मैं उनकी प्रत्यक्षदर्शी तो नहीं रही, किन्तु तब से, जबसे कि मेरी स्मृतियों के अस्पष्ट रेखाचित्र मुझे याद हैं, मैंने अपनी स्मृति पटल पर से उन्हें धुंधला होने नहीं दिया। कभी मैं मूकदर्शक रही तो कभी उत्सुकतावश उनके कार्यों व जीवन दर्शन को समझने का प्रयास भी किया।

उनकी भावना सदैव यही रही है कि जीवन की परिस्थितियाँ कभी एक सी नहीं होती। समय व समाज चाहे जो भी हो, अनुकूलता का निर्माण स्वयँ ही करना पड़ता है। समय बढ़ने के साथ-साथ विचारों में परिपक्वता बढ़ी तो मुझे उनकी कही बातों के आशय समझना सरल होता गया। उनकी जीवनी, व्यक्तित्व के समग्र विकास के प्रयास का अध्ययन है। नारी के स्वावलम्बन, साहस व दृढ़ता के सकारात्मक परिणामों की सुखद अनुभूति है। एक ऐसे व्यक्तित्व के निर्माण की प्रक्रिया, जो सम्पूर्ण चाहे ना हो, किन्तु सम्पूर्णता प्राप्त करने की ओर मनुष्य के भागीरथ प्रयास के फलीभूत होने की सीमा है। यह उस बीज की कथा है, जिसे किसी माली ने बगिया में नहीं लगाया, ना ही प्रेम से खाद, पानी दिया, वरन् जो आकाश की विस्तृत् सीमा में उड़ान भरती एक चिड़िया की चोंच से किसी बन्जर भूमि की मुट्ठी भर मिट्टी में गिरा, स्वयँ के प्रयास से फूटा, प्रकृति ने जिसे हवा-पानी दिया, पौधा उगा, वृक्ष बना। आज उसी वृक्ष की घनेरी छाया में राहगीर ठण्डक का अनुभव करते हैं। जब अपने लक्ष्य तक पहुँचने की यात्रा में थक जाते हैं, तब पुनः ऊर्जा प्राप्त करते हैं और नवीन उत्साह के साथ आगे बढ़ जाते हैं। एक अडिग अविचलित वृक्ष के सदृश्य है मेरी माँ श्रीमती जसकौर मीना।

मेरी अभिलाषा मात्र इतनी है कि समाज में नारी शक्ति के प्रति विश्वास जागृत हो सके। स्त्री का स्वभाव यही है, उसका चरित्र यही है कि वह सुन्दरता का, संस्कारों का सृजन करती है और उसके इसी सृजन से समाज अलंकृत होता है, सभ्यता जन्म लेती है। वह अबला कहलाकर भी देश की नींव है, उसका आधार स्तम्भ है। सम्भवतः इसी कारण से मनु से लेकर आज तक विकास के जितने भी स्वप्नदृष्टा हुए उन्होंने समवेत स्वर से स्त्री की योग्यता व शिक्षा को बढ़ावा देने की बात कही है। यह विचारणीय है कि जिन कन्धों की सामर्थ्य पर शंका रह जाए, उन कन्धों पर समस्त समाज के नवांकुरों के लालन-पालन, पोषण व संवर्धन का बोझ कैसे डाला जा सकता है ?

मेरी माँ का जीवन कभी तीव्र, कभी मन्थर गति से बहती अविरल धारा की भाँति है, जिसके प्रवाह में भाँति-भाँति के प्रस्तर खण्ड आते हैं, उनके टेढे-मेढ़े नुकीले किनारे उस धारा के प्रवाह के सानिध्य से सुन्दर आकार ले लेते हैं। जो अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर गतिमान रहती है, सभी बाधाओं, उतार-चढ़ावों पर विजय प्राप्त करते हुए। मुझे सरिता के प्रवाह को बाँधना है, वह भी लेखनी से। मेरा प्रयास परिणाम है उस विश्वास का, जो उन्होंने मुझमें व्यक्त किया है। यदि इस जीवनी को पढ़कर एक व्यक्ति भी अपनी पत्नी, अपनी पुत्री या अपनी बहिन में उनकी योग्यता के प्रति विश्वास जागृत कर सके, तो मैं अपना यह लघु प्रयास सार्थक समझूंगी। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार मेरे अनपढ़ किसान नाना ने आज के सत्तर वर्ष पहले शिक्षा का महत्व स्वयँ शिक्षित ना होते हुए भी समझा और अपनी पुत्री को शिक्षित किया।

www.archanameena.com

यह देवी का स्तुतिगान नहीं, दैवीय शक्तियों का बखान नहीं, यह मानवी के पाँव के छालों की कथा है। उस मानवी की कथा जिसके वश में परिस्थितियों को बदल पाना नहीं है, किन्तु विपरीत से विपरीत परिस्थिति में घनघोर अन्धकार का जो डटकर सामना करती है, ताकि परिस्थिति उसकी दृढ़ता से हारकर उसे राह बनाने दे। उसी राह पर बढ़कर वह शिखर छू लेती है। उसने हारना नहीं सीखा, मात्र संघर्ष करना सीखा। क्योंकि संघर्ष करने वाला स्वयँ की व ईश्वर की दृष्टि में कभी पराजित नहीं होता। इसी भावना से जीवन को गतिमान रखते हुए, कर्मवान रहते हुए जसकौर जी एक किसान परिवार में जन्म लेकर भी अपने समस्त कर्त्तव्यों का सम्पूर्ण निष्ठा से निर्वहन करते हुए विश्व के सबसे बड़े लोकतन्त्र की सर्वोच्च पंचायत में अपना स्थान बना पाई।

सफलताओं के सोपान व असफलताओं के गर्त तो प्रारब्ध ने प्रत्येक को प्रदान किए। मनुष्यत्व को देवत्व में बदलने के लिए क्षणिक सुख व दुख से कुछ परे कदम बढ़ाने पड़ते हैं। किसी भी क्षण के वशीभूत हम कर्म की गति को रोक, मृतप्रायः जीवन नहीं बिता सकते। नारी जीवन जब यह सौगन्ध उठाएगा तभी समाज व राष्ट्र उसकी क्षमता के अनुरूप कर्म के द्वारा खिले दुर्लभ पुष्प से सुवासित होगा। त्रुटियों के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ। स्वजनों को सहयोग के लिए कोटिशः धन्यवाद।

समाज में शिक्षा के अभाव में शुष्क हो रही नन्हीं पौध को सींचने के लिए ज्ञान की भागीरथी को अवतरित होना होगा। अविरल धारा से चुनी गई दो बून्दों का यह अंशदान मेरे द्वारा विनम्र भाव से अर्पित है।

– रचना मीना

www.arunameena.com

मण्डावरी

www.archanameena.com

कुछ लोगों का विचार है कि स्वप्नों से भविष्य नहीं बनता, तो कुछ की मान्यता यह है कि स्वप्न देखे बिना भविष्य का निर्माण हो ही नहीं सकता, परन्तु इस कहानी में यह निश्चित है कि जब जहाँ व जिन परिस्थितियों में जसकौर जी का जन्म हुआ, वहाँ एक बालिका का जन्म माता-पिता, सगे-सम्बन्धी किसी के लिये भी, किसी स्वप्न का प्रारम्भ हो, ऐसा कदापि नहीं था। वह एक बहुत ही साधारण सा दिखने वाला दिन रहा होगा और इसका कारण थी,वह सामाजिक पृष्ठभूमि, जहाँ से उनकी असाधारण यात्रा आरम्भ होती है। यह यथार्थ की माटी से स्त्री जाति के ललाट पर एक स्वप्निल विजय तिलक की कथा है।

हमारे इस विशाल देश का एक राज्य है राजस्थान, यह आप सभी को विदित है। इसमें है एक जिला दौसा। इसी दौसा जिले की लालसोट तहसील में एक छोटा सा गांव है, मण्डावरी। जिसके अस्तित्व का आभास अधिकाँश, सुदूर बसे देशवासियों को सम्भवतः ना हो। इसी छोटे से गांव का मूल निवासी है जसकौर जी का परिवार। इस परिवार को आज भी स्थानीय लोग "परदेस्यां" परिवार के नाम से जानते है, जिसका कि अर्थ होता है ''परदेसी''।

अब इस नाम के पीछे जो कहानी हम बचपन से सुनते आ रहे हैं वो यह है कि किन्हीं कारणों के वशिभूत मेरे नाना का परिवार राजस्थान में अपना मूल निवास स्थान छोड़कर पंजाब के संगरूर जिले में जाकर बस गया। चूंकि जसकौर जी राजस्थान की मीणा जनजाति से है जिनका मूल व्यवसाय खेती-बाड़ी ही था, सो पंजाब में जो काम इस परिवार ने करना प्रारंभ किया वह थावहाँ के प्राकृतिक संपदा से समृद्ध फलों के बाग-बगीचों की ठेकेदारी।

नाना गौरवर्ण, नीली आँखो वाले कद्दावर व्यक्ति थे और नानी जो कि राजस्थान के ही छोटे से गांव 'जस्टाना' की बेटी थीं, थोड़ी श्यामवर्णा एवँ साधारण कद काठी की थीं। जस्टाना गांव मण्डावरी व सवाई माधोपुर के मध्य ही पड़ता है। नाना का नाम था भगवानाराम और नानी का धनकौर बाई। भगवानाराम जी सरल, सहज एवं व्यावहारिक सोच रखने वाले अत्यन्त कर्मठ व्यक्ति थे। पढ़े लिखे थे नहीं परन्तु वाक्पटुता उनकी पढ़े लिखों पर भी भारी पडती थी। अत्यन्त स्पष्टवादी। लाग-लपेट उन्हें ना आती थी, और ना ही भाती थी, किन्तु उनकी स्पष्टवादिता से सुनने वाले पर प्रतिकूल प्रभाव कम ही पड़ता था और इसका कारण था, उनकी बातों में हास्य का पुट होना। विकट से विकट परिस्थिति में हंसा देना उनके बांये हाथ का खेल था। इसी कारण संभवतः पंजाब व राजस्थान की दो, सर्वथा भिन्न जीवन शैलियों में अपने सम्पूर्ण परिवार को साथ लिए वे सामंजस्य बिठा पाऐ थे, और यही कारण है कि उनके परिवार में गम्भीर से गम्भीर विषय का चिन्तन और मनन आज भी उसी सहजता के साथ होता है कि परिवार की जीवन शैली पर उसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से नहीं पड़ता। यही गुण मेरी माँ में अपने पिता से प्राप्त प्रमुख गुण है, और दूसरा जो पिता से उन्हें प्राप्त हुआ वह है उनका नैसर्गिक सौन्दर्य। वही रूप रंग, वही हृदय के संतुलन और निश्छल विचारों की ओस सी दमकती आभा से आत्मा व मुख-मण्डल दोनों पखारे हुए।

सन्तान के संस्कारों में माता व पिता दोनों का बराबर का योगदान होता है किन्तु फिर भी माता कहीं ना कहीं इस क्षेत्र में पिता से सदा आगे ही रहती है। अब मैं परिचय दे रही हूँ, अपनी नानी का, वे सांवली थीं, कद काठी की भी साधारण थीं और इस साधारण रूप रंग की ओट में एक अन्यंत सुन्दर हृदय था। कोमल किन्तु दृढ़। नाना के उतार चढाव भरे जीवन में कंधे से कंधा मिला कर उन्होंने साथ दिया। छः पुत्रों व चार पुत्रियों के बड़े परिवार की जिम्मेदारियां कम न थी किन्तु नाना स्वयं कहते थे कि नानी ने जीवन भर कभी किसी अभाव का रोना नहीं रोया। अनगिनत माटी के चूल्हे अपने हाथों से वे बनाती रहीं। स्थान बदले किन्तु जीवन के संस्कारों को नहीं बदला। जब से मुझे उनकी छवि याद है तभी से वे कमर से थोडा झुकी हुई थीं और मुँह में एक भी दाँत नहीं था। परिवार में सभी पुत्र-पुत्रियों के परिवारों की वंशबेल फल फूल रही थी। कुल सदस्य संख्या सौ के पार तो होगी ही, किन्तु उनके

www.archanameena.com

रहन-सहन, विचार, जीवन पद्धति और मिश्री सी मीठी वाणी जो हृदय में ममता का रस घोल देती थी उसमें कभी कहीं कोई परिवर्तन नहीं आया।

माता धनकौर बाई

परिवार की जो भी समस्या आती, जो भी कोई अपना पक्ष रखता वे हर एक के प्रति वही धीरज, वही प्रेमभाव और मिठास बनाए रखती थी। परिवार में सभी लोग नाना नानी को '' बड़ा काका'' ओर ''बड़ी जीजी'' कह कर सम्बोधित करते थे, और उनका बडप्पन व सरलता ही थी कि जब परिवार में किसी भी प्रकार का अभाव नहीं रहा, कच्चे मिट्‌टी के घर सुविधा सम्पन्न पक्के घरों में बदल गये, स्वयं चूल्हा जलाने की कोई आवश्यकता नहीं रह गई, तब भी बडी जीजी का एक लिपा पुता कच्चा कमरा होता था, जिसके कोने में चूल्हा था, एक देगची घी से भरी रहती थी, जिसमें सूती कपड़े की लीर भिगो भिगो कर तवा रख बड़ी जीजी परांठे बनाया करती थी। जो सामने बैठ गया वो प्रेम उसी की थाली में परोस दिया जाता था। खुद के खेतों से तोड़ कर लाऐ कच्चे टिंडों की चटपटी सब्जी ओर वो सोलह परती परांठे।

पिता भगवानाराम

चूल्हे के धुएं से कोठरी की सरकण्डों और फूस की छत काली स्याह पड़ गई थी। जब घी मिट्‌टी के तवे पर पड़ता तो कोठरी में सौंधी-सौंधी महक वाला धुंआ भर जाता और सरकण्डों की झिर्रियों के बीच से निकल शाम के धुंधलके में, आसमान की नीलिमा में धुल जाता। एक ओर मिट्‌टी की हण्डिया में दूध औंटता रहता जो रात में सोने से पहले कांसे की थालियों में ठंडा कर सबको पीने को मिलता। मैंने इससे अधिक मोहक और किसी रसोईघर का वातावरण नहीं देखा जहां क्षुधा की तृप्ति मात्र देखने भर से हो जाती थी। इस तृप्तिदायक ममता भरी मनुहार की परिधि बहुत विस्तृत थी, किन्तु केन्द्र बिन्दु जो था वह बड़ी जीजी की छोटी सी दुबली-पतली, झुकी काया में उस झुर्रियों भरे साँवले मुख पर स्थित उनकी आँखों में समाहित था, जिनमें अपने-पराये का कोई भेद ना बचा था। हर छोटे को, वे "म्हारा बेटा" कह कर सम्बोधित करती थीं। उनके उस सम्बोधन की मिठास व ममत्व मेरे कानों में वैसी ही गहरे पैठी हुई है, जैसे भोर में दूर से आती मंदिर की घंटियों की ध्वनि हो। महानता का जन्म सदैव साधारण होने के बीज मंत्र में छिपा है। अनपढ़ होते हुए भी बड़ी जीजी में नारी सुलभ गुणों का अतिरेक था। ग्रामीण परिवेश से थीं सो उनके कार्यकलाप लोकरंगों से ही रंगे थे। लोकगीत, लोक कलाएं सब उनमें और वे सब में रची-बसी थी। आज भी कभी घर में कोई उत्सव हो, तो उनके सानिध्य में रही हुई महिलाएं उनके गाऐ गीत अवश्य गाती हैं। जब दीपावली आती है तो उनके सिखाए लक्ष्मी जी के चरण-कमलों के प्रतीक चिन्ह जिन्हें स्थानीय भाषा में पगल्या कहा जाता है, अवश्य आँगन में बनाऐ जाते हैं।

उनका गाया व सिखाया एक लोकगीत याद आता है जिसमें एक बालिका की अपने दादा से मार्मिक पुकार है ''सींकन को बंगलो रे, दादाजी चिड़िया तोड़ गई''।

'गीत का मर्म यही है कि मेरा तिनकों का घर था जिसे नन्हीं सी चिडिया ने भी अपने प्रहार से छिन्न-भिन्न कर दिया। किन्तु यह मात्र गीत नहीं, यह तो समाज में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति का द्योतक है। किसी समाज में स्त्री हृदय की टोह लेनी हो तो उसके रचे लोकगीतों को सुन लीजिये। घूंघट की ओट से जो तीव्र स्वर लहरियां उठती है, उनमें उसकी व्यथा, कथा, भावनाएं, अभिलाषाएं सभी मुखर हो उठती हैं।

हमारे समाज में बहुत सी बालिकाओं के पास शिक्षा का कवच कहाँ है, जो थपेडों को, प्रहारों को आत्म-विश्वास व आत्म सम्मान के साथ झेलने की शक्ति प्रदान करे ? स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि हमें मात्र समाज को शिक्षित करने की आवश्यकता है, जिससे वे अपना निर्णय स्वयँ ले सके। बेटियों की शिक्षा की आवश्यकता, जो मेरी अत्यन्त साधारण अनपढ़ नानी समझ चुकी थी, वह कई बार बड़े बड़े पंडित नहीं समझ पाते। इसी भोली समझ से उन्होंने एक ऐसा बीज बोया जो राजस्थान की जनजातियों में बालिका शिक्षा की कठिन, तपती, दुःसाध्य पगडण्डी पर स्थित सबसे विशाल, शीतल छाया देने वाला 'जसवट' बना।

कहानी यहां से प्रारम्भ होती है :- 3 मई 1947 में भगवानाराम जी के पंजाब प्रवास के दौरान ही उनकी सातवीं संतान ने जन्म लिया, नाम रखा गया 'छोटी'। मरूधरा की अंजुरी भर मिट्टी में पंजाब की पांच नदियों का जल मिल गया था। नन्हा अंकुर दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा। पिता द्वारा संरक्षित फलों के बाग-बगीचे खेल का आंगन बन गये। सारा दिन कुलांचे भरते निकल जाता। झोली भर भर आम तोड़े जाते ओर पेट भर खाऐ जाते। लम्बे प्रवास के कारण परिवार की पकड़ पंजाबी भाषा पर अच्छी हो गई थी। वहां का खानपान, रहन-सहन सभी कुछ इस परिवार ने अपनी संस्कृति में मिलाकर आत्मसात् कर लिया था। भाई बहिनों का स्नेह भी छोटी पर माता-पिता के सदृश्य ही था।

उनके परिवार के साथ ही भगवानाराम जी की एक बहन का परिवार भी संगरूर आकर बस गया था। बहुत सरल, पूरे समय भगवत् भक्ति में डूबी उनकी बहन को सहज ही अक्षर ज्ञान था और वे अपना अधिकांश समय रामायण पढ़ने में व्यतीत करती थी। परिस्थितिवश उन पर अपनी तीन संतानों के लालन-पालन, पढ़ाई-लिखाई का पूर्ण उत्तरदायित्व था। भाई की बडी गृहस्थी को देखते वे यथासंभव यह प्रयत्न करतीं कि उनके दायित्वों का बोझ कहीं उनके भाई के कंधो पर पूर्ण रूप से ना आ जाए। इसी सोच से वे अपने बचे समय में खेतों में कठिन परिश्रम करतीं और अपने बच्चों की पढाई का खर्च वहन करतीं।

भविष्य तो हमारी ओर पीठ करके खडे हुए एक अनजान अपरिचित व्यक्ति की भाँति है, जिसके चेहरे के भाव क्या है यह हम में से कोई नहीं जानता। कठोर श्रम, विषम परिस्थितियों से भरा संघर्ष पूर्ण वह जीवन था। इस सब के बाद भी परिवार में सौहार्द्र था। हंसने-मुस्कुराने के क्षण ढूंढ लिये जाते थे। प्रत्येक के प्रति संवेदनशीलता का प्रारम्भ बच्चों के हृदय में छुटपन से अपने परिवार के सदस्यों के सुख दुख में सहभागी बन कर होता है। इसकी शिक्षा कोई पाठशाला नहीं दे सकती। जीवन में कष्ट आते हैं तो क्यूं आते है ? और वे कौनसे कारक हैं, जो जीवन के कष्टों को लांघ जाने की ऊर्जा प्रदान करते हैं। यह सब व्यक्ति या तो स्वयँ अनुभव करके सीखता है, या फिर किसी स्वजन पर आई विपत्ति के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाकर विचार करने से सीखता है। जब बहन

www.archanameena.com

इतनी विषय परिस्थितियों में भी बच्चों की पढ़ाई को प्राथमिकता दे रही थी तो भाई में भी वही भावना होना स्वाभाविक था। छोटी के पाठशाला जाने लायक बड़ी होने पर उन्होंने भी सोचा कि सारा दिन जहाँ खेलकूद में बीतता है तो चलो चार अक्षर सीख ही लेगी। अक्षर ज्ञान करा देना और चिट्ठी पत्री लिखने लायक बना देना बस यही उनका तात्कालिक उद्देश्य था। पड़ोस में ही एक सिख परिवार रहता था। उनकी एक छोटी की हमउम्र बेटी थी। बस चल पड़े दोनों बच्चियों को लेकर पाठशाला। नाम लिखते समय शिक्षिका ने भगवानाराम जी से पूछा, '' ऐ दा नां की है ? (इसका नाम क्या है?)। उनके भोले हृदय ने सोचा कि "छोटी" नाम सम्भवतः पाठशाला में नहीं चलेगा तो पडोसी परिवार की बेटी "जसकौर" की ओर इशारा कर बोल पडे, '' जो ऐ दा नां है, ओई ऐदा लिख दो।'' (जो इसका नाम है वही नाम इसका भी लिख दो)।

सरल स्वभाव वाले पिता ने नया नाम बेटी को दे दिया। उस समय यह विचार भी उनके हृदय में ना आया होगा कि जाति परिपाठी व प्रदेश की सीमाओं से परे जो नामकरण उन्होंने अपनी बेटी का किया है वह उनकी ''छोटी'' इन्हीं सीमाओं को लांघ कर एक दिन अपनी जसकीर्ति फैलाएगी। यह आभास भी उनकी अन्तरात्मा को ना हुआ होगा कि बहुत बड़े तो नहीं, किन्तु राजस्थान के एक छोटे से क्षेत्र में कुछ दशकों बाद पिता अपनी पुत्री को उन्हीं का अनुसरण करके उसके नन्हे हाथ थामे विद्यालय तक ले जाऐगा। मात्र चिट्ठी पत्री के लिए नहीं, वरन् शिक्षा की सीढ़ियों पर चढ़कर शिखर छूने के लिये और उन्हीं की बेटी उस पिता के लिए इस मार्ग को सुगम बनाएगी।

प्राथमिक शिक्षा शुरू हुई गुरूमुखी माध्यम से। हमउम्र, हमनाम सहेली के साथ घर की उथल-पुथल से अनभिज्ञ पाठशाला में मन रम गया। घर से पाठशाला की राह में एक नहर पड़ती थी। कभी कभी जब उसमें पानी अधिक आ जाता तो बड़े भाई कंधे पर चढा कर पार उतारते। परन्तु परिवार में समस्याओं की नदी भी जैसे उफान पर थी और उसके पार उतरना असम्भव जान पड़ता था। भगवानाराम जी को फलों के ठेके में भारी घाटा उठाना पडा। जिस परिवार में बच्चों की झोलियां फलों से भरी होती थीं, वहीं भाग्य ने ऐसी करवट बदली कि हाथ से रोटी का कौर भी छिनता दिखाई दिया। हर इच्छा आकांक्षा धूमिल होती गई और समस्त विचारों का केन्द्र पेट भरने का जुगाड हो गया। परिस्थितियों ने करवट बदली, भगवानाराम और धनकौर बाई ने पंजाब छोड़ अपने पैतृक गांव मण्डावरी लौट आने का फैसला किया। यह बात सन् 1956 की है। एक बड़े बर्तन में मटर और छोटे आलुओं की सब्जी बनाई गई और रोटियां बांध ली गई सब बचा खुचा समेट कर और वर्षों तक सुख-दुख के साथी रहे परिवारों से विदा लेकर यह परिवार अपने जीवन का एक अध्याय समाप्त कर दूसरे पृष्ठों को टटोलने चल पडा। माता पिता को ज्ञात था कि ये पृष्ठ निरे कोरे कागज हैं इन पर अपने श्रम की स्याही से रंग भरने हैं। कुछ भी निश्चित न था। परन्तु बाल सुलभ जिज्ञासा क्या कभी परिस्थितियों की बंदिनी है ? बच्चे पूछे जाते "काका हम कहाँ जा रहे हैं" ? और काका कहते '' अपने गाँव जा रहे है, वहाँ अपनी कोठी है। सब बहुत अच्छा है''।

पंजाब में कोठी का अर्थ होता था बाग-बगीचों व फलों से घिरा घर, और राजस्थान में खेत और कुँआ कोठी कहलाता है। इसी कोठी को देखने की उत्सुकता में बच्चों की यात्रा सुगम हो गई। जब भूख सताने लगी तो जीजी ने रोटी पर आलू मटर रख कर हाथ में थमा दिये। मेरी मां कहती है कि जीवन में फिर कभी उन्हें उतना सरस और स्वादिष्ट भोजन याद नहीं पड़ता जितना वह रोटी थी। वो कौनसा स्टेशन था उन्हें याद नहीं किन्तु आज भी वो आंख बन्द कर स्मरण करें तो जिव्हा पर वह स्वाद ज्यों का त्यों है।

यथार्थ का धरातल सदैव कठोर होता है, परन्तु इस परिवार के लिऐ वह सूखा, रेतीला और गरम भी था। वो कोठी ना जाने कहाँ थी ? यहाँ तो पेड़ हरियाली कुछ भी नहीं दिखता था।जलवायु के परिवर्तन से गुलाब के फूलों जैसें

गुलाबी गाल कुम्हला गये। मण्डावरी के घर-घर में खबर फैल गई थी कि भगवानाराम का परदेसी परिवार वापस गांव लौट आया है। लोग उमड़े आते परन्तु मिलने कम देखने ज्यादा। जो देख जाते वो कहते भगवानाराम के बच्चे ऐसे है कि जैसे मोरों का झुण्ड हो ।

भाई-बहन सब ही की मनोस्थिति कुछ ठीक ना थी। मन यहाँ लगाए नहीं लगता था। भाषा माहौल सभी कुछ इतना अलग था कि जीवन में कुछ भी जाना पहचाना नहीं जान पड़ता था। छोटों की दिनचर्या खानपान, खेलकूद ही होती है। इस पर स्थान का, काल का व परिस्थिति का उतना प्रभाव नहीं पड़ता। रही बात बड़ों की तो उन्हें इस माटी से जुड़े अपने रिश्ते का आभास था। माटी से रिश्ता भी अपने जन्मजात रिश्तों की भांति ही अत्यन्त सहज होता है। जिस प्रकार किसी धरती पर पाया जाने वाला पौधा कहीं अन्यत्र ले जाए जाने पर अतिरिक्त प्रयास से ही पनपता है, किन्तु जहां का होता है वहाँ जड़ें जमाते उसे देर नहीं लगती। उसकी जड़ जैसे ही अपनी मिट्‌टी के गले लगती है उसकी हर आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। यह मरूधरा भी ऐसी ही है। पहली बार मे सूखी नीरस जान पड़ती है, परन्तु इसकी संतान के लिए मानो इसके कण-कण से रस बरसता है। माता सुन्दर हो या ना हो उसकी गोद स्वर्ग से भी भली होती है। इसी अनुभूति को आत्मसात करता यह परदेस्या परिवार धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमाता गया। अपनी धरती, अपना घर, अपना तिनका-तिनका सभी कुछ बहुत संघर्ष से प्राप्त हुआ। गारा मिट्‌टी की दीवारें खड़ी की गईं और फूस सरकण्डों की छान बाँध बच्चों के सरों पर छत की छाया की गई। अथक श्रम भी पूरा नहीं पड़ रहा था।

आर्थिक स्थिति उतनी ही डांवाडोल थी जितनी भंवर में फंसी कोई नैया हो। इस भंवर से बाहर निकलने के लिऐ हर कोई यथासंभव, यथाशक्ति अपने बाजुओं के चप्पू चला रहा था। भाग्य की बात थी कि सभी का प्रयास एक ही उद्देश्य के लिए था। निहित स्वार्थ का कोई विचार ही नहीं आता था। इस विपरीत प्रवाह में भी पिता के हृदय में अपने बच्चों की शिक्षा के विचार ने दम नहीं तोडा था। वे निरन्तर यही सोच रहे थे कि दुर्भाग्य के ये थपेडे कहीं इनके भविष्य को छिन्न-भिन्न ना कर दें। उदरपूर्ति की कुछ व्यवस्था हो जाने पर उन्होंने पुनः स्थानीय शिक्षिका ललिता देवी शर्मा के समक्ष अपने बच्चों के लिये विद्यादान की याचना की और स्पष्ट किया कि उनके पास कुछ नहीं है, वे बच्चों की शिक्षा के बदले उन्हें मात्र एक बोरी अनाज ही समर्पित कर पाएंगे। कृषक पिता का बालिका की शिक्षा के प्रति यह समर्पण भाव देख उन्होंने अभिभूत हो कर यह दान स्वीकार किया और जसकौर जी की निरन्तर शिक्षा प्रारम्भ हुई। अनाज के बदले विद्यादान का यही सूत्र जसकौर जी के जीवन में आगे जाकर मूलमंत्र बना। दो बहनें व तीन भाई बड़े और समझदार थे। माता पिता की परिस्थिति भली भांति समझते थे। बहनें कभी पाठशाला नहीं गई थी किन्तु घरेलू कार्य-कलापों में वे निपुण थी। उनका सानिध्य माता के आँचल की ठंडी छाया के सदृश्य ही था। जसकौर जी के लालन पालन में उनका योगदान अविस्मणीय है। सबसे बड़ी बहन को सभी "बड़ी बीबी" कहते थे। उनके साथ मण्डावरी में जसकौर जी अल्पावधि तक रही। कारण था, उनका जल्दी ही ससुराल विदा हो जाना। बड़ी बीबी का विवाह मेरठ के पास महरमती में किया गया था। जहाँ वर्षों पहले राजस्थान से कुछ मीणा परिवार काम-धन्धे की तलाश में जाकर बस गये थे। वहां वे फले-फूले और घर जमीन के मालिक बने। अंततः महरमती को लोग उन्हीं के कारण 'महरमती मीणा' के नाम से पहचानने लगे। दशहरी आम और गन्ना जो कि वहां बहुतायत से पैदा होता है, उसकी मिठास गुड़ शक्कर के रूप में ढाल बड़ी बीबी अपने परिवार के प्रति अपने स्नेह की पोटली बना किसी ना किसी के हाथ प्रतिवर्ष जीवन पर्यन्त भेजती रहीं।

उनसे छोटी बहन का नाम था "पार्वती" परन्तु उन्हें 'परबाती बीबी' कहकर बुलाते है सभी। पंजाबी टप्पों की ताल

www.archanameena.com

हो या राजस्थान के स्वरचित गीतों की उनमुक्त स्वर लहरियां, चारपाइयों की निवार बुननी हो या झालर पन्नीदार हाथ पंखियां, 'परबाती बीबी के सांवले, दुबले-पतले हाथ मानो स्त्रियोचित गुणों का भंडार ही थे। शिक्षा का स्वरूप मात्र पुस्तकें ही नहीं होता जीवन यापन की कला का होना, सुसंस्कृत होना, गुणी होना, यह भी शिक्षा का ही एक पहलू है। यह सभी मेरी मां ने अपनी बहनों ओर माता से सीखा व जाना। जसकौर जी के जीवन में उनके बड़े भाई बहनों का व बडी भाभियों का एक अहम् स्थान हैं। सद्भावना, सद्विचार व निःस्वार्थ समर्पित जीवन ये जीवन मूल्य उन्होंने उन्हीं से प्राप्त किये। स्वयं की कोई सोचता ना था। तीनों बड़े भाईयों की गृहस्थी बस चुकी थी, किन्तु उस गृहस्थी में मात्र पति पत्नी का नही वरन् समस्त परिवार का सुख दुख, भला-बुरा समाया हुआ था। भाभियों का स्नेह मातृवत् था। कोई भूल होती तो उन्हीं के आंचल में दुबक कर भाईयों की कठोर दृष्टि से बचा जाता था।

बाल मन बड़ा कोमल व संवेदनशील होता है। सम्भवतः इस संवेदनशीलता का अर्थ, यही होता है कि उस अबोध काल में हमें किन घटनाओं से कष्ट का बोध हुआ व किन बातों से अन्तर्मन हर्षित हुआ। कलेजे में चुभी हुई फांस स्वयं ही निकालने की क्षमता जुटानी पड़ती है और जब तक हम इतने अनुभवी व क्षमतावान होते हैं, तब तक मस्तिष्क भी इतना परिपक्व हो चुका होता है कि, ज्ञात होता है जिसे हम दुखदायी समझ रहे थे, कलेजे की उसी फांस की पीड़ा के कारण निकले आंसू, दृष्टि का धुंधलका मिटा कर हमें संसार को नये परिप्रेक्ष्य में देखने की शक्ति प्रदान कर गये है। हमारे ज्ञान चक्षु जीवन के कष्टों के कारण खुलते है ना कि आनन्द के कारण। जिस प्रकार कठोरमना अग्नि सोने को तपाकर कुन्दन बनाती है, उसी प्रकार नियति के अग्निकुण्ड में स्वः के भाव को भस्म कर व्यक्ति समग्र विश्व के लिये सुखदायी हो जाता है। सबकी सोचता है। उसके कर्म में भी फल की इच्छा मात्र स्वयँ के लिऐ नहीं होती वरन् सम्पूर्णता की अनुभूति वह उस फल को बाँटकर प्राप्त करता है। स्वयँ प्राथमिक शिक्षा लगन से पूरी करते हुऐ अनेकानेक बार अपने चहुँओर के वातावरण में शिक्षा के अभाव की फाँस जसकौर जी के हृदय में भी चुभ गई थी। दृष्टि मात्र भाभियों और बड़ी बहनों पर ही नहीं टिकी थी। सम्पूर्ण समाज में व्याप्त कई कुरीतियों पर टिकी थी। अपनी बहनों व भाभियों के गुणों से प्रभावित होने पर भी उनके मन में यह विचार आता था कि शिक्षित होने व अशिक्षित होने का जो अन्तर दो व्यक्तियों में होता है, वह वास्तव में उन्हें किस आधार पर भिन्न करता है ? यह अन्वेषण वही व्यक्ति कर सकता है जो दोनों ही प्रकार के व्यक्तियों को सम्मान देता हो, निष्पक्ष हो और दोनों पक्षों की मनोभावनाओं से हृदय से जुडा हो। उन्हें विचार करने के उपरान्त आभास हुआ कि मानस पटल पर सृजन तो सभी करते हैं, उस सृजन के आयाम भिन्न भिन्न हो सकते हैं, किन्तु अभिव्यक्ति की सामर्थ्य एक पक्ष में है, एक में नहीं। इसी सामर्थ्य को पाने का नाम है शिक्षा। सृजन का आधार तो मात्र हृदय व उसकी अनुभूतियां है परन्तु विवेक का जागरण, विषय का मनन ही सृजित विचार को व्यक्त करने की क्षमता देता है। प्रस्तुतीकरण की क्षमता अर्जित करने का, विवेकपूर्ण सार्थक विचारों को परहित में प्रवाहित करने का, निर्धारित लक्ष्य के लिये सुगम मार्ग खोज निकालने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है शिक्षा।

उनका यह विचार समय के साथ दृढ़तर होता गया कि विशेष रूप से जनजातीय ग्रामीण समाज में व्याप्त कुरीतियों, भ्रान्तियों के विरोध में स्वर ऊँचा करने की क्रान्ति का प्रेरणादायी आधार मात्र शिक्षित होना है। यहाँ व्याप्त कूपमण्डूकता से बाहर निकल यदि आप स्वयँ आदर्श प्रस्तुत ना कर सकें तो आपके आदर्शात्मक भाषण सुनने वाला कोई ना होगा। इसी वैचारिक मंथन, उथल-पुथल में जीवन पग-पग डग भरता बढ़ रहा था। उस समय आयु इतनी परिपक्व नहीं थी कि इस वैचारिक मंथन का कोई सिरा पकड़ सके। ना ही रत्नों का, अमृत का या गरल का ज्ञान था, जो उस मंथन के परिणाम के रूप में प्राप्त होते। बस सहज ही, स्वतः ही, अत्यन्त साधारण

परिवेश में, उतने ही प्राकृतिक रूप से जितने की प्राकृतिक रूप से लता बढ़ती है, किसी एक सम्बल को थाम बढ़ते रहना ही जैसे उसकी नियति है, जसकौर जी भी शिक्षा को आधार मान बड़ी होती गई। पिता प्रोत्साहित करते थे, व्यवधानों से बचाते थे किन्तु स्वयं पढ़े लिखे थे नहीं जो सहायता करते सो यह उत्तरदायित्व उन्होंने पूर्णतः अपने पुत्र रामपाल जी के कन्धों पर डाल दिया। सबसे बडे थे हजारीलाल जी किन्तु वे स्वयं बहुत नहीं पढ़े थे। पिता की खेती बाड़ी में सहायता करना ओर छोटे भाई-बहनों की पढ़ाई व अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अथक श्रम करना, यही उनकी दिनचर्या थी। उनसे छोटे थे रामपाल जी। अनुशासन का पर्याय थे वो। पंजाब छूटा किन्तु पंजाब की यादें उनके सीने से कभी अलग नहीं हुई। खान-पान भाषा शैली, पहनावा, उन्होंने कुछ नहीं बदला। जहां बडे भाई व पिता धोती और कुर्ता पहनते थे, वहीं रामपाल जी जीवन पर्यन्त कुरते पायजामे में रहे। सांवले चेहरे पर घनी भंवों के नीचे स्थित बड़े-बड़े नेत्रों से जब देखते तो सारा कोलाहल समाप्त हो जाता, बच्चों की उछल-कूद थम जाती, पुस्तकों के पृष्ठ खुल जाते, पठन पाठन प्रारम्भ हो जाता।

रामपाल जी से छोटे थे जयनारायण जी। ये दोनों ही भाई सरकारी नौकरियों के लिये प्रयासरत थे। उनसे छोटे रसपाल जी जसकौर जी से बडे तो थे, किन्तु उम्र का कोई विशेष अन्तर नहीं था। इन दोनों से छोटे तीन भाई बहन थे, रंगलाल जी, कमला जी, व सबसे छोटे राजकुमार जी। परदेस्याओं के वंशवृक्ष की कच्ची टहनियां अब शाखाओं का रूप ले रहीं थी। उनकी गति को सही दिशा देने के लिऐ जो काट-छांट और बंधन आवश्यक थे, उन्हें निर्धारित करने का कार्य रामपाल जी ही करते थे। उस समय गांव में सुविधाओं के नाम पर कुछ नहीं था। जो भी जुटाना जिसके लिऐ संभव होता, उसके लिए वही सुविधा बन जाती थी। जो कुछ भी नाम मात्र को था, वही सबको समान रूप से उपलब्ध था। दिन भर खेत-खलिहानों में कमरतोड़ मेहनत बड़े करते और यथासंभव मदद छोटे करते। स्कूल जाने के अतिरिक्त दिन में पढ़ाई का कोई समय नहीं था सो पढ़ाई रात ढले की जाती। बिजली तो थी नहीं बस चिमनियां जलती। बंटे हुऐ सूत की बत्तियों की रोशनी में अक्षरों पर ऊँगली धरते हुऐ सस्वर पढ़ना अनिवार्य होता था ताकि पाठ से ध्यान ना भटके। किसने, कितना अध्याय मन से पूरा किया इस पर बडे भाई की पैनी दृष्टि रहती थी। दिन बीतते रहे एक दिन भाभी की नाखून रंगने के लाल रंग से भरी शीशी 'छोटी' के हाथ लग गई। बाल सुलभ जिज्ञासा और तीव्र इच्छा के वशीभूत उन्होंने अपने नाखूनों को भी रंग लिया। यह विचार नहीं किया कि अब जब अध्याय पढ़ना होगा तो अगुँली कैसे धरेंगे ? रात ढ़ली तो चिमनियां पुनः टिमटिमाने लगीं। पढ़ने की जब उनकी बारी आई तो मुद्रियां भींचे हाथ पीछे ही रहे। भाई का आदेश हुआ कि नियम से पढ़ो, ऊँगली अक्षर के उच्चारण के साथ साथ चलनी चाहिये। अब कोई रास्ता बचा ना था सो जो होगा, सो होगा सोच हाथ आगे कर दिये। भाई के क्रोध की सीमा ना रही। वे सादगी और गरिमा के पक्षधर व्यक्ति थे। उनके संयम ने साथ छोड़ दिया और एक झनझनाता हुआ तमाचा छोटी के गाल पर पड़ा। गौरवर्ण पर भाई की ऊँगलियां लाल रंग में अंकित हो गई। भविष्य के लिऐ नसीहत मिली सो अलग। वह तमाचा मात्र गाल पर लगा हो ऐसा नहीं था, आत्मा पर उसकी छाप आज तक अंकित है। अविश्वसनीय लगता है कि दस बारह साल की आयु पर हुए उस अनुभव का परिणाम यह हुआ कि उन्होंने आज सत्तर वर्ष की आयु तक मात्र भारतीय नारी के सुहाग की प्रतीक एक छोटी सी बिंदिया को छोड़ किसी भी सौंदर्य प्रसाधन का उपयोग नहीं किया। इसका कारण कोई विशेष सौगन्ध या दबा विद्रोह नहीं था, अपितु उन्होंने भाई की इस सीख को पल्ले में गांठ की भांति स्मरण में रखा कि सौन्दर्य आन्तरिक हो, तभी मुखर होता है। व्यक्ति का मन अच्छा हो, वह मनभावन हो ही जाता है। असाधारण कर्म व्यक्ति को असाधारण बनाते हैं, बाहरी आवरण नहीं। सम्भवतः यही कारण है कि आज भी सादगी से देदिप्यमान उनका व्यक्तित्व प्रत्येक मिलने वाले पर उनके गरिमावान सौंदर्य की छाप छोड़ जाता है।

कृषक परिवार की दिनचर्या थी भी इतनी कठोर कि किसी अतिरिक्त कार्य के लिऐ समय बचता ना था। खेती बाड़ी में एडी से चोटी का जोर लगाना पड़ रहा था। घर से खेत लगभग एक डेढ़ कोस की दूरी पर थे। खेतों पर हर कार्य के लिऐ कई जोडी हाथ चाहिये होते थे, सो सभी व्यस्त रहते। छोटी की दिनचर्या और कठिन हो गई, मुंह अंधेरे उठना, मवेशियो का चारा कोठी से ला उसे काटना, दूध दुहना आदि दैनिक कार्य कलापों से निपट विद्यालय भागना। चोटियों का गूंथना तो लगभग दौड़ते ही होता था। जब लौटते तो बस्ता कोने में पटक, जो मिला खा पीकर पुनः कोठी की ओर दौड़ पड़ते। कोमल गोरी चमड़ी चिलचिलाती धूप में तांबई रंगत की हो गई थी। काका हल चलाते और वे पाठशाला के कपडों में झोली भर बीज बांधे पीछे- पीछे ओरती चलतीं।

धोरों के पानी को फावडे कुदाल से कभी इस खेत, कभी उस खेत में मोड़ते भरते रहना, सूर्यदेव का क्रोध झेलते हुऐ घुटनों के बल बैठ सारा दिन फसल की निराई गुडाई ये सभी कार्य सुनने में जितने कठिन लगते हैं उससे कई गुना अधिक दुःसाध्य होते हैं। परिवार में सदस्य अब बढ़ गये थे, अनाज पेट भरने लायक होता था। उससे धनार्जन अभी तक इतना नहीं हो पाया था कि कुछ हाथ में रह जाए।

यह सब देख माता पिता का सोया दुख बारम्बार करवटें लेता। हृदय को वज्र का बना वे अपनी संतानो का श्रम व समर्पण देखते। विपत्ति के समक्ष बाजु कमजोर पड़ जाते है, घुटने टूट जाते हैं। यदि कुछ बल रह जाता है, तो वह है मनोबल। उसी के सहारे व्यक्ति अपने भाग्य व दुर्भाग्य को निर्धारित करने की क्षमता पाता है। बडा परिवार होते हुए भी एक ऐसा सामंजस्य था कि बिना कहे सभी कार्य में हाथ बंटाते थे। माता पिता ने कभी पुत्र व पुत्रियों को भेदभाव से नहीं पाला था। जो नियम थे, वे सभी के लिऐ एक समान थे। किन्तु उस समय राजस्थान के जनजातीय समाज में पुत्री के प्रति अपने दायित्व की औपचारिकता को माता पिता घरेलू कामकाज, मवेशियों के रखरखाव और खेत खलिहान के कार्यों में दक्ष कर व कम आयु में विवाह कर पूरा कर देते थे। खानपान, रहन सहन या ज्ञानोपार्जन, क्षेत्र चाहे जो हो किन्तु बालिकाएं दोयम दर्जे की ही समझी जाती थी। सामर्थ्य के नाम पर उन्हें भला बुरा, न्याय-अन्याय, दमन-पतन सभी कुछ सह जाने की सामर्थ्य घुट्टी में प्रदान की जाती थी। उससे भी अधिक हतप्रभ होने की बात यह थी कि नारी को स्वयँ अपनी स्थिति का भान न था।

भारत भर की बात पचास के दशक की भिन्न रही होगी, जहां स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सम्भवतः सारा देश सामाजिक व राजनैतिक उथल पुथल से जाग्रत था। उच्च व मध्यम वर्गीय शहरी परिवारों में परिस्थिति ग्रामीण परिवेश के विपरीत थी। वहां अधिकांश बालिकाएं शिक्षा का वातावरण, समाज के प्रति गहरी सोच, स्वयं के उद्देश्यों के प्रति दूरदर्शिता पूर्ण मनन चिंतन, सभी मानो माता के गर्भ से विरासत में लेकर आती थी। समझदार व पढ़ी लिखी माताएं जिनके पैर शहर की सड़कों के धूल कणों से भी अपरिचित होते थे। जरी किनारदार, रेशमी

धोतियों को वे बडे मनोयोग से संभाले रहती। उठना, बैठना, चलना भी जिनका सीखने की कला होती थी। उनके हाथों में बडे बडे लेखकों की शिक्षाप्रद पुस्तकें होती थी। सुरूचिपूर्ण सजी बैठकों में राजनैतिक, सामाजिक तर्क वितर्को में वे भागीदारी करती। जिनके घर आने वाले मेहमान परिचितों में नेता, लेखक, शिक्षक, अधिकारी सभी होते। ऐसी प्रेरक नारी रत्नों की चर्चा होती जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भागीदारी की, मोर्चे स्वयं के बल पर संभाले, भाषण दिये, नेतृत्व किया। उनका भी स्मरण किया जाता जिन्होंने समाजसेवा की, सरकारी पदों को सुशोभित किया, समस्त स्त्री जाति के लिये नूतन प्रकाश द्वार खोले। किन्तु क्या यही सम्पूर्ण नारी समाज था ? क्या स्त्री के द्वारा स्त्रियों के लिये खोले ये प्रकाश द्वार थोडा सा भी अंधकार उन कंदराओ को दूर कर पा रहे थे, जहां कभी ज्ञान के सूर्य की किरण भी नहीं पहुंची थी ? उत्तर था–नहीं।

एक नारी समाज वह भी तो था जहां मिट्टी से पैदा हुआ उनका शरीर आजीवन धूल की ही खेवट करता धूल में मिल जाता था और उस निष्प्रयोजन पैदा होते मिटते जीवन के श्रम का कोई आंकलन भी न करता था। हाथ उनके भी तो थे जो कुदाल, फावडे और हंसिये थामने के इतने अभ्यस्त हो चले थे कि पुस्तक उन्हें स्वयं के लिये थामने और जानने की वस्तु कभी लगी ही नहीं। वे चर्चाऐं क्या करतीं जिन्हें राष्ट्र, स्वतंत्रता, समानता, जागरण जैसे शब्दों का अभिप्राय तक पता ना था। वे किसी के सानिध्य में ज्ञान कैसे प्राप्त करती जिनके आंख, कान व जिव्हा सदैव हाथ भर लम्बे घूंघट की कैद में पराधीन थे। स्वावलम्बन, अधिकार उन्हें कोई कैसे समझाता जिन्हें दस रूपये भी जोड़ कर गिनने का ज्ञान नहीं था। किसी बात का यहां कोई सार्थक अर्थ नहीं था। महिलाओं की तात्कालीन स्थितियों में इतना वृहत् अन्तर था कि यदि नारी शक्ति व उसका सदुपयोग समाज के लिऐ करने की बात इन जनजातियों में की भी जाती तो वे वाक्य जन्मजात बहरे कानों पर शब्दों की भांति होते। यदि कोई कुलीनवर्गीय शिक्षित महिला इनमें जागृति पैदा करने का बीडा उठा भी लेती तो ये भोले निपट गंवार अपना अधिकांश समय उसकी चरण पादुका, रेशमी धोती अथवा तौर तरीकों को देखने में ही गंवा देते। उन्हें जाग्रत करने के लिये झकझोरना नहीं था। उनके मध्य तो अनजाने में एक नई फसल का बीज बोना था, जिसे आकार लेते, बढ़ते और फल देते वे स्वयं देखते और उन फलों का एक एक बीज अपने खेत में रोप देते ताकि उसके लाभ वे स्वयं अंतर्मन में समझ सकते। जसकौर जी उसी बीज का पर्याय थी। उन्होंने किसी सूर्य किरण की राह नहीं देखी, अपितु अपनी तेल बाती पर आश्रित चिमनी की नन्हीं लौ से सूर्य को स्वयं ढूंढना प्रारम्भ किया। झोली में फसल के बीज और कंधे पर झोले में किताबें दोनों का संतुलन उन्होंने अपने हृदय में सहजता से बिठा लिया था। और यही संतुलन जनजातीय नारी समाज की जाग्रति का आरम्भ था।

सप्ताह में एक बार जब रविवार की छुट्टी आती तो उसका अर्थ खेतों में अतिरिक्त काम होता था। जसकौर जी और उनसे बडे रसपाल जी, दोनों कि आयु चूंकि बराबर सी ही थी सो दोनों पढ़ते साथ थे और कोठी पर भी साथ ही जाते थे। दोनों भाई बहन दिखने में भी बहुत कुछ एक जैसे ही थे मानो जुड़वां हो। दोनों में बडा सामंजस्य और मित्रता थी। कोई भी कार्य करना होता तो दोनों मिलकर तुरत फुरत निपटा डालते। रविवार की सुबह थी और खेत में मूंगफली की फसल तैयार थी। तैयार फसल को खोदने के लिऐ एक रूपये में मजदूर मिलता था, जो सुबह से शाम ढ़ले तक आधा बीधा खेत खोदता था। ये दोनों भाई बहन आपस मे सलाह कर, फावडे कंधो पर टांग एक एक प्याली चाय के सहारे, चिड़ियों के जागने के साथ ही कोठी पर पहुंच गये और बिना रूके बिना थके शाम ढ़ले तक उन्होंने दो बीधा खेत की मूंगफली खोद डाली। जब पिता और बडे भाईयों ने देखा तो बच्चों की हिम्मत और उनका श्रम देख अवाक् रह गये।

जिस परिवार के सदस्यों में आलस्य व निठल्लापन ना हो उसके दुर्भाग्य का अंत व भाग्य का उदय होने में अधिक विलम्ब नहीं होता। भगवानाराम जी और सबसे बड़े हजारी लाल जी ने विचार किया कि राजस्थान के इस क्षेत्र में परम्परागत रूप से जो फसलें पैदा करने की परिपाटी चली आ रही है क्यों ना उसे त्यागकर पंजाब ही कि तरह यहां भी साग सब्जी उगाई जाऐं। इससे साल में तीन फसल प्राप्त होंगी और दो फसलों के बीच के समय में खेत व्यर्थ ही खाली नहीं पडे रहेंगे। ईश्वर की दया से कुऐं में पानी लबालब रहता था और खेत की मिट्टी सब्जियों की बाडी करने के लिये उपर्युक्त थी सो खरबूजे, ककड़ी, टिंडे आदि के बीज रोपे गये। मिट्टी के धोरों में पानी कल कल बहता, जिसके ऊपर मूंज की रस्सी से बनी खाट बिछा जेठ की तपती दुपहरी फसल की रखवाली करते काटी जाती। नीम बबूल के इक्का दुक्का पेड़ भी लगाऐ गये। वर्षों तक अनाथ रहे खेतों ने ममता का भरपूर मोल चुकाया। वर्ष में तीन बार फसल बेचने से आर्थिक स्थिति कुछ सुधरी।

जसकौर जी की किताबें भी उनके साथ घर से कोठी व कोठी से घर का रास्ता दिन में जाने कितनी बार तय करती। ककडियों की रखवाली करते पाठ याद किये जाते और टिंडे तोड़ते हुऐ उन पर मनन चिंतन होता। स्थिति कुछ ठीक होने से खान पान, रहन सहन से सम्बन्धित न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति अब सरलता से होने लगी। किन्तु विश्राम और सुविधा अभी भी पहुंच से कोसों दूर थी। बाहरी दुनिया से यह क्षेत्र इतना कटा हुआ था कि सामाजिक आचार व्यवहार में क्या परिवर्तन आ चुके है, इसका भान तक यहां के लोगों को नही था। उदाहरण स्वरूप भगवानाराम जी का परिवार चाय से परिचित भी था और पंजाब प्रवास से ही इसका प्रयोग करता था। इस क्षेत्र विशेष में चाय क्या होती है व कैसे बनाई जाती है, लोगों को कुछ ज्ञात नहीं था। सो कौतुहल वश ग्रामीण देखने आते कि परदेसी मीणा चाय कैसे पीते है।

अनेकानेक पल जुडते जुडते, अनेक दिनों में परिवर्तित होते गये। समय जैसे मुट्ठी की रेत हो गया, सरकता गया, फिसलता गया। परबाती बीबी भी अब ससुराल विदा हो चुकी थी। अपने परिवार के कष्ट और अभाव भरे दिनों मे उन्होंने यथासंभव श्रम कर हाथ बंटाया था। किन्तु सर्वगुणसम्पन्ना बीबी को पुर्णरूप से अशिक्षित घर मिला था, सो समस्त गुण धरे रह गये। कोई उन गुणों को सराहने वाला ना था। जैसी परिवार की दिनचर्या व कार्य थे उन्होंने भी वही अपना लिऐ। सीना-पिरोना, बुनना-काढ़ना बिसारी हुई बातें हो गई। जसकौर जी को एक नया अनुभव हुआ। उन्होने सोचा था सृजन की अभिव्यक्ति का माध्यम शिक्षा है किन्तु यह विचार तो अब तक किया ही नहीं था कि उस अभिव्यक्ति को सम्मान भी तो वही दे सकता है जो स्वयं शिक्षित हो। कौन समझेगा?''कर फुलेल को आचमन, मीठो कहत सराह। रे गंधी, मत अंध तू, इत्र दिखावत काह।'' मनमोहक गंध के इत्र लेकर गंधी गली गली घूमता हो और उसे दिखाऐ जो फुलेल को चख कर उसके मीठे होने के गुण की प्रशंसा करे तो व्यर्थ ही है उसकी सुगंध।

उन्होंने प्रण कर लिया कि वे विवाह उसी व्यक्ति से करेंगी जो स्वयं शिक्षित हो अन्यथा समाज में व्याप्त पिछड़ेपन व अशिक्षा से टक्कर लेने का उनका स्वप्न छिन्न भिन्न हो जाऐगा। परिवार में अब उन्हीं के विवाह की चर्चाऐं चलती थी सो उनका यह प्रण एक प्रकार से उनके निजी संघर्ष का शंखनाद था।

www.archanameena.com

लकडी का तना नदी की उच्छृंखल धाराओं में फेंक दिये जाने पर भी, ना डूबने के अपने स्वभाव के कारण सतह पर तैरता हिचकोले खाता, लक्ष्यविहीन बढ़ता जाता है। वही तना जब नाव ओर चप्पू का रूप ले लेता है तो जल की सतह पर तैरते रहने का उसका गुण उद्देश्य को प्राप्त हो जाता है, लक्ष्य मिल जाता है। मात्र प्रवाह के साथ साथ बहते रहने का नहीं वरन् प्रवाह के विपरीत सम्पूर्ण शक्ति लगाकर किनारे पहुंचने, का औरों को डूबने से बचाने का। तीव्र बहती धारा में से स्वयं का रास्ता चुनना नैया व खिवैया का स्वभाव है, चाहे वह कितना ही दुष्कर मार्ग क्यों ना हो। किसे ज्ञात है कि नदी अनन्त समुद्र से मिलाऐगी या ऊँचाई से गिरा कर चकनाचूर करेगी। इसी संशय से त्रस्त मन था जसकौर जी का। परन्तु ज्ञान नैया पर मनोबल की पतवार लेकर वे जुट गई, प्रवाह से अलग अपना मार्ग खोजने के लिए। अपनी बुद्धि को जो मानस में तर्क वितर्क कर के उचित जान पड़ता था उस पर फिर वे अडिग रहती थीं। चाहे कोई उसका विरोध करे। लक्ष्य उन्होंने कभी वे निर्धारित नहीं किये जो स्वयं की दृष्टिसीमा से परे हो वरन् जो आज दृष्टि को सुलभ है, उसी के लिऐ वे प्रयासरत रहीं।

परंपरा से भिन्न कुछ करने की इच्छा उनकी बालपन से रहती थी। खेतों में जब गेंहूं बाजरा खडा होता वे गाजर मूली के बीज जाने कैसे जुटाकर धोरों के किनारे किनारे बो देती। सब बडे झुंझलाते, किन्तु समयान्तराल में जब खेतों पर रोटी के साथ खाने को मिलते तो सभी उनकी भूरी-भूरी प्रशंसा करते। खरबूजे, ककड़ी तोड़कर कुऐ में डाल दी जाती ताकि शीतल होने पर बाल्टी रस्सी से निकाल कर खाई जाए। नहाने व कपड़े धोने के लिये भांति-भांति के साबुन कोई जानता ना था, जो जानते भी तो वे उपलब्ध नहीं थे किन्तु उनकी हर वस्तु को साफ रखने की आदत ऐसी थी कि घर से कोस भर दूर एक छोटी सी तलाई में चारों ओर की मिट्टी पर खार जमा होता था, वहां जाकर खार को खुरचकर पानी में घोलना व उससे कपडे धोना उनकी दिनचर्या मे शामिल था। वह तलाई मण्डावरी में आज भी इसकी साक्षी है। बड़े परिवार में सीमित मात्रा में साधन सुविधा व सामान प्रत्येक को मिलता है, परन्तु जसकौर जी को जो भी मिलता वह अत्यन्त सुरूचिपूर्ण ढंग से सहेजा हुआ उनके पास सुरक्षित मिलता।

उस समय जब लडकियां विद्यालय ही नहीं जाती थी, प्रतियोगिता में हिस्सा लेना तो दूर, तब उन्होंने अपना नाम भाषण प्रतियोगिता में लिखवा दिया और उस सम्पूर्ण क्षेत्र में अव्वल स्थान लाने वाली वे प्रथम छात्रा बनीं। कहते है ''होनहार बिरवान के होत चीकने पात''। माता पिता व सम्पूर्ण परिवार को गर्व भरी प्रसन्नता का अनुभव हुआ जब उन्होंने राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। यह सन् 1962 की बात है।

कभी धूप कभी छांव के वे दिन महीनों में बदलते गये मैट्रिक के बाद की पढ़ाई उनकी स्वयंपाठी के रूप में हुई। ग्यारहवीं उत्तीर्ण करने के बाद इंटर की परीक्षा का आवेदन उन्होंने मध्यप्रदेश बोर्ड से किया इसी बीच उनकी बामनवास में शिक्षिका के पद पर नियुक्ति हो गई। रामपाल जी की नियुक्ति बामनवास पंचायत समिति में थी अतः उन्हें वहां भेजने में माता पिता को भी कोई आपत्ति नहीं हुई। बामनवास में अध्यापन कार्य का अनुभव उन्हें मात्र दस माह के लिये हुआ किन्तु कुछ कारणों से यह प्रवास उनके लिये अविस्मरणीय रहा। प्रथम तो एक अध्यापिका का उत्तदायित्व निभाने के परिणाम स्वरूप उनका उस मार्ग से परिचय हुआ जो मार्ग उनके लक्ष्य तक उन्हें ले जाता था। यह अनुभव उन्हें हुआ कि किसी भी प्रकार की चेतना का प्रवाह, सामाजिक स्थितियों में बदलाव जितना एक शिक्षक के हाथ में है उतना किसी और के वश में नहीं। उनके स्वयं के व्यवहारिक ज्ञान में इस समय बढ़ोतरी हुई। उनकी स्थिति घोंसले से पहली बार बाहर आए चिड़िया के बच्चे जैसी थी। लग रहा था कि बाहर की दुनिया में सीखने को बहुत कुछ है। ज्ञान के मोती चहुँओर बिखरे पडे हैं। एक-एक चुनकर माला नहीं बनाई तो स्वयं के व्यक्तित्व का अलंकरण संभवतः नहीं। बामनवास एक छोटी सी जगह थी। परन्तु कब क्या सीखने को

मिल जाए कौन जानें ? वहां एक अध्यापिका थी नाम था सरदार देवी शर्मा। जसकौर जी का अधिकांश समय उनके सानिध्य में व्यतीत होता था। कारण था उनका हर कार्य में दक्ष होना। वे स्वयं सारे कपडे सिलतीं, बहुत सुन्दर कशीदाकारी करतीं, जाड़ों में बुनाई करतीं। अपने हर कार्य में वे अत्यन्त सुगढ़ थी। अच्छी शिक्षिका के साथ ही सुगृहणी भी थीं। अपने बचे समय का भरपूर सदुपयोग करतीं। जसकौर जी उन्हें अपना प्रथम गुरू मानती हैं, जिन्होंने उन्हें हस्तकलाऐं सिखाईं और जिनके कारण वे छोटे छोटे कार्यों के लिये कभी किसी पर निर्भर नहीं रही। सरदार देवी में सिखाने का धैर्य व परिपक्वता थी और जसकौर जी में सीखने की लगन। दस माह के उनके अल्पावधि के साथ ने इन्हें स्वयं सिलाई, कढ़ाई बुनाई सभी हस्तकलायों में निपुण बना दिया। सन् 1965 की यह बात है। तब से आज तक लगभग चौवन वर्ष बीत गये। जब भी किसी ने उनकी बनाई किसी बस्तु की प्रशंसा की, उन्होंने कृतज्ञ भाव से अपनी उन्हीं गुरू सरदार देवी को इसका श्रेय देने में कोई संकोच नहीं किया। सन् 2003 सरदार देवी के परलोक गमन तक जसकौर जी ने अपनी इस कर्मवान प्रेरणास्त्रोत से निरन्तर संपर्क बनाए रखा।

www.archanameena.com

सन् 1965 के उत्तरार्द्ध या 1966 के पूर्वार्द्ध की बात रही होगी। बुद्धि अधिक प्रखर, सोच अधिक विस्तृत व मानसिकता प्रत्येक दृष्टिकोण से कहीं अधिक परिपक्व हो चुकी थी। स्वप्नदृष्टा तो वे थीं ही, किन्तु इन्हीं बालमन के स्वप्नों ने अब यथार्थ के धरातल पर पैर जमाकर कहीं व्यापक रूप ले लिया था। प्रत्येक निर्णय पर विवेकपूर्ण विवेचना की शक्ति सरस्वती के वरदान के रूप में उनके पास थी। आयु भी इतनी थी कि तर्क-वितर्क और विश्लेषण करके सही और गलत को काट कर अलग करने की उनकी योग्यता को अब धार लग गई थी।

इन्ही परिस्थितियों में परिवार का परिचय श्री लाल से हुआ। श्रीलाल जी सर्वप्रथम जसकौर जी के भाई जयनारायण जी के सम्पर्क में आऐ और यह सम्पर्क शीघ्र ही घनिष्ठ मित्रता में परिवर्तित हो गया। वे श्रीलाल जी के तेजपूर्ण मुख मण्डल के साथ-साथ उनके सरल किन्तु जागरूक व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित थे। इसी धीर गम्भीर और सीधे-सादे व्यक्तित्व के पीछे प्रगतिशील विचारधारा से ओत-प्रोत अपने व अपने परिवार को शिक्षित करने, समाज को विकास के मार्ग पर ले जाने की महत्वाकांक्षा में नख से शिख तक डूबा एक स्वप्नदृष्टा युवक था। उनकी सुकुमार छवि देख सहसा यह विचार करना कठिन था कि उनके कंधो पर पारिवारिक कर्त्तव्यों से भरी गृहस्थी की गाडी खींचने का उत्तरदायित्व है।

जिला सवाई माधोपुर तहसील बामनवास ग्राम शफीपुरा के वे मूल निवासी थे। अच्छी खेती-बाडी दो ऊंट, दो घोडे, घर-बार सभी कुछ था। पिता झूथालाल जी मीणा व माता किशनबाई के पांच पुत्रों में ज्येष्ठ थे। झूथालाल जी ने अपने पुत्रों को पढाने-लिखाने और सर्वगुण सम्पन्न बनाने की साध मन में पाल रखी थी। कभी किसी पंडित को कविता रचने ओर ग्रंथ पढाने के लिये पकड लाते तो कभी किन्हीं संगीत गुरू से प्रार्थना कर उसे गांव के मन्दिर में रोक लेते कि वे उनके पुत्रों को शिक्षा दे सकें। कन्हैया रास के गीत रचने और गाने में वे माहिर थे। पुत्रों को जब तक पिता के प्रयासों का बोध होता, इन मार्गों पर उनके साथ कुछ डग भर पाते इसके पूर्व ही अचानक झूंथालाल जी का असामयिक स्वर्गवास हो गया। श्रीलाल जी की अवस्था चौदह या प्रन्द्रह वर्ष की रही होगी, और सबसे छोटे भाई मात्र एक-डेढ़ वर्ष के थे। अचानक आई इस विपत्ति ने घर की सुख समृद्धि छीन ली।

वे चार लड़ सोने के बद्दी-डोरे, कानों की मुर्कियां, हमउम्रों के साथ सात गांव गुंजा देने वाले कन्हैया रास दंगल, सब छूट गये। लड़कपन पर गांभीर्य छा गया। घोडे बिके, ऊँट बिके, बस शेष रह गये उनके झूम झालर। पुरानी स्मृतियों की भांति कोने में पडे, परन्तु एक और वस्तु साथ रही आजीवन वो था स्वाभिमान। और उसी स्वाभिमान से किये गये श्रम व रखे गये संयम के समक्ष सारा गांव नतमस्तक था, और भूरी-भूरी प्रशंसा करता था। छोटे भाई अबोध थे, सो श्रीलाल जी को ही हल बैल अपनी शिक्षा की गाडी के साथ साथ खींचने पड़े। जैसे-तैसे दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की और उन्हें निकट के गांव मे शिक्षक की नौकरी मिल गई।

अपने छोटे भाईयों को लेकर उनके अनेक स्वप्न थे। सपने देखना मनुष्य होने का प्रमाण है। सुनने वाले को स्वप्न अवास्तविक लग सकते हैं परन्तु देखने वाले के लिये वह सत्य ही प्रतीत होते है। समय ऐसा अनुकूल ना था, ना संसाधन थे, ना ही आर्थिक स्थिति उन्हें जुटा पाने जैसी थी, किन्तु मन में लगन एवं प्रयासों में ईमानदारी हो तो स्वप्नों के बादलों को यथार्थ के धरातल पर बरसते देर नहीं लगती।

जिस समय वे जसकौर जी के परिवार के सम्पर्क में आए तब तक वे भारतीय जीवन बीमा निगम के एजेंट के रूप में कार्य करने लगे थे। श्रीलाल जी व जसकौर जी एक दूसरे के पूरक थे। परिवार की सोच में उनके विवाह का विचार उठना स्वाभाविक ही था। जैसा कि आदरणीया मृदुला सिन्हा जी ने जसकृति में अपने विचारों को सुन्दर शाब्दिक रूप दिया है कि ''दोनों को देख कर लगता है मानो जोड़ी एक-दूसरे के लिये नहीं, यह तो औरों के लिये बनी हो।''

दोनों को जैसे चिर-परिचित होने का आभास था। एक-दूसरे के साथ में उन्हें विस्तृत नभ की असीमित परिधि दिखाई दी। उडान के दायरे ने परों की सामर्थ्य से एक सांमजस्य बिठा लिया था। दोनों मानों एक ही लक्ष्य की ओर बढ़ती राह के पथिक हों।

9 मार्च 1967 को मण्डावरी में यह विवाह सम्पन्न हुआ। गोटे की किनार लगी हल्की पीली रंगत की वह झीनी ओढ़नी, जिस पर दूर दूर गोटे के फूल लगे हैं, मेरी मां के कपडों के बीच सलीके से टंगी है, जिसको ओढ़कर उनकी डोली पिता के घर से उठी थी। माता पिता का हृदय व्याकुल था। वे जीवन का उतार चढाव देख चुके थे, अतः जानते थे कि जो आज तक उनकी छाया में रही है, उसे स्वयं के हृदय को विशाल बनाना होगा ताकि आज से उसकी छाया की शीतलता में श्रीलाल जी का सम्पूर्ण परिवार समा जाऐ। उन्हें आभास था कि उनकी पुत्री संकुचित सीमाओं में बंधने के लिये पैदा नहीं हुई है। यह विदा का क्षण मात्र मृग की नाभि से कस्तूरी को पृथक करने जैसा था। उस कस्तूरी की सुगंध जब फैलेगी तो संसार में लोग उस मृग को अवश्य स्मरण करेंगे जिसने कस्तूरी को बिना कस्तूरी के गुण की महत्ता के आभास के, बिना उसके मूल्य का आंकलन किये, अत्यन्त सहजता व निःस्वार्थ भाव से संरक्षित किया और समाज व देश को सुवासित करने का श्रेय प्राप्त किया।

अपने विवाह से कुछ ही माह पहले श्रीलाल जी ने एक पुरानी जीप खरीदी थी। इसी जीप में बैठकर दूल्हा-दुल्हन बारात के साथ शफीपुरा लौट रहे थे। मण्डावरी से शफीपुरा की दूरी बहुत अधिक हो ऐसा नहीं है किन्तु सन् 1967 मे भगवानाराम जी के घर से श्रीलाल जी के घर तक पहुँचने के बीच की राह में एक युग की सुप्तावस्था पसरी थी। मण्डावरी मुख्य सड़क पर बसा गांव था जो धीरे धीरे अपना आकार बढ़ाता जा रहा था। वहाँ प्रत्येक जाति के घर बसे हुऐ थे और मण्डियां होने के कारण आसपास बिखरे छोटे-छोटे गांवों के किसानों की आवाजाही लगी रहती थी। सड़क से जो गली मण्डावरी के भीतरी हिस्से की ओर मुड़ती थी उसके दोनों ओर कुछ पक्की दुकानें बनी थी जो आज भी है। उन पर आवश्यकता का अधिकांश सामान उपलब्ध रहता था। इसके विपरीत शफीपुरा पहुँचने की राह इतनी सुगम न थी। दो पैदल मार्ग थे, एक गंगापुर से व दूसरा बामनवास से। अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ ये दो चार कोस के रास्ते है। छोटे-मोटे नालों को पार कर खेतों के बीच से होते हुऐ जाना होता है। यह क्षेत्र राजस्थान की सुनहरी बालू मिटटी का नहीं है वरन् काली चिकनी मिटटी का है। मानो धरती माता के नीलिमा-हरितिमा लिये सुनहरी आँचल पर किसी ने मैला हाथ पौंछ दिया हो।

इसी मटमैले हिस्से पर चित्रों की तरह अंकित हैं ये छोटे छोटे गांव। पथिक का परिचय इस मिटटी सेपैदल रास्ते पर उतरते ही हो जाता है। आता जाता हर साधन अपने पीछे इस महीन मिटटी का गुबार उडाता जाता है। इसी गुबार में राही ऐसे लिपट जाता है कि गंतव्य तक पहुँचते-पहुँचते पलकें तक इसकी सांवली रंगत से ढ़की होती है, हाथ पांव या कपडों की तो बात ही और है। जो इस मिटटी के अपने हैं उन्हें तो लगता है जैसे बचपन के साथी ने गले लगाया हो किन्तु जो प्रथम बार वहां जाते है उनका सामंजस्य इन परिस्थितियों से तभी बैठ पाता है जबकि उनका मन प्रफुल्लित हो और आँखे परिचय के लिये उत्सुक।

एक नवविवाहिता से अधिक प्रफुल्लित हृदय और भला किसका हो सकता है? दूर दूर तक जसकौर जी की दृष्टि जाती तो फैले पसरे खेत ही खेत दृष्टि गोचर होते। सरसों कट चुकी थी सो मार्च के महीने में खेतों की गोद भी सूनी थी। ग्रीष्म ऋतु के आगमन का संदेश हवा में सूखी मिटटी की गंध से प्राप्त हो रहा था। राह में तडकी हुई काली मिट्टी की पपडियों को कुचलते जीप के पहिये अपनी गति से राह तय कर रहे थे। कहीं कहीं कोई इक्का दुक्का बबूल अपनी हरियाली पर इठलाता दिख जाता, और अभिमान भला क्यों ना करता जबकि दूर तक उसके सिवा कोई छांव देने वाला नहीं था। जब ऐसे ही अभिमानी मस्तक उठाए नीम बबूलों का एक समूह सा दिखा तो आभास हुआ कि संभवतः गांव नजदीक आ गया है।

ज्यों-ज्यों गांव नजदीक आता गया, त्यों-त्यों झुरमुट की सघनता कम होती गई और उनके बीच से उभरते गये आबादी के चिन्ह वे छोटे-छोटे कच्चे घर, मवेशियों के झुण्ड और दूर से हिलती मंडराती सी दिखती कुछ मानव आकृतियां। पितृगृह की चिर-परिचित चारदीवारी से मुँह फेर जब लड़की पति के घर की देहरी पर पांव रखती है तो उसके हृदय की उथलपुथल, अर्न्तद्वन्द या तो वह जानती है या जानते है वो सबके हृदय की जानने वाले भगवान। अनजान परिस्थितियों से भय व अनजान को जान लेने की उत्सुक आकांक्षा लगभग बराबर मात्रा में होती है। किन्तु ठुड्डी तक घूँघट काढे जो नववधु इस गांव में प्रवेश कर रही थी उसके मुख पर उथल-पुथल व कौतुहल का कोई भाव नहीं था। वह जीवन में आने वाले उतार चढावों का सामना स्वयं की अर्न्तशक्ति से करने में सक्षम थी। स्वयं पर इस विश्वास के साथ उसने इस गांव की सीमा को प्रणाम किया कि जितना प्रेम यह गांव उसे देगा उस प्रेम व सम्मान को कई गुना कर इसके चरणों में अर्पण करने की सामर्थ्य, उसकी अर्न्तरात्मा में है।

जसकौर जी शफीपुरा की प्रथम शिक्षित महिला थी। गांव में उत्साह था कि श्रीलाल पढ़ी-लिखी बहू लाया है। शफीपुरा पूर्णतः मीणा जनजाति का गांव था। अन्य जातियों का एक-एक घर ही था। जसकौर जी को गांव में प्रवेश करते ही अनुभव हुआ कि किसी भी प्रकार के विकास का कोई चिन्ह यहाँ के वातावरण में परिलक्षित नहीं होता था। गांव के प्रवेश मार्ग के किनारे किनारे तालाब की पाल थी। काली कठोर मिट्टी की बनी हुई। उसकी ढ़लान पर कुछ हठी, कंटीली झाडियां थी। तालाब में स्नान करने वालों के कपडे पाल पर फर-फर बहती हवा में इन्हीं झाडियों पर सूखते साथ ही किसी ओढ़नी सुखा रही लाजवन्ती के लिये पाल पर से गुजरते ससुर-जेठ से घूँघट का काम ये झाडियां ही करतीं। यह तालाब ही पानी का एक मात्र बडा स्त्रोत था। इसके पार कुछ कुएं बने थे। कुछ एक कुओं की मुंडेर तालाब के पानी में डूबती सी दिखती थी। जब ग्रीष्म काल में गांव के कुओं का पानी सूख जाता, तब यही कुएं पानी प्राप्त करने का माध्यम होते थे। तालाब में दो-तीन जगह लाल पत्थर की सीढ़ीयां बनी थीं। यहां से छोटे बड़े बच्चे छलांगे लगाकर पानी में छपाक-छपाक कूद रहे थे। जो नहा चुके वे जीप गांव में घुसती देख कपडों की परवाह किये बिना जीप की धीमी गति का लाभ उठा उसपर लटक लिये। पूरा गांव तालाब पर ही नहाने आता परन्तु बाल गोपालों के पास नहाने के साथ-साथ और भी कई काम होते है जैसे राह पर जाते बैलगाड़ों पर लटकना, तालाब में तैरती भैंसों की पीठ पर सवारी करना। जो दुःस्सहासी थे, वे तालाब की डूब में आते कुओं की ओर पानी में गुपची फोड़ कर जाते, कुएं की कोटरों में पत्थर रखकर आते और फिर अपने साथी पर शेखी बधारते कि जा, मेरा रखा पत्थर ढूंढ़कर ला।

गुपची फोड़ने का अर्थ है, साँस रोक कर पानी की गहराई में डुबकी मारकर तैरना। अब जो ढूँढ़ लाता वही जीत जाता। गाडियो पर लटकते तो कभी कभी गाडी चलाने वाले के कोप का सामना भी करना पडता। आरेड़ की लचीली टहनी से मार भी पड़ सकती थी और मीठी गालियां भी, पर जब नई बहू आ रही हो तो जीप में से कोई भला क्या कर लेगा। यही सोच उन सांवले मैले शरीरों, भीगे बालों और मिट्टी में सने पैरों वाले बच्चों का टोला हिचकोले खाता रहा।

जीप की घर्र-घर्र और बालकों का कोलाहल सुन औरतें कौतुहल वश हाथ का काम ज्यों का त्यों रख अपनी अपनी चौखट पर आ खडी हुई। भाँति-भाँति की ओढ़नियाँ ओढ़े, हाथ से घूँघट की झिर्रियाँ बना उनसे झाँककर मानो सब जानकारी जुटा लेना चाहती थीं। घुटने से कोई दो चार अंगुल नीचा फड़द और दाखबेल का घेर घुमेर लहंगा और पाँवों में किलो, आध किलो चाँदी के कड़े। घूँघट थामे हाथों की कलाईयों में चूड़ियाँ नहीं वरन् लाख के मोटे और काँच जड़े चूड़े और बंगड़ी हुआ करती थी, ताकि खेत-खलिहान का काम करते खण्डित होने का डर ना हो। बार-बार लखेरों तक ना ही तो इनका जाना सम्भव था और ना ही इन अलंकारों के लिए रूपए होते थे।

अपनी पीढी के सभी संगी साथियों में श्रीलाल जी से बडे इक्का दुक्का ही थे। अन्य सभी उनसे आयु में छोटे थे। उस पर उनके मुख पर गाम्भीर्य ने कुछ इस प्रकार अपना स्थान सुनिश्चित कर लिया था कि सभी उनका आदर करते थे और उन्हें ''भाईसाब'' कह कर ही सम्बोधित करते थे। यहां जितनी नारी आकृतियाँ रंग बिरंगे परिधानों में हाथ-हाथ भर के घूंघट काढे जसकौर जी को अपने स्वागत में स्थान स्थान पर खडी दिखी उनमें अधिकांश उनकी देवरानियां थी। पतिगृह के द्वार पर जिन हाथों ने मूसल से चौखट नापनें, आरती करने और नई बहु को गोद मे उठाकर घर की देहरी पार करवाने के पुरातन संस्कार सम्पूर्ण किए, वे भी उनकी सास के नहीं वरन् रामस्वरूप जी की पत्नी और उनकी देवरानी मूली देवी के ही थे। एक अबोध बालक के जैसी हंसी थी उनकी। जिस प्रेम से उन्होंने जसकौर जी को बड़ा होने का यथोचित सम्मान देते हुऐ पांव छुऐ और "जीजी" कहकर गले लगीं, उसी निश्छल भावना के वशिभूत हो दो ऐसी स्त्रियों के बीच एक अदृश्य स्नेह डोर बंध गई जिनके मध्य विचार, व्यवहार, दृष्टिकोण व परिस्थिति से लोहा ले सकने के ढंग सभी कुछ में इतना बृहद अन्तर था कि जिसकी कल्पना आज के परिप्रेक्ष्य में अचंभित कर देती है। किन्तु मात्र निस्वार्थ, निष्कपट स्नेह ही वह सेतु है जो दो अपरिचितों के मध्य भी बडी से बडी दूरी को पाट देता है। उस प्रथम मिलन से लेकर मूली देवी के असामयिक स्वर्गवास तक वे वही प्रेम व आदर, अखण्ड श्रद्धा के साथ अपनी जेठानी को देती रहीं और जसकौर जी ने यथा-संभव पग-पग पर ना केवल उनके अधिकारों की रक्षा की वरन् उनके जीवन की कठिनाईयों का मोर्चा भी स्वयं संभालकर अपने बडे होने का धर्म निभाया। दोनों का यह सामंजस्य परिवार के विकास, उन्नति एवं जड़ों से गहरी पकड़ के बीच संतुलन बिठाने का आधार बना।

www.rachanameena.com

मूली देवी के साथ

स्वयं के शिक्षित होने का अर्थ जसकौर जी के लिये कभी भी यह नही रहा कि अशिक्षित ग्रामीण नारी को किसी रूप में कमतर आंका जाए। वे चाहे उनकी निकटतम सम्बंधी हो या ना हो, उन्होंने कभी उनके अनपढ़ रह जाने को इतनी बडी बाधा नहीं माना कि उसकी ओट में कहीं भी वे अपना अस्तित्व ही खो बैठे। उनके चूल्हे के धुंऐ की गन्ध भरे वस्त्र, फटे-खुरदरे हाथ जिनकी दरारों में बर्तन की कालिख राख में मिलकर महीन रेखाओं में जमा होती है, पसीना जिनके शरीरों पर कार्य की अधिकता से बार-बार आकर सूख जाता है, ऐसे व्यक्तित्वों से उन्होंने मुंह मोडा हो और उनकी संवेदनशील सोच को वे ना अनुभव कर पाई हों, याद नहीं पड़ता। उन्हें मात्र इतना अन्तर दृष्टिगोचर होता था कि निरक्षर होने के कारण उनकी संवेदनशीलता व विचार शक्ति को समाज में स्थान नहीं मिलता, और यही अन्तर जसकौर जी के लिये कष्ट दायक था।

सामान्य दृष्टि से देखने पर ग्रामीण सभी महिलाएं एक से पहनावे एक से कार्यकलाप एक सी सोच समझ व एक से जीवन को जीती हुई दिखाई देती हैं। उनमें कोई विशेष गुण भी हो सकता है यह विचार एकाएक मस्तिष्क मे नहीं आता। किन्तु जसकौर जी की दृष्टि हृदय से होकर ही मस्तिष्क के मोल भाव तक पहुँचती थी, उनकी आस पास देखकर तोलते आंकते रहने की गहन दृष्टि एवं जिज्ञासा के कारण वे सभी की अन्तर्रात्मा के सद्गुण भांप लेती थी। चार अवगुणों पर उन्होंने सदा एक गुण को इतना भारी पाया कि मैंने उन्हें अपना समय कभी किसी के अवगुणों की चर्चा में व्यर्थ करते नहीं देखा, किन्तु वे सद्गुण जिन्हें हर कोई अनदेखा कर जाता है, उस पर वे सम्बन्धित व्यक्ति को जब मिलती, प्रशंसा से लाद देतीं। उसे अनुभव हो जाता कि किसी को उसकी व उसके योगदान की आवश्यकता है, और यही एक गुण था कि शफीपुरा की उन अपढ़ गंवार कहकर पुकारी जाने वाली महिलाओं में से उन्होंने शीघ्र ही खोज लिया कि अमुक रसोई के कार्य में बडी सुगढ़ है तो अमुक के बनाऐ सुन्दर मांडणे मन मोह लेते हैं या उसकी व्यवहार कुशलता सीखने लायक है, और उसके गीत क्या हैं, बस जब गाती है तो अन्तर्मन में हिलोरें उठने लगती हैं। वह मन की सुन्दर है, तो वह बडी लावण्यमयी है। उनका यही स्वभाव था कि वे सभी, आज उम्र की संध्या में भी अपनी इस भाभी के स्नेह व सभी के प्रति समान व्यवहार के कारण उसके साथ अपने प्रेम की डोर बाँधे हुए हैं।

एक व्यक्तित्व ऐसा था जिसकी सहृदयता व शान्तचित्त स्थिरता के समक्ष जसकौर जी आजीवन नतमस्तक रहीं वे थीं श्रीलाल जी की माता किशनबाई। किशनबाई ने यदि जीवन में कोई ज्ञान, कोई शिक्षा आत्मसात की थी तो वह थी सहजता व सरलता। संसार सागर में ऐसे अनेकानेक लोग होते हैं जो भाग्य की विडंबनाओ से जूझते हुऐ भी अपने सिद्धान्तों पर स्थिर रहते हैं। जीवन स्वयं के मापदण्डो पर जीने की शक्ति व स्वाभिमान रखते है। ऐसे ही स्थिर व्यक्तित्व की धनी थीं किशन बाई। पांच पुत्रों के भरे पूरे परिवार की माता होने के बाद भी उनमें अहम् का भाव या यह सब मेरा है, ऐसी भावना कभी नही आई। कोई उन्हें याद भी दिलाता तो सहजता से कहती '' ये तो सारी बस्ती का भाग्य है, इसमें मेरा कुछ नहीं।'' सभी के सुख दुख से सरोकार था उन्हें किन्तु स्वयं निर्लिप्त ही रहती थीं। अपने समय से कहीं आगे की उनकी सोच व मानसिकता थी। धीर गम्भीर शांत मुख मुद्रा, उन्नत ललाट, गौरवर्ण। अपने समय की रूपवती स्त्रियों में गांव के लोग उन्हे गिनते थे। चांदी के कडे पांव में थे, कुहनी से ऊपर बाजू और कलाइयों में भी वो पाव-पाव भर के चांदी के ठोस कडे ही पहनती थी। शरीर पर गुदे हुऐ गुदनों ने झुर्रियों

अपनी सास किशन बाई के साथ

की परतों में जगह बना रखी थी। काले बनात के डोरे में पिरोया हुआ एक जन्तर, जो कि ताबीज नुमा गहना होता है, उनका एक मात्र स्वर्णाभूषण था। चटख रंगों से बडा लगाव था, किन्तु तीस-बत्तीस वर्ष की आयु मे ही दुर्भाग्य ने उनके रंगो पर वैधव्य की काली छाया डाल दी। घनघोर विपदा का समय आया और चला गया। भाग्य में ठोकर खाना हो या उन्नति के सोपान चढ़ना उनके भीतर कभी कोई परिवर्तन नही आया। एक बार श्रीलाल जी और जसकौर जी को उन्होंने जिम्मेदारी उठा सकने लायक माना तो स्वयं सब कुछ सौंप मुक्त हो गई। फिर पुनः कभी किसी निर्णय में उन्होंने हस्तक्षेप नहीं किया। पूर्ण विश्वास था उन्हें अपनी संतान पर। पुत्रों की प्रशंसा से गौरवान्वित तो सभी माताऐं होती हैं, किन्तु फूली नहीं समाती थीं वे जब कोई उनकी पुत्रवधु की प्रशंसा करता था।

जसकौर जी उन्हें देवी स्वरूपा मानती हैं और इसका कारण स्पष्ठ है कि उनकी सास ने उन्हें वह अनुकूल वातावरण दिया जिसके कि अभाव में मनुष्य चाह रखकर भी कुछ नहीं कर पाता। जितना अधिक किशन बाई का हृदय उनके कार्यों के बारे में सुन कर गद्‌गद होता गया उतना ही उत्साह उनका कार्यों के प्रति बढता गया। जितनी उनकी बूढी आँखों की चमक बढ़ती उतना ही जसकौर जी की नित नवीन करने की भूख बढ़ती जाती। ना उन्होंने जसकौर जी को रीति के बंधनों में जकड़ा, ना रिवाजों की बेड़ियाँ पहनाई। राह में कभी रोडे नहीं डाले वरन् उन्हें बुहार कर जसकौर जी के पथ को सुगम बनाने वालों में वे अग्रणी बनीं। जिस दिन से जसकौर जी ब्याह कर घर में आईं, उसी दिन से मानों बड़प्पन का चोला उतार कर किशन बाई ने बचपन की सरलता व निश्छलता का निश्चिंत आवरण ओढ़ लिया। जीवन को पुनः जीना प्रारम्भ कर दिया। शांत, स्नेह सिक्त व गंभीर मुखमण्डल पर सहज हंसी कभी भी बिखर जाती थी। यदि कुछ उनके वश में नही था तो वह थी उनकी हंसी। शांत वातावरण में एकाएक यदि कौवों का झुण्ड काँव-काँव करने लगता तो भी वे खिलखिला कर हंस पड़ती थी। बस ऐसी ही थीं किशन बाई। समझने में तो बडी सरल थीं, किन्तु उनके जैसा होना बडा जटिल काम है। सास बहू में सामंजस्य के ऐसे उदाहरण बिरले ही देखने को मिलते हैं। जहां बहू मात्र प्राप्त करने की संकीर्णता व इच्छा से परे हो, ये ना सोचे की उसकी सास ने उसे विरासत में क्या दिया, वरन् जीवन की सांझ में उसे नव प्रभात का आलोक दिखाऐं। अपने हिस्से के ईंट, पत्थर, गहने, जेवर खंगालते रहने की मानसिकता से कुछ ऊपर उठ कर यह सोचे कि इस भौतिक लेन देन से परे भी लेने देने की बहुत संभावनाऐं हैं। दी जा सकती है, ऊर्जा, विस्तृत, विकसित, नई सोच, जीवन के ढ़लान पर पुनः जीवंत हो जाने के लिये उद्देश्य और लिया जा सकता है, अखण्ड विश्वास। बुजुर्ग के गौरवान्वित मुख मण्डल के तेज की आभा और एक पुत्रवधु के उठाए हुए सशक्त कदमों से गद्‌गद् हो उठे, हृदय से निकला आशीर्वाद। अन्तर मात्र इतना है कि यह लेन देन किसी को दिखाई नहीं देता इसमें देना व प्राप्त करना बस एक अनुभूति है। किशनबाई व उनकी इस बहू की झोली भी जीवन भर इसी अनुभूति से भरी रही। उन्हें, इन भावनाओं को शब्दों में ढ़ालने की आवश्यकता भी कभी नहीं पड़ी। सभी कहते है कि नारी ही नारी की सबसे बडी शत्रु है, किन्तु जब नारी संकीर्णता का अंकुश लगाने के स्थान पर स्वतंत्र मानसिकता का निष्कंटक मार्ग प्रदान करें, तो कोई अचंभा नहीं कि समाज में पुत्र पुत्रियों को ही नहीं पुत्र वधुओं को भी पुत्रवती भवः के स्थान पर यशस्विनी भवः का आशिर्वाद मिलने लगेगा और सास, किशनबाई की भांति पांच योग्य आज्ञाकारी पुत्रों की माता होने के पश्चात भी अपनी पुत्रवधु के नाम से पहचानी जाने में और अधिक गौरवान्वित अनुभव करेंगी।

विवाह के बाद शफीपुरा में बिताया यह समय नये पारिवारिक सम्बन्धों की नींव को पक्का करने में बीत गया। उनके आसपास का क्षेत्र सही अर्थों में अशिक्षा का त्रास झेल रहा था। पुरूष के शिक्षा प्राप्त कर लेने मात्र से समाज शिक्षित नहीं होता, वह तो स्त्री है जो शिक्षित होकर परंपराओं मे संशोधन करती है, और जीवन पद्धति को परिवर्तित करती है। उससे परिष्कृत होती है उसकी संतान, समाज और फिर देश। पुरूष यदि किसी कुरीति या रूढ़िवादी परंपरा को बदल डालने का मानस बना भी ले तो उसे सर्वप्रथम स्त्रियों की पूर्वाग्रहों से ग्रसित मानसिकता से लड़ना होगा। कारण स्पष्ठ है कि स्त्री ही परंपराओं, रीतियों, रूढ़ियों की सारसंभाल व पालन पोषण करती है बिना उसका तार्किक विश्लेषण किये। स्वयं पर व बुद्धि की क्षमता पर, अशिक्षा के कारण उसे विश्वास नहीं रहता और इसी कारण पुरातन परंपरा की पालना ना करने पर अनिष्ट की आशंका का उसे डर होता है। सामाजिक स्तर पर निन्दा झेलने व अपयश को पचा पाने की सामर्थ्य उसमें नहीं होती। रही बात पुरूष की तो वह तो मात्र इस स्थिती का आदी हो जाता है। बिना यह विचार किये कि वर्षों से चले आ रहे इन कार्यकलापों, पहनावों, रूढ़ियों, परिपाटियों की वर्तमान में आवश्यकता रह भी गई है या नहीं ? संस्कृति भिन्न होती है उसके साथ उपयोगिता जुडी होती है, सद्गुण जुडे होते है किन्तु कुरीतियां एक ही कार्य करती है, वह है समाज की उन्नति में काम आ सकने वाली अनमोल ऊर्जा को नकारात्मक रूप से व्यय करना।

ऐसा नहीं था कि यह स्थिति किसी एक गांव की महिलाओं की रही हो। यह प्रदेश के एक बहुत बडे भाग की वास्तविक परिस्थिति थी। ज्ञान विज्ञान से कोसों दूर, समाज का यह अति महत्वपूर्ण आधा अंश घोर परिश्रम, जटिल जीवन पद्धति और सुप्त पड़ी मानसिक शक्ति के एक नहीं वरन् अनेक मोर्चो पर जूझ रहा था। हृदय में कोई वेदना उठती भी तो अधिक से अधिक लोक गीतों के चुनिंदा शब्दों में ढल कर रह जाती जिन्हे समझने वाली भी उन्हीं के जैसी उनकी बहनें, भाभियां व माएँ थीं। सवेरे तीन बजे उठ, घर भर के खाने के लिये पर्याप्त रोटियां बनाने का आटा वे हाथ चक्की से पीस कर अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करतीं। कड़े शारीरिक श्रम का यह क्रम, घर आंगन, भोजन, मवेशियों के बाडों में गारा-गोबर, उपले समेटने के पश्चात कड़कती धूप में कोस चार कोस दूर स्थित खेतों खलिहानों में घंटो झुकी कमर, झुलसती चमड़ी लिए, चारे के गट्ठर बाँधने से होता हुआ पुनः संध्या में बगल में लटके बच्चो के साथ दूर पानी के स्त्रोतों से जल लाने, चूल्हे सुलगाने और अशक्त थके शरीर में दीवार की ओर मुंह कर, दो कौर डाल लेने पर समाप्त होता। कार्यभार से शरीर क्षीण हो जाते। स्वयं का पोषण तो उद्देश्य कभी रहा ही नहीं। लगता था इनका जन्म मात्र दूसरों के सुख के लिये हुआ है। अपनी मानसिक शक्तियों का उपयोग स्त्रियां इस कारण नहीं करती थीं कि पुरूष वर्ग या पुरूष प्रधान समाज स्वयं की सोच से ही निर्णय लेने का अभ्यस्त था। किसी प्रतिद्धंदी सोच की कल्पना कर सके, यह विकास उसकी मानसिकता का भी तब तक नहीं हुआ था। शारिरिक शक्ति का दोहन इसलिये होता था कि समस्त परिवार को अधिकाधिक सुविधा व सुख मिल सके। स्त्री के लिये पुरूष पिता, पति व पुत्र तीनो रूपों में सर्वोच्च सत्ता रहा है, और तब भी था। ग्रामीण स्त्री वर्ग यह मानता था कि वह पुरूष ही है, जो पढ़ा लिखा और ज्ञानवान है। वह पुरूष ही है, जो देश, दुनिया जो कि उसके इर्द गिर्द के सात गांवों से आगे भी कहीं बसती है, की जानकारी रखता है। वही है, जो पंचायत में बैठ कर उसके जीवन के व समाज के कार्यो के निर्णय करता है। वह पुरूष ही तो है, जो उसकी संतान के ब्याह व भविष्य के मार्ग तय करता है।

वह अन्न जो वह खाती है, उसी पुरूष का है। वह संतान जो वो अपनी कोख में रख कर पालती है व उसे जन्म देती है उसी पुरूष के नाम से इस समाज में स्थान पाती है, और क्यूं ना मानती स्त्री पुरूष को ईश्वर सदृश्य, जबकि वही था जो ज्ञानवान था, देश समाज का जानकार था। क्यूं ना व्यतीत करती जीवन अस्तित्व विहीन, जबकि अस्तित्व किसी और का था ही नही बस उसी पुरूष का था जो कि पिता था, पति था और पुत्र था।

पुरूष ने स्वयं की इच्छा से यह छवि बनाई या ऐसा गुरूत्व प्राप्त किया ऐसा नहीं है। स्त्री ने यदि स्वयं का प्रतिबिम्ब कभी देखने का प्रयास भी किया तो मात्र रूप रंग से स्वयं की छवि को तोला। उसने उससे परे, कभी वह सुप्त पडी शक्ति देखी ही नहीं जो उसे अस्तित्व प्रदान कर सकती थी। वह नारी जीवन, जिसका अपना एक अस्तित्व था अपने इस सीमित संसार की परिधि में उन्होंने सर्वप्रथम जसकौर जी में देखा। स्त्री होकर, उन्हीं के समाज की हो कर भी, वे उन सबसे भिन्न थीं। वे भी पुत्री थीं, पत्नी थीं, बहु थीं, किन्तु उन सभी से कितनी अलग। वह व्यक्तित्व जिसे गांव के पुरूष भी सम्मान देते थे। घूंघट की ओट में भी वह कितनी मुखर दिखती थीं।

गांव की स्त्रियों को स्नान का अवकाश प्रतिदिन नही मिलता था। सर के ऊपर कसे हुऐ धागों से लपेट कर मेडियां गुथी जाती थी। उसका प्रयोजन भी यह होता था कि पानी के भरे घडे उस पर भली भांति टिक जाते थें। यह केश विन्यास महीने में एक बार ही खुलता था। घुटने से थोडे ही नीचे घेरदार घाघरे और चांदी के भारी कडे जो पहनने वाली के पांव में स्थाई घाव कर देते थे, तत्कालीन मीणा जनजाति की स्त्रियों की वेशभूषा का अंग थे। वहीं किशनबाई की बडी बहु का रहनसहन उन्हें अत्यन्त साफ सुथरा और सलीकेदार लगता। साड़ी बांधने वाली वे पहली बहु थीं। वे समझ नहीं पाती थीं कि अन्तर कहाँ है। किन्तु जसकौर जी का हृदय बहुत विचलिच हो जाता। वे समझती थीं कि शिक्षा का नितांत अभाव इस पिछ़डेपन की जड़ है। इस शोषण, दमन का कारण है, और साथ ही जानती थीं कि शिक्षा किसी गढे खजाने की भांति तो है नहीं कि एक ने खोद निकाला और सबसे छिपा कर रख दिया। यह तो प्रकाश का वह दीप पुंज है जो कोने में रखा जाता है, पूरे आंगन में उजियारा करने के लिये।

जो स्त्रियां इस आलोक को स्वयं की आंखों से देख रही थीं वे ऊंगलियों पर गिनी जा सकती थीं, किन्तु उनका क्या जो जहाँ तहाँ बसी थीं, और जिन्हें अपनी सोचनीय स्थिती का भान भी ना था। उनकी संख्या को अंगुलियों पर नहीं गिना जा सकता। जब परिस्थिति में बदलाव का कोई सिरा नहीं सूझता तो व्यक्ति उस स्थिति का अभ्यस्त हो जाता है। ये ग्रामीण महिलाऐं भी ऊपर से हँसती, अठखेलियां करती, व्यस्त दिनचर्या में भी गीतों की स्वरलहरियां छेडती दिख जातीं, किन्तु जब भी जसकौर जी उनकी ऑखों में देखतीं तो उन्हें एक ऐसा भाव दृष्टिगोचर होता जो उनकी हंसी और मुस्कान से मेल नहीं खाता था। उनकी कातर, विकल, घूंघट के अधीन दृष्टि मानो जसकौर जी के व्यक्तित्व को माध्यम बना उसके परे खडी स्वयं की एक परिष्कृत परछाई देखना चाहती थीं। जैसे कि अबोध बालक की ऑखों मे याचना का भाव होता है, जब वो मेला देखना चाहता है, और जानता है कि पिता जब तक कंधे पर नही बैठाऐंगें वह झूले, घोडे, खेल, नाच, कुछ भी नहीं देख पाऐगा। उनकी यह दृष्टि एवं अपेक्षाऐं जसकौर जी को हृदय के भीतर तक भेद जाती। उनकी आत्मा की टीस और तीखी हो जाती। अभाव व कष्ट उन्होंने भी बचपन से देखे थे। श्रम उनके भी व्यक्तित्व का गहना था, किन्तु प्रत्येक कदम विकास की राह पर जमाते हुऐ वे आगे बढी। नारी जन्म उन्हें भी मिला किन्तु पिता ने कन्या के अस्तित्व का सम्मान करते हुऐ उसे अबला नहीं सबला बनाने की ठानी। नन्हें हाथ थाम शिक्षा की डगर पर चलना सिखाया, माटी से जोड़ कर रखते हुऐ भी आकाश में उड़ने के लिये पँखों को बंधन मुक्त किया। चिमनी की लौ उनके प्रारब्ध में भी थी, किन्तु उसी सीमित उजियारे के सम्बल से, स्वयं के भीतर छिपे आलोक को उन्होंने टटोल कर खोज निकाला। उन्हें बोध हुआ कि सम्भवतः

उनकी शिक्षा का तब तक कोई अर्थ नहीं जब तक की उसके फल का स्वाद उनके ये अपने, उनका यह समाज ना चख ले। शिक्षा का यह अलख जगाना होगा। सोये पड़े अपने समाज को झकझोर कर जगाने की आवश्यकता उन्हें हर पल अनुभव होती थी।

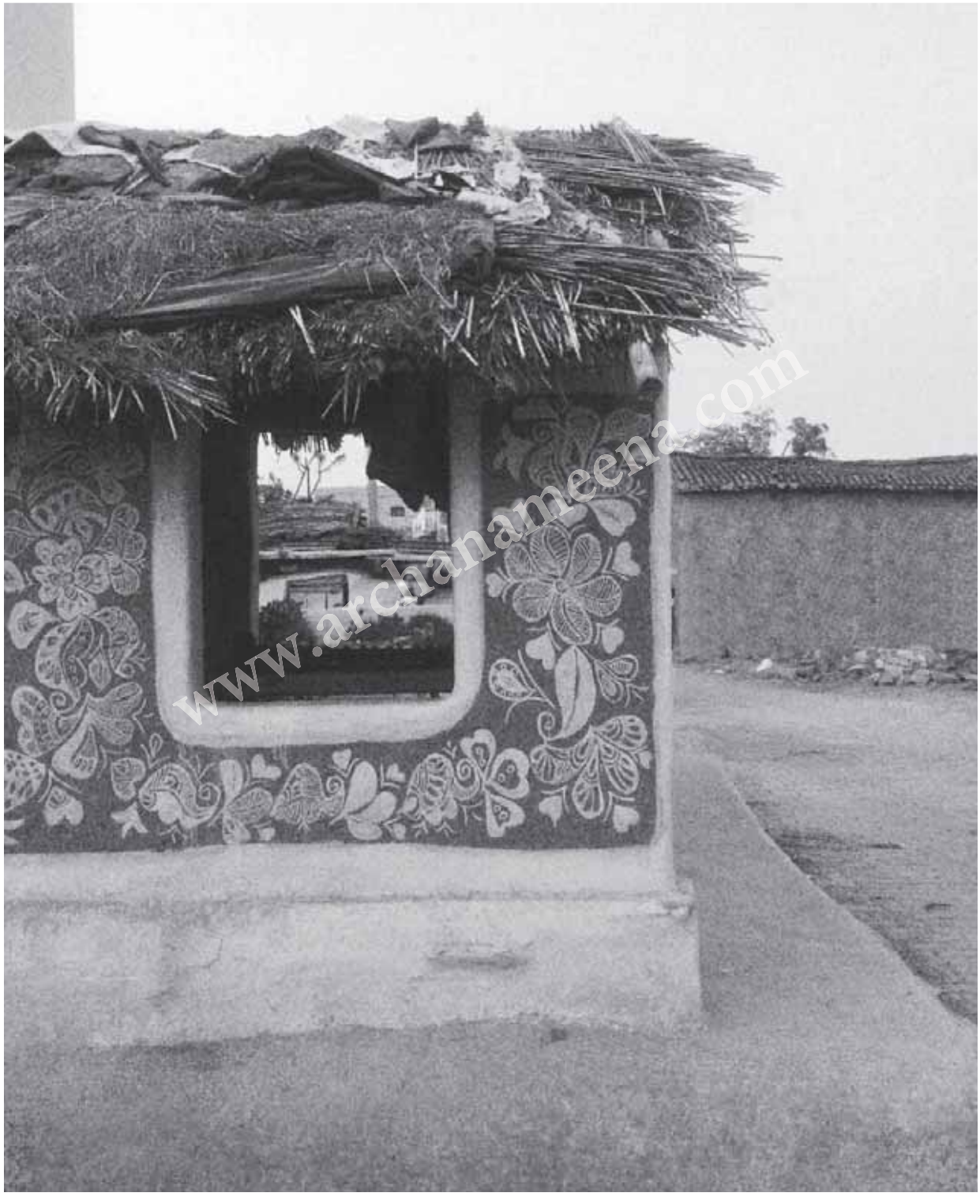
www.archanameena.com

करौली

www.archanameena.com

ठंडी राख के नीचे जैसे चिंगारी छिपी होती है उसी भांति अपने विकास में पिछडे समाज की जडों को मुख्य धरा पर रोपने की उत्कंठ अभिलाषा को ह्रदय मे दबाए जसकौर जी ने शफीपुरा से करौली की ओर प्रस्थान किया जहाँ उन्हें अपने प्रथम नीड़ का निर्माण करना था। श्रीलाल जी ने करौली में जीवन बीमा निगम में विकास अधिकारी के पद पर कार्यभार ग्रहण किया था। परिवार के जीवनयापन के लिये धनोपार्जन की जिम्मेदारी उन्हीं के कंधो पर जो थी।

तत्कालीन करौली जिला सवाई माधोपुर का एक भाग थी। वातावरण ऐसा कि इसकी हवा मे फैला सात्विक प्रेम सीमा में आए प्रत्येक व्यक्ति को अपने आलिंगन के मोह पाश में सदा-सदा के लिये बाँध लेता था। सुनते है कि भगवान भी भक्त व उसकी प्रेम भावना को बडा मानते है अतः कह नहीं सकते कि करौली के कण-कण में व्याप्त यह स्नेह, प्रेम व समर्पण का भाव उसमें बसने वाले श्री कृष्ण के मदनमोहन रूप के कारण है या उनके प्रेम व भक्ति में आकंठ डूबे उनके भक्तों के निर्मल चित्त के कारण।

करौली की आत्मा में अपनत्व है। प्रस्तर भी यहां जीवंत लगता है। पुराने मकान हवेलियां सब यहां बहुतायत से पाऐ जाने वाले विश्व प्रसिद्धलाल पत्थर के बने हैं। पुराने करौली के घरों के मुख्यद्वार से लेकर सड़कों तक यही लाल गुलाबी पत्थर अलग-अलग रूप में लगा हुआ दिखता है। वहाँ राजदरबार हो या किसी गरीब की कुटिया सब एक ही रंग में रंगी है। आमतौर पर सभी की एक जैसी बृज बोली, एक ही सा रहन-सहन, खान-पान व जीवन पद्धति थी। निमंत्रण से लेकर स्वागत का ढंग, खातिरदारी, मानमनुहार, नये से प्रीत बढाने, पुराने से जुड़कर रहने का संस्कार भी लगभग एक सा ही था। घर घर चमेली की बेल, हर घर पर कूदते फांदते बन्दरों के समूह सब कुछ सबके लिये था। इन्ही बंदरों से घर की वस्तुऐं बचाने के जतन और कुछ उठा ले जाने पर, अनेकानेक चेष्टाओं से उसे छुडाने के प्रयास सभी की दिनचर्या का भाग थे। इस समरसता का कारण था, करौली में एक ही तत्व की प्रधानता। एक ही छत्र जिसकी छाया में सब थे और वो थे करौली के ह्रदय स्वामी श्री मदनमोहन। प्रातः मंगला दर्शन से रात्रि शयन तक, दर्शनों को आने वाले आसपास के क्षेत्र के ग्रामीणों का तांता लगा रहता। राधे गोविन्द के उच्चारण से अभिवादन होता, अपनों का, परायों का, राहगीरों का अनजानों का। यही करौली की आत्मा का मूल तत्व था।

www.archanameera.com

इसी वातावरण ने जसकौर जी को प्रथम परिचय मे हीं मोह लिया। वजीरपुर दरवाजे के पास ही एक मकान किराऐ पर ले लिया गया। उसी लाल पत्थर की पट्टियों का घर था वह, जिसके कमरों के बाहर बरामदा और बरामदे से लगता खुला चौक था। छोटी छोटी खिडकियों पर लोहे के सरिये कतार में लगे थे। घर के द्वार से बाहर निकलते ही मुख्य सड़क की ओर एक पीपल का बडा पेड़ था और दूसरी ओर एक कुआँ और छोटा सा मन्दिर।

श्रीलाल जी का अधिकांश समय निकटवर्ती गाँव, कस्बों के दौरों में व्यतीत होता जो उन्हें जीवन बीमा निगम के विकास अधिकारी के रूप में करने पडते थे। उनकी व्यस्तता के चलते घर गृहस्थी एवं परिवार के सम्बन्ध मे सोचने विचारने और निर्णय लेने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी जसकौर जी के कंधो पर आ गई। करौली के अनुकूल वातावरण में उन्हे पल पल प्रतिकूल परिस्थितियों में भी शफीपुरा से बामनवास, पाँच कोस पैदल चल कर विद्यालय जाते अपने छोटे देवरों का स्मरण हो आता। उन्हें आभास था कि आगे की पढ़ाई के लिये उन्हें शफीपुरा की सीमा से बाहर निकलना आवश्यक है। सर्वांगीण विकास में पढ़ाई के साथ साथ वातावरण की महत्ता को नकारा नही जा सकता। पति के स्वप्नों को पूरा करने मे अपेक्षित सहयोग, प्रत्येक पत्नी का कर्तव्य होता है, किन्तु जसकौर जी ने इस कर्तव्य का बीड़ा सौगन्ध की भांति कंधो पर उठाया और अपने देवरों को करौली बुलवा

भेजा। उनका दाखिला स्थानीय विद्यालय में करवा, बाहरी वातावरण के साथ तालमेल बैठाने में उनका यथासंभव सहयोग किया।

मात्र दो माह में उन्हें यह आभास हो गया था कि एक व्यक्ति के कंधो पर यदि जीविकोपार्जन का भार रहा तो गृहस्थी की गाडी खींचना सरल नहीं होगा। हर संभव प्रयास करके और सोच समझ कर खर्च करने के उपरान्त भी कठिनाइयां थी। भोजन, वस्त्र, आदि की मूलभूत आवश्यकताओं के साथ साथ भाइयों की पढ़ाई लिखाई और भविष्य, सभी कुछ तो था, जो एक वेतन से संभव ना था। किन्तु इसका कोई हल निकट भविष्य में दिखाई ना देता था। उन्हे एक ही मार्ग सूझता कि वे इंटर से आगे की पढ़ाई पूरी करें और स्वयं नौकरी के लिये आवेदन करे ताकि अपने पति के कंधे से कंधा मिला कर पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन कर सकें, साथ ही स्वयं के उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये मार्ग सुनिश्चित कर सकें, जिनकी सीमा परिवार की परिधी से बाहर निकल कर अपने समाज व गांव तक पहुँचती हो।

मस्तिष्क में उठे विचारों के झंझावात को साकार रूप देना व वास्तविकता के धरातल पर उतारना एक चुनौती थी। अब अध्ययन एक मात्र कार्य तो था नहीं। सबके लिये भोजन, कपडे घर का रखरखाव उन्हीं की जिम्मेदारी थी। उनकी प्रत्येक कार्य को लगन व सुरूचिपूर्ण ढ़ँग से करने की आदत थी। कोई आगन्तुक उनकी रसोई से भोजन ग्रहण करके ना जाऐ यह संभव ना था। रूचिकर भोजन, स्वच्छ व सुन्दर वातावरण और प्रत्येक कार्य को पूर्ण करके ही छोडना उनके व्यक्तित्व का अभिन्न भाग था। स्वयं के अभिलक्षित मार्ग पर चलने के लिये समय के नियोजन की वे प्रारंभ से ही प्रबल पक्षधर रही हैं। अपने जीवन में पग पग पर उन्होंने पाया कि जो समय के अनुकूल होने की प्रतीक्षा में बैठे रहते है, समय फिर उनकी प्रतीक्षा नहीं करता।

इसी विचारधारा के साथ उन्होंने स्नातक की परीक्षा के लिये राजस्थान विश्वविद्यालय से आवेदन पत्र दाखिल कर दिया। कुछ सुस्ताए हुए क्षणों का समय जैसे क्षण भर का ही था, अब तो मुंह अंधेरे उठकर घर का प्रत्येक कार्य निपटाना और इस बीच भी समय चुरा कर पुस्तकों के पन्ने पलटते रहना दिनचर्या बन गई। दो छोटे देवरों की पढ़ाई व पाठ्यक्रम पर भी उनकी दृष्टि रहती थी। शफीपुरा, मण्डावरी क्षेत्र से करौली तक किसी ना किसी कार्य

www.archanameena.com

से ग्रामवासियों का संबंधियों का आना जाना लगा रहता था। उन सभी की समस्याओं के निवारण में श्रीलाल जी व जसकौर जी हरसंभव सहायता करते थे। जसकौर जी के जिम्मे उनका यथोचित सत्कार भी होता था। ग्रामीण जन अपने गांव गोत्र के किसी व्यक्ति के कहीं कस्बे, शहर में बसेरे को स्वयं का ही घर-आँगन मान अपने हुक्के-पानी व रहने खाने की व्यवस्था की सहज अपेक्षा रखते थे। इस सब में कम से कम उस समय तक तो व्यवस्था करने वाले प्रवासी की दृष्टि में भी परायापन नहीं होता था। उसी स्त्री को सुलक्षिणी व संस्कारवान माना जाता था जिसकी रसोई में अपने गांव देहात से आए व्यक्ति के भोजन की थाली भी सजती हो। इन उत्तरदायित्वों का निर्वहन दोनों पति पत्नी गांव के प्रति अपना कर्तव्य मान करते थे।

कठिनाइयों भरे दिन थे, किन्तु सवेरे से रात्रि और रात्रि से पुनः सवेरा होने का पता ना चलता था। दिन ऐसे थे, जिनमें कार्य की अधिकता के कारण सूर्य की छिटकी धूप को निहारना दिनचर्या का भाग हो ही नहीं सकता था। संध्या ढ़ले दिन भर की थकान के कारण यह स्मरण भी नहीं होता था कि आज तिथि कौनसी है। जाने अमावस्या है या पूर्णिमा की चांदनी रात। जसकौर जी के जीवन में इन सभी के लिये अवकाश न था। कार्य व पुस्तकें, पुस्तकें और कार्य इन सभी के बीच अब उनके कंधो के अतिरिक्त उनकी गोद में भी एक जिम्मेदारी आने को थी। उनकी प्रथम संतान। एक सुखद अनुभूति से साथ साथ दायित्वों के निर्वहन की चिंता भी उन्हें घेरती, किन्तु आत्मशक्ति की दामिनी के समक्ष विचारों की अन्धकार मयी निर्बलता अधिक देर टिक नहीं पाती थी। कभी थकान से नेत्र बंद होते तो लगता स्वयं की परछाई समक्ष खडी प्रश्न पूछ रही है कि क्या संघर्ष के प्रारम्भ में ही थक गई ? बंद नेत्रो से अपनी परछाई के पीछे उन्हें दिव्य रोशनी दिखाई देती पुनः एक मार्ग दिखता, आशा जागती, अन्तर्मन फिर बल व ऊर्जा से भर उठता। उन्हें लगता कि इस मार्ग के दूसरे छोर पर कोई निर्धारित लक्ष्य उनके लिये है अवश्य। जिस तक उन्हें चलते रहना है। बिना रूके, बिना थके।

3 नवम्बर 1968, प्रातः काल पुत्री रूप में उनकी प्रथम संतान ने जन्म लिया। नामकरण किया गया ''अर्चना'' और पुत्री जन्म के मात्र चार माह बाद उन्होंने स्नातक की परीक्षा दी व उत्तीर्ण हुईं। यह उपलब्धि इस दृष्टिकोण से भी उल्लेखनीय है, कि कला स्नातक होने वाली वे मीणा समाज की प्रथम महिला थीं।

जसकौर जी को अपनी उपलब्धियों पर गौरव अनुभव करने का बोध ना था। उन्हें तो मात्र अपनी पारिवारिक परिस्थितियों व आर्थिक तंगी का बोध था। अर्थ की समस्या से अकेले जूझते पति को देख उनका हृदय द्रवित हो उठता। किन्तु छोटे भाइयों को लगन से पढ़ता देख दोनों फूले नहीं समाते थे। अपने कष्ट व चिन्ताओं की बाढ़ भाइयों के भविष्य के प्रति आशवस्त होते ही थम सी जाती। दोनों ही स्नेहपूर्ण अनुशासन के पक्षधर थे। श्रीलाल जी के समक्ष छोटे भाई दृष्टि तक उठा कर बात नहीं करते थे। वही जसकौर जी के साथ वे अपने हृदय की हर बात सहजता से खोल लेते थे। उनके ये भाई साहब और भाभीजी उनके लिये माता-पिता, बन्धु-सखा सभी कुछ थे। वे जानते थे कि उनके भविष्य को संवारने के लिये वे दोनों अपने वर्तमान में अनेकानेक संघर्ष कर रहे हैं। उनके भविष्य से उन दोनों के स्वप्न व अपेक्षाऐं जुड़ी है, जिन्हें पूरा करने के लिये उन्हे प्रयास करने है बिना मार्ग से भटके हुऐ। अपने अध्ययन के साथ-साथ नन्ही अर्चना का ध्यान रख वे अपनी भाभी के कंधों पर पडे कार्यभार को हल्का करने का प्रयास करते।

आपसी सामजस्य किसी भी परिवार के विकास की प्रथम सीढी है। सौहार्द्र व एक दूसरे को विकास की ओर बढ़ते देखने की अभिलाषा, परिवार में प्रत्येक इकाई को नींव की मजबूती प्रदान करती है। बडों के उच्च जीवन मूल्य एवं छोटों के द्वारा बडों को प्रदत्त आदर व सम्मान देखने वाले की दृष्टि से होता हुआ हृदय में चिन्हित हो जाता है। पारस्परिक निस्वार्थ प्रेम व उससे उपजी उनकी दृढ़ता व एकता, बडी से बडी खाई लाँघ जाने के लिये सेतु का काम करते है।

जसकौर जी ने शिक्षा को ही अपना ध्येय व मार्ग दोनों माना था। अतः शिक्षण कार्यक्षेत्र ही उन्हें स्वयं के लिये सर्वाधिक उपर्युक्त जान पड़ा। स्नातक की डिग्री मिलते ही अब बिना अवकाश के उन्होंने शिक्षा स्नातक (बी.एड) का आवेदन भी भर दिया। उनके समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि बी. एड. की प्रशिक्षण कार्यशाला करौली ना हो कर हिन्डौन थी। अब परिवार का व स्वयं उनका जीवन अत्यन्त अव्यवस्थित हो गया। वे भरसक प्रयास करतीं की व्यवस्था बनी रहे। रात्रि के अन्तिम प्रहर जब सभी मीठी निद्रा में बेसुध सोते, वे उठकर सभी का भोजन तैयार करतीं। सूर्य की प्रथम किरण जब धरती पर पड़ती, तब तक वे सभी कार्यों से निवृत हो, अपनी एक डेढ़ वर्ष की पुत्री को पीछे छोड़, कार्यशाला के पन्ने पुस्तके झोले में डाल, हिन्डौन की बस पकड लेतीं। उन्हीं के साथ करौली से अन्य कुछ प्रशिक्षणार्थी भी थीं, जो हिन्डौन तक जाती थीं। जनजातीय पृष्ठभूमि से आने वाली, वे अकेली महिला थीं। जहाँ अन्य सभी की यात्रा हंसी ठिठोली व आपसी बातचीत की सहायता से कट जाती वहीं जसकौर जी के लिये यह दूरी काटे नहीं कटती थी। बस की खिड़की से बाहर उनके वैचारिक अन्तर्द्वन्द्व की भांति तेजी से भागते दिखते वृक्षों, खेतों को देखते दृष्टि पथरा सी जाती। गंतव्य तक पहुंचते पहुंचते मानस में अनेकानेक प्रश्न कौंधते। इन्हीं अनुत्तरित प्रश्नों के उत्तर खोजते टटोलते कभी अबोध पुत्री की प्रतीक्षारत दृष्टि मानस में उभरती और हृदय को व्यथा के भंवर में डुबो जाती। वे यंत्रवत बस से उतरतीं एक लम्बा पैदल रास्ता तयकर केन्द्र तक पहुंचती।

जो भी पाठ्क्रम था उसे पढ़ने व स्मरण में रखने का समय उनके लिये बस यही था। अतिरिक्त अध्ययन का समय मिलता नहीं था। अतः प्रशिक्षण के समय वे अपना ध्यान पूरी तरह केन्द्रित रखतीं। पुनः हिन्डौन से करौली की बस पकड़ वे घर लौटती और गृहकार्यो में जुट जातीं। वर्ष बीता और उन्होंने शिक्षा स्नातक पूर्ण करने वाली प्रथम जनजातीय महिला होने का गौरव हासिल किया।

यह प्रथम पद चिन्ह अति महत्वपूर्ण होता है। चूंकि वह जो अग्रणी होता है, अपने पीछे आने वाले अनुगामी पगों को राह के प्रति आश्वस्त करता है। उसी को सही या गलत मार्ग चुनने का उत्तरदायित्व वहन करना होता है। अतः

www.archanameena.com

अपने द्वारा चयनित मार्ग को सही प्रामाणित करने के लिये उसे प्रयासरत रहना पड़ता है, फल की प्रतीक्षा करनी होती है। जसकौर जी ने भी अध्यापिका के पद के लिये आवेदन किया व प्रतीक्षा प्रारंभ कर दी। 1971 का पूर्वार्द्ध अब उत्तरार्द्ध में प्रवेश कर रहा था। अंतत सितम्बर माह के प्रथम सप्ताह मे उन्हें राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय करौली में तृतीय श्रेणी अध्यापिका का नियुक्ति पत्र मिला एवं इसी सितम्बर माह की 22 तारीख को उनकी दूसरी संतान अर्थात मेरा जन्म हुआ।

हर बीते दिन पर पैर रख नये दिन का सूरज चढ़ता गया, अपनी गति से समय बीतता गया। अध्ययन, अध्यापन जसकौर जी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व में जैसे समाहित हो गया। विद्यालय का वातावरण उनमें नई चेतना, सकारात्मक ऊर्जा का संचार कर देता। उन्हें क्रमोन्नत करके द्वितीय श्रेणी अध्यापिका वर्ग में रख दिया गया था। घर गृहस्थी की गाडी को दो पहिये मिल गये थे। उसे खींचना व चलाना अब उतना दुष्कर कार्य नहीं रहा था। प्रातः समस्त कार्यों से निवृत हो कर वे विद्यालय पहुंचती तो परिसर में विद्यालय गणवेश में, गुंथी चोटियों में लाल रिबन लगाए, सरल-उजली मुस्कान लिये छोटी छोटी बालिकाएं घेर लेती। होड़ लगती की कौन पहले मीना बहन जी को अभिवादन करेगा। नन्हें हाथों को जोड़ ''दीदी नमस्ते'', ''बहन जी'' नमस्ते की रट लग जाती। उनकी बाल सुलभ चंचलता, सरलता एवं जिज्ञासा मानो जग का संताप हरने की क्षमता रखती थी। सरस्वती वंदना के पश्चात् अपनी अपनी कक्षाओं में सब चली जातीं।

जसकौर जी हिन्दी की अध्यापिका थी। जब पढ़ाती तो कक्षा के बाहर से निकलने वालों के पैर वहीं थम जाते और हृदय उन शब्दों की गहराई को आत्मसात कर लेता जो उनकी वाणी को माध्यम बना सुनने वालों के कानों तक पहुंचते। हिन्दी की कोई विधा हो, गद्य या पद्य, उनकी कक्षा में सभी कुछ समझना बहुत सरल होता। रहीम रसखान के दोहे हों, कबीरदास जी की जटिल व्यंग भरी वाणी या दिनकर, महादेवी की गूढ़ रचनाऐं वे कभी पुस्तक उठा कर नहीं पढ़ाती थीं। उन्हें अधिकाश पाठ कंठस्थ थे। पठन-पाठन व शैक्षणिक परिसर का यह वातावरण उनके लिये आलौकिक व तृप्तिदायक था। उनके मन व मस्तिष्क में चल रहे समस्त प्रश्न उत्तर बन कर यहां सन्मुख खडे मिलते। विद्यालय की सीढ़ियां कुछ ऊबड़-खाबड़ व अत्यंत संकरी थी, किन्तु उन्हें वे असीमित आकाश तक ले जाती जहां उनकी अर्न्तरात्मा को उडान के लिये दृढ़ इच्छाशक्ति के पंख मिल जाते। यहाँ आकर वे संसार से उसकी व्यर्थ चिन्ताओं से कोसों दूर हो जातीं। उन्हें पता था कि तृष्णा उन्हें यहां तक खींच लाई है तो तृप्ति उन्हें निःसंदेह बहुत दूर तक ले जाऐगी।

सहकर्मियों में सौहार्द्र और अपनेपन का वातावरण था प्रधानाध्यापिका थी श्रीमती सरोज तलवार। परिवार में जैसे बड़ी बहन होती है, उसी प्रकार सब उनका सम्मान करते थे। उन्हें सेवा निवृत हुऐ आज वर्षों बीत गये हैं, किन्तु जसकौर जी उनके प्रशासनिक गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा आज भी करती हैं। पृथ्वी पर मनुष्य जितने भी सम्बंध बनाता है उनमें से अधिकांश दिन-प्रतिदिन के संयोग की देन होते हैं। किन्तु कुछ सम्बंध ऐसे भी होते हैं जिनसे मिल कर आत्मा चिरपरिचय अनुभव करती है। आभास होता है जैसे यह व्यक्ति विशेष, जन्म जन्मान्तर से ही मेरा परिचित है, सखा है। जसकौर जी के जीवन में भी एक संयोग ऐसा ही हुआ और वह संयोग था उनका श्रीमती जामवती चतुर्वेदी जी से मिलना। विद्यालय जाना प्रारंभ करने से कुछ ही दिन पहले जसकौर जी ने एक स्वप्न देखा कि करौली में स्थित चौबे पाड़ा में वे किन्हीं हरिराम चतुर्वेदी का घर पूछ रही हैं। उनकी निद्रा भंग हो गई। हृदय में एक उथल-पुथल सी चलती रही कि कौन हैं जाने ये हरिराम चतुर्वेदी? चौबे पाडा कहाँ है? कैसा है? और कोई परिचित भी तो वहाँ नही रहता। परन्तु स्वप्न की बात समझ उन्होंने इस घटना को भुला दिया। इसके उपरान्त

श्रीमती जामवती चतुर्वेदी जी के साथ

उनका परिचय विद्यालय में जामवती जी से हुआ जो स्वयं भी उसी विद्यालय में हिन्दी की अध्यापिका थी। औपचारिकता वश जब जसकौर जी ने उनका पता पूछा तो पता चला कि वे चौबे पाड़ा में रहने वाले हरिराम चतुर्वेदी जी की पुत्री है। जसकौर जी अचंभित रह गई। सम्भवतः भगवान उन्हें किसी निश्चित कारण वश दिशा-निर्देश दे रहे थे। यह परिचय मित्रता में बदल गया और जसकौर जी को शीघ्र ही वह कारण समझ आ गया। जामवती जी के पति श्री मुरारी लाल चतुर्वेदी उसी विद्यालय में लिपिक के पद पर कार्यरत थे। जिस सदाचार, सद्व्यवहार, सद्भावना व सद्विचार की हम कल्पना कर सकते है, वह इन दोनों पति-पत्नी में साकार विद्यमान था। जसकौर जी के जीवन में एक सच्चे मित्र की जो कमी थी वह जामवती जी ने पूरी की।

www.archanameena.com

सुख व उल्लास के क्षणों की हंसी, मिल कर गाऐ प्रसन्नता के गीतों की मिठास जितना दो व्यक्तियों को जोडती है उससे कहीं अधिक व्यक्ति दुख व व्यथा से निकले आंसुओं के खारे जल से जुड़ता है। एक दूसरे को सम्मान देना सम्मान पाने का आधार भी होता है। इनकी मित्रता में ये तत्व प्रारम्भ से विद्यमान थे और आज भी है। संबंध कुछ ऐसे रहे कि जामवती जी का वह घर आंगन वहां की सफेदी से पुती दीवारें, रसोई की महक, चौक में चमेली की बेल लाल पत्थर की बैठने की पटिया और चांदनी रात में चमेली के झरते फूलों की सुगंध के बीच पटिया पर बैठ कर नानी का बच्चों को कहानी सुनाना। ठाकुर जी को प्रातः जगाना, रात्रि शयन कराना जितना जामवती जी के परिवार की स्मृतियों की धरोहर है उतना ही जसकौर जी के परिवार की स्मृतियों में भी उसका स्थान है। सहयोग व समर्पण का भाव इस सकारात्मक वातावरण का मूल मंत्र था। इस छोटे साधारण से घर आँगन में मन्दिर के प्रांगण सी अद्भुत शान्ति प्राप्त होती थी, और जसकौर जी को जब कभी किसी कष्ट ने घेरा उन्होंने अपने इन सुख दुख के साथियों को अपने इसी शान्तिदायक प्रभा मण्डल के साथ समक्ष खड़ा पाया।

इसी बीच जसकौर जी के घर पुत्र जन्म हुआ किन्तु बालक जन्म लेते ही चल बसा। माता पिता के लिये प्रसन्नता लेकर आने वाला क्षण उनकी ममता को छल कर निकल गया। होनी को बलवान समझ उन्होंने अपने हृदय पर पत्थर रख लिया।

रूकना, बैठना और सुस्ता लेना ये सभी शब्द जसकौर जी के शब्दकोष से बाहर ही रहे और ना ही जीवन ने कभी उन्हें इनके अर्थ समझने का अवकाश दिया। एक सहज गति से वे चलती रहीं, सहज वृद्धि की ओर, जैसे रोपे हुऐ पौधे का बढ़ना एकटक देखते रहने पर भी दृष्टिगोचर नहीं होता किन्तु उसकी गति पल भर के लिये भी थमती

नहीं। लम्बे अन्तराल के पश्चात दृष्टि पडें तो आभास होता है कि उसकी शाखाऐं अब छाँव देने लगी है, विस्तार ले चुकी है। श्रीलाल जी के छोटे तीनों भाई भी अब स्वयं के पैरों पर खडे थे। पारिवारिक उत्तरदायित्वों की कठिन डगर पर अनवरत चलते हुऐ अब एक पडाव आ गया था।

1977 में जसकौर जी ने द्वितीय श्रेणी अध्यापिका रहते हुऐ यूपीएससी की परीक्षा पास की। उनकी प्रथम नियुक्ति श्री गंगानगर जिले के भादरा नामक कस्बे में प्रधानाध्यापिका के रूप में हुई। श्रीलाल जी भी जनसंपर्क अधिकारी के रूप में पदोन्नत होकर जयपुर स्थानांतरित कर दिये गये थे। 1978 के पूर्वार्द्ध की बात है, स्नेहासिक्त वातावरण, प्रियजनों, मित्रों की पलकों में ठहरा विछोह का अश्रुजल और करौली की ममतामयी धरती की सुगन्ध को धरोहर की भांति अपनी स्मृतियों में स्थान दे श्रीलाल जी व जसकौर जी ने परिवार सहित भारी मन से जयपुर की ओर प्रस्थान किया।

www.archanameena.com

जयपुर

www.archanameena.com

जयपुर में जीवन बीमा निगम के आवासीय परिसर में स्थित सी-6 अब उनका नया घर था। वातावरण करौली से सर्वथा भिन्न। करौली जहाँ एक ही संस्कृति के लोगों का घर आँगन थी वही इस परिसर में भारत के भिन्न भिन्न प्रान्तों से आऐ परिवार रहते थे। सीखने सिखाने के नये क्षेत्र थे। भाषाई विविधता, रहन सहन के भांति भांति के रंग जीवन में आने और घुलने लगे।

माह सितम्बर तारीख 27, 1976 को जसकौर जी ने जयपुर में एक स्वस्थ, सुंदर पुत्र को जन्म दिया। परिवार में हर्ष व उल्लास छा गया। उन्हें लगा कि ईश्वर ने एक संतान को जन्मते ही छीनने की क्षतिपूर्ति कर दी है। उन्हें जीवन से अब कोई बडी अपेक्षा स्वयं के लिये नहीं बची थी। संतुष्ट रहना उन्हें स्वाभाविक रूप से आता था। ईश्वर के समक्ष उनके हाथ अब कुछ मांगने के लिये नहीं अपितु धन्यवाद के लिये जुडते थे। बालक का नाम प्रेम से ''अनुराग'' रखा गया। किन्तु उसी ईश्वर को ज्ञात है कि सुख के रूप में दुख और दुख के रूप में सुख के मायावी नियम उसने किस कारण रचे है। मनुष्य इस सुख दुख के जाल में असहाय कीट पतंगे की भांति बंध जाता है। जसकौर जी के जीवन में पुत्र प्राप्ति की यह बेला उनके जीवन की सबसे लम्बी कालरात्रि लेकर आई थी। वह संभवतः उनकी आत्मा पर भाग्य का सबसे कठिन प्रहार था जब पुत्र को पन्द्रह दिन का होते ही मस्तिष्क ज्वर हो गया। डॉक्टरों ने उन्हें सतर्क कर दिया कि अनुराग का चलना, फिरना, हंसना, बोलना व साधारण बालक सा जीवन व्यतीत कर पाना असंभव है। वह सामान्य आयु प्राप्त कर सकेगा इसमें संदेह था किन्तु जितनी भी आयु उसके भाग्य विधाता ने उसे दी थी उस अवधि तक उसका पालन पोषण माता-पिता के लियें एक कठिन चुनौती के समान होगा, यह निश्चित था।

दोनों माता-पिता आत्मा, शरीर, चेतन-अवचेतन मन, विचार-व्यवहार से अब एक असहाय पिता और विकल व्यथित माता के अतिरिक्त कुछ और नहीं रह गये थे। शरीर शक्तिहीन हो गये। भोजन की सुध-बुध भी ना रही। गर्मी की लू भरी दोपहरी में कोमल बालक को कपडे में लपेट आऐ दिन डॉक्टरों की पर्चियां हाथ में ले, लम्बी कतारों में वे अपनी बारी की प्रतीक्षा करते। सांझ ढ़ले देवताओं की चौखट पर झोली फैलाते।

माता-पिता कभी भी संतान की किसी समस्या को सुलझाने की अपनी सामर्थ्य से परे नहीं समझते। हार मानते नहीं, थकान अनुभव नहीं करते। वे अपने अंश को मृत्यु के मुँह में बिना प्रतिरोध करे जाने कैसे दे सकते है। यथा शक्ति प्रयासरत रहते हैं। यम के पांवो की बेडियां बन जाना चाहते हैं। चूंकि आँखों के आगे संतान की मृत्यु, कहीं ना कहीं स्वयं उनकी अंशमृत्यु होती है। अपने मानस में वह मृत अवस्था वे जीवन भर ढोते है। संभवत इसी स्थिति से स्वयं को बचाने का प्रयास जसकौर जी व श्रीलाल जी कर रहे थे। कोई डॉक्टर ढाढस देता तो शान्त हो जाते, कोई कहता कि अनुराग चलने फिरने से लाचार तो है ही साथ ही दृष्टिहीन भी है। मां का हृदय यह सब जानते हुए भी मानता नहीं था। रात्रि में जब सब सो जाते तो वे अपने पुत्र को गोद मे ले ममता भरी दृष्टि से उसके हाथ पांव जाँचती। काले घुंघराले बाल, बडी बडी चमकीली काली आंखे गोल-मटोल गुलाबी गाल, सुन्दर सुडौल हाथ पांव और गौर वर्ण। मेरा पुत्र कहाँ से अस्वस्थ लगता है ? सब मिथ्या ही तो नहीं ? सम्भवतः कोई चमत्कार हो जाए और अचानक एक दिन वह एक साधारण स्वस्थ बालक सा जीवन व्यतीत करने लगे। उसे लिटाकर वे उसके पीछे से निकलतीं। अनुराग कभी कभी दृष्टि घुमा कर उन पर टिकाता तो उन्हें संतुष्टि होती कि वह दृष्टिहीन नहीं है। ना जाने क्यों, उसकी अस्वस्थ अवस्था के आभास की असमर्थता से कही अधिक कष्ट मां के हृदय को तब पहुँचा जब उसकी देखने की क्षमता पर भी प्रश्न चिन्ह लग गया। वे चाहती थी कि भविष्य चाहे जो भी हो किन्तु जब तक जीवन है, उनका पुत्र उन्हें देख सके।

www.archanameena.com

रात्रि के प्रहर पर प्रहर बीत जाते। अनुराग घंटों रोता रहता। दिन भर उसे हाथों में उठा, एक दर से दूसरे दर भटकती फिरने वाली उसकी मां, पूरी रात उसे कभी गोद, कभी कंधे पर चिपका थपकाती रहती। जब वह सोता तो झपकी लग जाती ओर कुछ ही क्षणों बाद उसके रोने से पुनः आंख खुल जाती। उसके रोने की ध्वनि कानों को सुनाई देती किन्तु उसकी मां के आंखों से बहती निशब्द अश्रुधार परिवार के सारे सुखों को अपने साथ लेकर बहती।

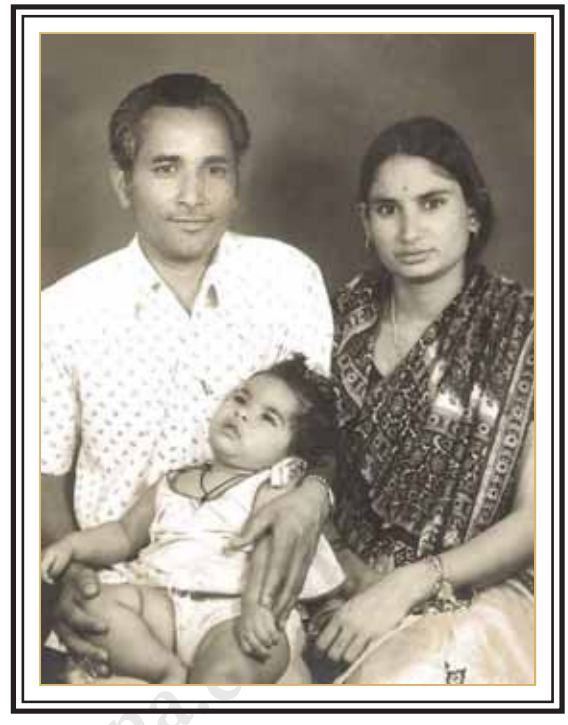

अनुराग

लगता था एक बहुत बडा शून्य है। जिसके मध्य में काला अंधियारा भंवर है। सोच-विचार की शक्ति, स्वप्न देखने की अभिलाषा, जो कुछ भी भाग्य ने दिया वह सब, जो कुछ स्वयं जुटाया वह सब, आत्मबल की वह दामिनी जिसमें सब, स्पष्ठ दिखता था, संकल्पों की वह गर्जना जिससे उत्साह का संचार कर हृदय निराशाजनक भावनाओं को खदेड़ देता था सब कुछ संपूर्ण जीवन जैसे उस भंवर में डूबता चला जा रहा था। कोई आशा शेष ना बची थी। जसकौर जी के हाथ में अब कुछ नहीं था।

जीवन में मात्र एक ऐसी प्रतीक्षा का अस्तित्व रह गया था, जिससे अधिक भयावह एक मां के लिये कोई और समय नहीं हो सकता। जीवन परीक्षा लिये चला जा रहा था। प्रधानाध्यापिका पद का नियुक्ति पत्र जसकौर जी के हाथ में था। श्रीगंगानगर जिले में भादरा एक छोटी सी जगह थी जहां अनुराग को रखकर उसकी देखभाल करना संभव नहीं था। कार्यभार ग्रहण करना अतिआवश्यक था। पाई-पाई जोड कर जो कुछ अब तक जमा किया था, वह पानी की तरह बह चुका था। डॉक्टरों और दवाइयों के खर्चे दिन-प्रतिदिन की बात थे। हर दिन कोई ना कोई नई जाँच का पर्चा माता पिता के हाथ में थमा दिया जाता। बिना वेतन के रह पाना भी अब असंभव था।

अनुराग को जयपुर छोड कर, भादरा जाने की कल्पना करके भी उनकी आत्मा विचलित हो जाती थी किन्तु उन्होंने उसे श्रीलाल जी की माता जी और अपने देवर देवरानी की गोद में सौंप जाने का निर्णय लिया। बात कुछ दिनों की ही थी किन्तु वह क्षण उनके मानस में आज भी उभरता है, तो तीव्र वेदना लेकर उभरता है।

भादरा एक छोटी सी जगह थी किन्तु वहां के निवासी बडे भले, संस्कारी व स्नेही लोग थे। वहां पदभार ग्रहण कर, रहने की अस्थाई व्यवस्था कर जसकौर जी शीघ्र ही जयपुर लौट आई। नये कार्यभार ने मानों उनमें कुछ नये रक्त का संचार कर दिया। उन्होंने अगली बार अनुराग को भादरा अपने साथ ले जाने का निश्चय किया। पुत्र के साथ वे एक ही बार वहां जा पाई और शीघ्र ही उसके इलाज की जटिलता को देखते हुऐ, प्रशासन ने जसकौर जी की अर्जी पर विचार कर, उनका स्थानांतरण पुनः करौली राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय में कर दिया।

www.archanameena.com

करौली

यह सन् 1980 का अप्रेल माह था। जिस विद्यालय से उन्होंने अपने शिक्षण कार्य को प्रारंभ किया था, उसी विद्यालय में प्रधानाध्यापिका बन कर आना उनके लिये एक सकारात्मक अनुभव था। साथ ही करौली स्थानांतरण घर लौटने जैसा था। बच्चों के साथ वहाँ आकर वे अधिक सहज व सुरक्षित अनुभव कर रही थीं। अनुराग अब दिन प्रतिदिन दुर्बल होता जा रहा था। उसकी अव्यक्त पीड़ा को, उसकी मां भली भांति समझती थी। इसी कारण उनकी दृष्टि सदैव उसकी टोह लेती रहती। विद्यालय का कामकाज भी अब अधिक समय मांगता था, किन्तु यह काम ही था जो उन्हें इन अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवंत रखता था। प्रातः वे सबसे पहले समय पर विद्यालय पहुंचती और प्रत्येक चीज का निरीक्षण करती। उन्हें देखकर कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता था, कि वे रात्रि भर सोई भी नहीं हैं। स्वयं में ऊर्जा उत्पन्न कर, वे दूसरों को भी ऊर्जावान रखती थी। कार्यक्षेत्र में घरेलू परिस्थितियां घसीटना उनके सिद्धान्तों में नहीं था, चाहे वे परिस्थितियां कितनी ही विकट क्यों ना रही हों। जिस किसी ने अनुराग की अवस्था को देखा, वह जसकौर जी के उस परिस्थिती में भी कर्मठता से कार्य में जुटे रहने की क्षमता पर अचंभित रह जाता था।

www.archanameena.com

करौली आए कुछ माह ही बीते थे कि अनुराग का स्वास्थ्य बिगडने लगा। उसकी दुर्बल जीवन रेखा अब धुंधलाने लगी थी। सभी दवाऐं बिना उसकी स्थिति को प्रभावित करे, व्यर्थ सिद्ध हो रही थी। प्रतिदिन जब सूरज डूबता है, तो अगले दिन पुनः एक नवप्रभात की आशा बंधी रहती है, किन्तु एक दिन जब सूरज उगा तो एक माँ के हृदय के कोने में सदा के लिये अंधियारा करके डूबा। माता-पिता की गोद से उनका अनुराग छिन गया। माता की अन्तर्रात्मा में उठती हिलोरें कानों मे पड़ने वाले सांत्वना के शब्दों को अपने में समाहित नहीं होने देतीं, पुनः वेग से उठकर मानस के किनारे से, कहीं दूर धकेल आती है। वह तो हृदय को तभी समझा पाती है, जब अन्तस के दुख की ज्वाला में धीरे-धीरे यह सागर सूख जाता है। आयु बीत जाती है, किन्तु ना ही मन का अंधियारा दूर होता है, ना ही पीड़ा की अग्नि बुझ पाती है।

अनुराग की मृत्यु उनके जीवन में एक अर्द्धविराम की भांति थी। जब भी उनका जीवन वाक्य पढेंगे तो वहाँ, पल भर का ठहराव छिपा है, और उस ठहराव में छिपा है विचार एवं चिन्तन। यह एक ऐसा चिन्तन था, जिसने उन्हें अर्द्धविराम से इस जीवन वाक्य की पूर्णता की ओर अग्रसर किया। जिस प्रकार बरसात की बूंदे पृथ्वी पर नवजीवन लाती हैं, उसी प्रकार दुख के झरते अश्रुकण, नवविचार, नव चेतना के अंकुर पैदा करते हैं। व्यक्ति वह देख लेता है जो पहले उसने नहीं देखा, वह सोच पाता है जो पहले उसने नहीं सोचा। जिसे हम पीडा का नाम देते हैं, प्रतिकूल समय समझते हैं, वही दुखाग्नि हमारे मन में खड़ी भ्रान्तियों की खरपतवार को जलाकर, हमें एक नई

उपज के लिये भूमि तैयार कर सौंपती है। मात्र बीज का चयन मानव की मानसिकता के अधीन है। वह बीज दुख की कालिमा से उपजी नकारात्मक सोच का हो सकता है या पुनरूत्थान का, पुननिर्माण का हो सकता है और यहाँ यह चुनाव जिसके समक्ष था, उन्होंने जीवन के किसी भी क्षण को नकारात्मक सोच के साथ कभी व्यतीत नहीं किया था। वे जानतीं थीं मृत्यु पड़ाव है, अन्त वह भी नहीं है। जीवन को इस प्रकार एक ही क्षण पर रोक देना तो ठीक नहीं। जब आँखों का जल सूख गया तो पुनः दामिनी कौंधी, जैसे याद दिलाना चाहती हो कि तुम्हें थकना नहीं है रूकना नहीं है। पुत्रियां, परिवार सभी को तुम्हारी प्रतीक्षा है। दृष्टि उठाओ ओर देखो कि पृथ्वी पर जन्म लेकर सभी कुछ ना कुछ खोते है, परन्तु पाता केवल वह है जिसके पास पुननिर्माण का आत्मबल होता है। अन्तर्रात्मा में उठते इन प्रश्न उत्तरों के मंथन के पश्चात् जब दृष्टि का धुंधलका दूर हुआ तो आभास हुआ, जैसे लम्बी अंधियारी रात्रि को समाप्त करने नवप्रभात की किरण आना चाहती है और वे स्वयं उसके मार्ग में खड़ी हैं अभी तक उसी अंधियारे की ओर मुंह करके। जब स्वयं को प्रकाश के मार्ग से हटाया, तो मद्धिम आलोक में सभी कुछ पुनः दृष्टिगोचर होने लगा और उन्होंने उस प्रभात से अपना जीवन पुनः जीना प्रारम्भ किया। अपने मार्ग पर पड़ी समय के ठहराव की धूल बुहार कर अपने कदमों में नई ऊर्जा का संचार कर वे चल पडी और इस बार कभी ना रूकने के लिये, कभी ना थकने के लिये।

पथ पर पग धरते ही लक्ष्य दृष्टिगोचर होने लगे। करौली विद्यालय का कार्यकाल उनके लिये किसी शिक्षण संस्था में आने वाली अनगिनत छोटी बडी समस्याओं को समझने, विचारने व सुलझाने के अनुभवों को एकत्रित करने का समय था। इस समय ने उन्हें मानसिक रूप से जीवन की हर परिस्थिति के लिये अब परिपक्व कर दिया था। वर्ष बीतते 1981 में ही उनका स्थानांतरण रा. बा.मा. विद्यालय लालसोट में प्रधानाध्यापिका के रूप में हो गया।

रा. बा.मा. विद्यालय, करौली
(प्रधानाध्यापिका के रूप में)

ज्यों निकल कर बादलों की गोद से
थी अभी एक बूँद कुछ आगे बढ़ी
सोचने फिर-फिर यही जी में लगी,
आह! क्यों घर छोड़कर मैं यों बढ़ी?

देव मेरे भाग्य में क्या है बदा,
मै बचूँगी या मिलूँगी धूल में?
या जलूँगी फिर अंगारे पर किसी,
चू पड़ूँगी या कमल के फूल में?

बह गयी उस काल एक ऐसी हवा
वह समुन्दर ओर आई अनमनी
एक सुन्दर सीप का मुँह था खुला
वह उसी में जा पड़ी मोती बनी।

लोग यों ही हैं झिझकते, सोचते
जबकि उनको छोड़ना पड़ता है घर
किन्तु घर का छोड़ना अक्सर उन्हें
बूँद लौं कुछ और ही देता है कर।

– ''हरिऔध''

www.archanameena.com

लालसोट

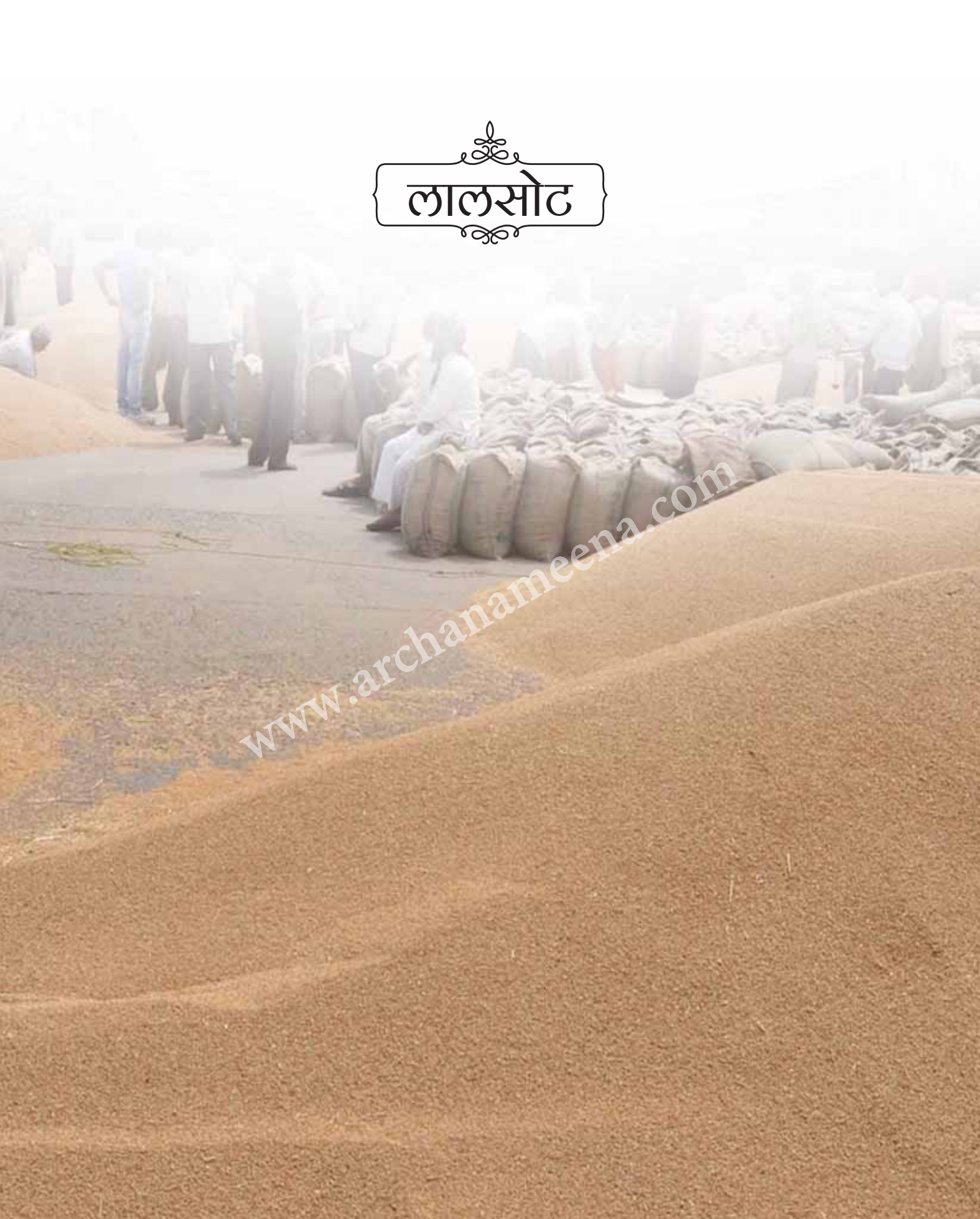

www.archanameena.com

तहसील लालसोट जिला-दौसा। चारों ओर छोटी बडी पहाडियों से घिरा एक कस्बा, जिसके आसपास का सम्पूर्ण क्षेत्र ग्रामीण है। यहां की अनाज मण्डी और बाजारों में, दिन भर किसानोंकी भीड रहती है। जहां देखो वहीं सर पर सफेद पग्गड और कंधों पर अंगोछा डाले ग्रामीण, ट्रेक्टरों ट्रॉलों मे भरे, आते जाते दिखाई पड़ते हैं। यह स्थान एक प्रकार से सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र के लिये व्यापार, शिक्षा और चेतना का केन्द्र बिन्दु है। ग्रामवासियों के बच्चे यहां के स्कूलो में शिक्षा ग्रहण करने दूर-दूर से आते है। गांव वालों की सरल रचनात्मक शक्ति एवं सघन जागरूकता की झलक भर देखनी हो, तो लालसोट के प्रसिद्ध "हेला ख्याल" दंगल में देखनी चाहिये। ख्याल गायकी की इस प्रतिस्पर्धा में दूर दराज की टोलियां ग्रामीण अंचल से भाग लेने यहाँ पहुँचती है। एक बहुत विशाल जमघट मे ये टोलियां, अपने गीत-छन्दों में राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक स्थितियों का चित्रण करके सबके समक्ष जिस रूप में रखती है, वह आम जन को गहन वैचारिक मंथन की ओर प्रेरित करता है। इसी से तय होती हैं नई दिशा, प्राप्त होती है जानकारियां, जो वे सभी अपने अपने साथ अपने गांवों तक ले जाते हैं।

लालसोट उनकी मनोरंजन स्थली है, उनकी जीवन व्यवस्था का एक अनवरत चलता पहिया है, और इस पहिये की धुरी है, यहां का व्यापारी वर्ग। ग्रामीण अपने कपडे-लत्ते, खाद-बीज, शादी-ब्याह हर आवश्यकता के संबंध में यहां के व्यापारियों पर निर्भर है। किन्तु यह निर्भरता बडी भावनात्मक है। ग्रामीणों व व्यापारियों का यह सामाजिक सामंजस्य, वर्षों के सौहार्द्र, भाईचारे एवं विश्वास की अदृश्य डोर से बंधा है। लालसोट को एक बडा गांव कहें या छोटा शहर, यह तो देखने वाले की दृष्टि के अधीन है, किन्तु जसकौर जी के लिये यह गांव व शहर की परिभाषा से परे उनका अपना घर था, उनका मायका।

वर्षों बाद पुनः निर्माण के लिये पुर्नजीवन पाने जैसा था यहां लौटना। सुनहरी बालू मिट्टी पर, सडक के दोनों ओर मूंगफली के खेतों की हरितिमा का आवरण चढ़ा था। इन छोटे छोटे पौधों पर उनके बचपन के क्षण पले बढे थे। लालसोट से मण्डावरी यही कुछ पन्द्रह-बीस मिनट की दूरी पर स्थित है। अपना गॉव, अपनी धरती और अपनी माटी की गंध ने, उनकी मानो सारी थकान और पीड़ा हर ली। संभवतः इसी कारण, लालसोट उनकी आत्मा में सहजता से स्थापित हो गया और वे लालसोट के हृदय में इस प्रकार समाहित हो गईं कि क्षेत्र की बेटी को अपनी बहन, अपनी पुत्री का स्थान यहाँ के जन-जन ने दिया। उनके लिये, बहन जी, जीजीबाई या बुआजी सम्बोधन प्रयुक्त होता था, चाहे मिलने वाला किसान हो या व्यापारी, स्त्रियाँ हो या बच्चे।

अतिशीघ्र ही उन्होंने अपनी कार्यशैली से लालसोट वासियों के हृदय में अपना यह स्थान सदा सदा के लिये सुरक्षित कर लिया। लोगों के स्वयं के प्रति विश्वास व उनकी बालिकाओं की शिक्षा व्यवस्थाओं को लेकर रखी गई अपेक्षाओं की पूर्ति की झलक विद्यालय परिसर व उसके वातावरण में दृष्टिगोचर होने लगी। उनके अनुशासन व मार्गदर्शन से मानो बालिका विद्यालय मे नई शक्ति का संचार हो गया। जिस विद्यालय में छात्राओं की उपस्थिति मे अनियमितता व अध्यापिकाओं के लम्बी छुटटी के आवेदन दिन प्रतिदिन की बात थे, वहीं अब कठोर अनुशासन के बाद भी बालिकाऐं व शिक्षकगण किसी आकर्षण एवं स्नेह की अदृश्य डोर से बंधे खिंचे चले आते थे। जसकौर जी ने विद्यालय के समीप एक ब्राह्मण परिवार के घर में दो कमरे किराए से लिये थे। शीघ्र ही उन्हें आभास हुआ कि अधिकांश अध्यापिकाएं जो इस ग्रामीण क्षेत्र से अधिक परिचित नहीं है, शहरी वातावरण ही जिनकी पृष्ठभूमि रहा है, या तो पदभार ग्रहण करने के स्थान पर स्थानांतरण के प्रयासों में अपनी ऊर्जा लगाती हैं अन्यथा यहां अध्यापन कार्य में उनकी वह रूचि नहीं होती जो कि होनी आवश्यक है। यह दोष उस क्षेत्र विशेष का नही होता कि वह शिक्षा या उन्नति के क्षेत्र में पिछडा है। जब देने वाला अपनी भरी झोली से मात्र मुट्ठी भर ही दे रहा

हो तब लेने वाला भी आदतन झोली के स्थान पर अंजुरी ही आगे करता है। अपनी सीमाओं को बढ़ाने का विचार उन्हें उपजता ही नहीं। ग्रहण करने वाले को तो यह ज्ञात भी नहीं होता कि वह इससे अधिक भी प्राप्त कर सकता है। यह निर्णय करने का प्रथम अधिकार तो देने वाले या बांटने वाले के अधीन है, कि वह क्या प्रदान कर सकता है, और क्या प्रदान कर रहा है। इस निर्णय में संवेदनशीलता व सर्वांगीण विकास में गहन रूचि का होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

इसी सोच को आगे बढ़ाने के लिये उन्होंने सभी अध्यापिकाओं को पलायन से रोकने की पहल करते हुऐ प्रेरित किया कि वे यहीं इसी वातावरण में रहे और विद्यालय के माध्यम से बालिकाओं की शिक्षा में अपना सम्पूर्ण योगदान दें। शिक्षण का जो कार्यक्षेत्र उन्होंने चुना है उसके प्रति निष्ठा रखें और साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों के हृदय को पहचानें। उन्होंने सभी के हृदय में इस विचार का बीज डाला कि इन सभी ग्रामवासियों के पास देने के लिये जितना कुछ है उसकी एक मुट्ठी भी यदि आप ले पाऐं तो आपकी झोली सदैव भरी रहेगी। कृपण हृदय सम्भवतः आपका हो सकता है किन्तु इन ग्रामवासियों का नहीं चूंकि अध्ययन अध्यापन के कार्य करने वालों को सर्वोच्च आसन व उचित सम्मान यदि कोई सरल भाव से देता है तो वे ये ग्रामीण क्षेत्रवासी ही हो सकते है। बालक-बालिकाओं के गुरूजन इनके लिये स्वयं के गुरूजन ही होते हैं। उनकी आवश्यकताओं, सुविधाओं का ध्यान रखने के लिये देहात में क्या गरीब, क्या अमीर, सभी यथा सम्भव प्रयत्नशील रहते है, और यह अनुभव करने के लिये, इन्हें पूर्ण रूप से समझने के लिये इनके साथ बसना व इन्हें समीप से समझना आवश्यक है। जसकौर जी के मार्गदर्शन से कुछ अध्यापिकाओं ने लालसोट में ही रहने का निश्चय किया। लालसोट शहरी वातावरण से ग्रामीणों को जोडने की कड़ी के सदृश्य है। व्यापार प्रधान होने से सभी जाति, धर्म के लोग यहाँ बसते है। ये सभी लोग जसकौर जी के विचारों से पूर्णतः सहमत तो थे ही साथ ही अन्तर्मन से चाहते थे कि उनके विचारों को मूर्त रूप देने में वे सब भी कुछ योगदान कर सकें। इसी भावना के वशीभूत आवास की समस्या को सुलझाने के लिये सामने आऐ लालसोट के अति सम्माननीय व्यक्ति श्री रामकरण जी जोशी।

रामकरण जी का बीडी निर्माण का कारोबार था। शर्मा बंधु बीडी निर्माता के रूप में उन्हें क्षेत्र का बच्चा बच्चा जानता था। लालसोट के घर घर के वे प्रिय थे। उनके मृदु स्वभाव का उनके दबंग सुदृढ़ व्यक्तित्व के साथ बडा प्रभावकारी तालमेल था। आयु व अनुभव में वे सभी से बडे थे अतः उनकी रखी बात को कोई नहीं टालता था। जितना बडा उनका कारोबार था उससे भी कहीं अधिक विशाल उनका हृदय था। समाज के लिये यथासंभव करने को वे सदैव तत्पर रहते थे। उनकी अनुभवी दृष्टि को जसकौर जी में इस क्षेत्र की बालिका शिक्षा के विकास का भविष्य दिखाई दे रहा था। उन्होंने कस्बे के मध्य बने अपने नये घर को जसकौर जी सहित उन सभी अध्यापिकाओं के लिये समर्पित कर दिया जो लालसोट में रहने की इच्छा शक्ति रखती थीं ताकि वे जसकौर जी के साथ रह कर संरक्षित अनुभव करे।

रामकरण जी जोशी ने जसकौर जी को जीवनपर्यन्त अपनी छोटी बहन का स्थान दिया। प्रत्येक रक्षाबंधन पर वे जब तक जीवित रहे जसकौर जी छह के स्थान पर सात भाइयों को राखी बांधती रहीं। उनके पश्चात् उनके परिवार ने इस संबंध को सदैव मन, वचन, एवं कर्म से सादर निभाया। इस नये आवास के सभी कक्षों में एक एक करके कई घर बसते गये। सभी अध्यापिकाएं एक परिवार की भांति रहती थी। अकेलापन या परिवार से दूरी किसी को नहीं सालती थी। साथ विद्यालय जाना व साथ ही आना सभी की दिनचर्या का एक भाग था। जसकौर जी सभी सहयोगी सहकर्मी अध्यापिकाओं को विद्यालय परिसर में अनुशासन की ना लाँघ सकने वाली लक्ष्मण रेखा

की परिधी के भीतर खड़ी दिखाई देतीं, वही घर पर वे स्नेही व मृदु स्वभाव वाली बडी बहन लगती। उनकी जीवनचर्या, रहन-सहन अन्यन्त सादा सरल व पारदर्शिता लिये था जिसमें स्वयं के लिये व सभी के लिये सहजता थी। जो नहीं दिखता था वह था इस साधारण जीवन शैली व दिनचर्या के पीछे असाधारण रूप से अनवरत चलती विचार प्रक्रिया। वे मानसिक रूप से पल भर भी ठहरती नही थीं। एक कार्य हो जाने पर उसके संबंध में मात्र बातें करते रहना उनका स्वाभाव नहीं था। उसका विश्लेषण कर समय व्यर्थ करने के स्थान पर वे किसी नये रचनात्मक विचार के सृजन में जुट जाती ताकि उसे कार्यरूप में परिणित कर सकें। कुछ व्यक्तित्व इतने विशाल होते है कि उनके लिये निश्चित परिधि में सीमित हो पाना असम्भव व कष्टप्रद होता है। वे सदैव स्वयं के लिये निर्धारित कार्यक्षेत्र की सीमाओं को विस्तार देते रहते हैं। जसकौर जी की शिक्षा एवं अनुभवों का सम्मिश्रण स्वामी विवेकानन्द के उस वाक्य को चरितार्थ करता है कि '' शिक्षा का अर्थ क्या पठन-पाठन है ? या नाना प्रकार का ज्ञानार्जन ? नहीं यह भी नहीं। जिस संयम के द्वारा इच्छाशक्ति का प्रवाह और विकास वश में लाया जाता है और वह फलदायक होता है, वह शिक्षा कहलाती है।'' इच्छाशक्ति संसार में सर्वाधिक बलवती है। विशुद्ध और दृढ़ इच्छाशक्ति सर्वशक्तिमान है।

बालिका विद्यालय लालसोट का परिसर यद्यपि बड़ा था किन्तु उसका भवन अपेक्षाकृत छोटा था। बहुत पुराने हवेलीनुमा इस भवन में मध्य का भाग खुला था और चारों और दो मंजिलों मे बने कमरों में अध्यापन कार्य होता था। कार्यालय में बैठ खिडकी से बाहर खुला मैदान दिखता। जसकौर जी सोचतीं कि कितना ही अच्छा होता यदि कुछ खुले और बडे कमरे बाहर बन सकते उनका मानना था कि प्रत्येक कार्य के लिये सरकारी सहायता की प्रतीक्षा करने के स्थान पर आमजन को भी अपने नैतिक दायित्वों के प्रति सचेत होना चाहिये। भारत एक विशाल देश है, और देश की विशालता को यदि उसकी शक्ति बनाना है तो उसकी संतानों को अपने अधिकार ही नहीं कर्तव्यों का भान भी रखना पड़ेगा। इसी विचार से उन्होंने निश्चय किया कि वे यहाँ के स्थानीय निवासीयों से इस संबंध में चर्चा कर अपने विचार व सुझाव उनके समझ रखेंगी। उनकी मान्यता थी कि यदि लोग ऐसे कार्यो में अपेक्षित सहयोग देंगे तब ही वे स्वयं को विद्यालय के कार्यकलापों व विकास से जोड़ कर रख पाऐंगे। शीघ्र ही उन्होंने रामकरण जी जोशी व अन्य गणमान्य लोगों से इस संबंध में चर्चा की व उनसे विद्यालय में नये कक्षों के निर्माण हेतु यथासम्भव दान एकत्रित करने की अपील की।

जसकौर जी की दृढ़ इच्छाशक्ति उनका व्यक्तित्व व भाषा शैली इतनी प्रभावशाली व निर्मल थी कि उनकी बात को सभी सुनते व समझते थे। विनम्रता में दृढ़ता का ऐसा समावेश था कि उनकी निःस्वार्थ भावना व निडरता का गुण समक्ष सुन रहे व्यक्ति में भी इन्ही भावनाओं का संचार कर जाता था। उनकी अपेक्षा से अधिक उनके विचार को समर्थन मिला। शीघ्र ही विद्यालय परिसर में दो बडे हवादार कमरों का निर्माण कार्य कब प्रारंभ होकर पूरा हो गया पता भी नहीं चला।

कुछ नूतन, नवीन करने से जिस उत्साह का संचार समाज में होता है वो मानो देश के शिथिल अंगो में रक्त के संचार के समान होता है। विद्यालय के कार्यक्रमों में भाग लेना, बालिका शिक्षा में आने वाली नित नई समस्याओं की जानकारी लेना व सुलझाने में भागीदारी करना अब लालसोट के जन प्रतिनिधियों व आम जन, सभी की दिनचर्या का एक भाग हो गया था। वह विद्यालय जो मात्र सरकारी माना जाता था अब साझा समझा जाने लगा। वार्षिक परिणामों में अब छात्राओं व अध्यापिकाओं की बढ़ती रूचि की सकारात्मक परिणामों के रूप में झलक दिखाई देने लगी। निकट क्षेत्रो की बालिकाओं की संख्या में आशातीत बढ़ोतरी हुई। प्रधानाध्यापिका के रूप में

जसकौर जी कभी अपने कक्ष में रखे मेज व कुर्सी से बंध कर नहीं रहीं। अधिकांश समय वे विद्यालय के अध्यापन कार्य का अवलोकन करती हुई मिलतीं। किस कक्षा में किस विषय में कौनसा अध्यापक क्या पढ़ा रहा है, उन्हें सब ज्ञात रहता। सभी से विषयों पर चर्चा करना एवं उसमें आ रहे व्यवधानों को दूर करना उनका प्रतिदिन का कार्य होता था।

सन् 1982, 27 जुलाई। सौहार्द्र व सामाजिक समन्वयता के इसी वातावरण में जब विद्यालय में शिक्षा की अलख जाग चुकी थी, जसकौर जी को पदोन्नति के साथ स्थानांतरण का सरकारी आदेश प्राप्त हुआ। पद था वरिष्ठ उप जिला शिक्षा अधिकारी और स्थान था सवाई माधोपुर जिला मुख्यालय। विद्यालय में छात्राओं व शिक्षकों के उत्साह के सूर्य को क्षण भर के लिये मानों निराशा के बादल ने ढ़क लिया। सभी से विछोह का दुख जसकौर जी के हृदय को भी उतना ही था किन्तु स्वयं की भावनाओं के वश वे एक स्थान से बंध जाने का विचार नहीं कर सकती थी। जन सहयोग का यह अनुभव उनके जीवन की एक शिक्षा व दिशा की भांति था। उनका लक्ष्य अब बालिका शिक्षा को एक जन आंदोलन का रूप देने का था जो कहीं बस जाने से प्राप्त नहीं किया जा सकता था। बिखर जाने से ही उस आंदोलन के बीज स्थान स्थान पर स्फुटित हो सकते थे। निहित स्वार्थ को त्याग कर स्पष्ठ एवं सकारात्मक विचारों के साथ यदि कदम बढाया जाए तो प्रत्येक व्यक्ति आपके पद-चिन्हों का अनुसरण करता है, यह बात लालसोट में जसकौर जी ने प्रत्यक्ष अनुभव की थी। यहां का जन-जन जिनमें वृद्ध एवं बच्चे स्त्री-पुरूष सभी थे वे सभी जिनकी वो पुत्री बहन, बुआ,शिक्षक, मार्गदर्शक थी, उनके समक्ष मार्ग रोके खडे थे। बहुत कठिनाई से वे सभी को समझा पाई कि उन्होंने एक दीपक और बाती उनके बीच जला छोडी है। उसकी लौ सदैव जलती रहे यह उत्तरदायित्व वे उन सभी के सशक्त कंधों पर छोड़ रहीं हैं। घर घर में बालिका शिक्षा की अलख जगे यह सभी का कर्तव्य है चूंकि बालिका की शिक्षा किसी भी देश के लिये रोपी गई वह शाख है जो स्वयं तो विशाल वृक्ष का रूप ले ही लेती है, साथ ही इसके बीज उड़ कर जहाँ पहुँचते हैं, वहीं स्वयं में जीवन का संचार कर एक नये वृक्ष को भी जन्म देते हैं। देश को समृद्ध व शक्तिशाली बनाने का यही बीज मंत्र है। उनके इस प्रयास का जो भी फल है, वह इन्हीं सब देशवासियों को अर्पित है। यही उनके जीवन का लक्ष्य है और वे सभी उनके लक्ष्य की पूर्ति के लिये उन्हें आशिर्वाद के साथ विदा करें।

लालसोट ने उन्हें भारी मन से विदा दी जैसे कोई पिता अपनी बेटी को शुभाशीष के साथ विदाई देता है, और जसकौर जी ने लालसोट के लिये अपने हृदय के सबसे समीप स्थान सुरक्षित कर 15 अगस्त 1982 को यहां से महादेवी की इन पंक्तियों को स्मरण करके सवाई माधोपुर के लिये प्रस्थान किया।

''हीरक सी वह याद बनेगा जीवन सोना,
जल-जल, तप-तप किन्तु,
खरा है इसको होना,
चल ज्वाला के देश,
जहां अंगारे ही है''

www.archanameena.com

सवाई माधोपुर

पुनः एक नया स्थान, धुंधलाते परिचित चेहरों के पीछे से उभरते नये अपरिचित चेहरे। अनजानी भावनाएं व अनदेखे दृष्टिकोण। रेत पर अंगुली से चित्र बनाने, पुनः मिटाने एवं पुनः बनाने जैसा जीवन था। रेत पर ही सही किन्तु बनाए हुए प्रत्येक दृश्य में नवरचना का उत्साह एवं संतुष्टि छिपी हुई थी। नित नवीन सृजन की तीव्र उत्कंठा, विचारों व प्रयासों को भिन्न-भिन्न माध्यमों एवं विभिन्न आयामों तक ले जाती है ओर उसका उद्‌गम स्थान होता है अनवरत वैचारिक प्रवाह।

इसी प्रवाह के प्रत्यक्ष प्रमाण की भांति थी सवाई माधोपुर व लालसोट के बीच पड़ने वाली दो नदियां। एक थी मोरेल व दूसरी बनास। वर्षा ;तु थी और पूरे मार्ग में बरसात थमने का नाम ही नहीं ले रही थी। मोरेल अपेक्षाकृत शांत सकुचाई सी बहती थी, किन्तु बनास को जैसे अपने वैभव एवं उपयोगिता का पूर्ण बोध था। वह बहुत बडे क्षेत्र की जीवन रेखा जो मानी जाती है। आज तो इसके वेग को पुल चुनौती देते है किन्तु तब इसका पार पाने का साहस इक्का दुक्का नाव चलाने वालों में था। नाव एक मात्र साधन थी। चाहे मवेशियो को पार पहुंचाना हो या वाहनों को । इसी कारण यात्रियों को नदी किनारे अपनी बारी आने की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। डगमग बहती नाब से एक नये स्थान पर जाने का रोमांच आज भी स्मरण में है। नदी के दूसरे किनारे पर दूसरी बस प्रतीक्षारत खडी रहती थी जो बची हुई यात्रा संपूर्ण करवाती थी। शाम ढ़ले सवाई माधोपुर की सीमा में प्रवेश किया तो अनुभव हुआ कि इस जिला मुख्यालय की बसावट को ना तो कस्बा कह सकते है ना ही शहर उस समय तो इसका विस्तार इतना भी नहीं था जितना कि आज है।

इसकी सीमा के निर्धारण में कोई एक क्षेत्र, एक विषय, एक विचार या एक आधार बिन्दु कार्य नहीं करता, अपितु यहां के वातावरण में अनेकानेक तत्वों का सम्मिश्रण है। सवाई माधोपुर शहर व सवाई माधोपुर स्टेशन नाम से यह शहर दो भागों में विभाजित है। शहर चारों ओर पहाडियों से घिरा है, कुछ इस प्रकार कि ऊँचाई पर खडे हो कर देखे तो लगता है जहां झील होनी चाहिये थी वहाँ की प्राकृतिक सुंदरता पर रीझ कर मनुष्यों ने बस्ती बसा ली है। आवागमन के लिये एक प्रमुख प्राचीन दरवाजा है जिससे होकर ही शहर में प्रवेश किया जाता है। सवाई माधोपुर का प्राचीन भैरव मन्दिर इसी दरवाजे के समीप पहाडी पर स्थित है। इन्हीं काल भैरव के नाम ने इसे भी सम्माननीय बना दिया और नाम पड़ गया '' भैरू दरवाजा।"

शहर की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं प्राकृतिक विरासत तक सुगमता से जन-जन को पहुंचाने के लिये जब रेल मार्ग से सवाई माधोपुर को जोडा गया तब रेलवे स्टेशन शहर से कुछ दूरी पर बनाया गया कालान्तर में इन्हीं रेल की पटरियों के इधर उधर बस्ती बसती चली गई। इसी को सवाई माधोपुर के वासी सामान्य बोलचाल में स्टेशन या यहाँ के खुले बाजारों के कारण, बजरिया कहते हैं।

इस खण्ड़ों में विभाजित शहर की अखण्ड गौरवमयी ऐतिहासिक धरोहर है, स्टेशन से कुछ मील की दूरी पर स्थित रणथम्भौर का दुर्ग व उसमें स्थित त्रिनेत्री गणेश। दुर्ग में लगा एक एक प्रस्तर खंड राव हम्मीर के हठ व स्वाभिमान की कथा कहता है। रणबांकुरों की ललकार और वीरांगनाओं के जौहर की धधकती लपटों की ओर बढ़ती पदचाप की ध्वनि इस दुर्ग की शान्त, निःशब्द बहती हवा में घुलकर कानों से नहीं रोम-रोम से आज भी अनुभव की जा सकती है। किले के परिसर और उसके चारों ओर असंख्य, अनगिनत स्थापित, पूजित शिवलिंग राव हम्मीर की वीरता और अनन्य शिव भक्ति के मेल का अति सुन्दर एवं अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

रमणीय, मनमोहक प्राकृतिक सौंदर्य चहुँ ओर बिखरा है। चारों ओर अरावली की क्रमबद्ध छोटी-बड़ी पर्वतमाला, सघन वन और जीव-जन्तुओं के स्वतंत्र विचरण के कारण आज सवाई माधोपुर एक संरक्षित बन क्षेत्र है, और प्रसिद्ध बाघ परियोजना के कारण विश्व मानचित्र में विशिष्ठ स्थान रखता है।

दुर्ग पर स्थित त्रिनेत्र गणेश मन्दिर तक आने जाने वाले दर्शनार्थियों की तितर बितर सी भीड़ जिस मार्ग पर जाती दिखाई दे, समझ लो वही रणथम्भौर रोड है। इसके विपरीत मार्ग पर रेलवे पुलिया से नीचे उतर जाऐं तो आ जाती है ऑफीसर्स कॉलोनी। बजरिया की बढ़ती बसावट के घेरे में यहां के दशकों पुराने सरकारी बंगले एक अलग ही वातावरण निर्मित करते हैं। सबसे विशाल और वृहद परिसर के साथ सवाई माधोपुर के अतीत के हर उतार-चढाव से परिचित प्रमुख बंगला है जिलाधीश निवास। इसके अतिरिक्त अन्य कई छोटे-बड़े बंगले व्यवस्थित रूप से सड़कों के दोनों ओर बसे हैं, जिनमें विभिन्न विभागों जैसे पुलिस, रसद, कर विभाग, चिकित्सा विभाग के वरिष्ठ अधिकारीयों एवं न्यायाधीशों के आवास की सम्मिलित व्यवस्था है।

सभी प्रमुख विभागों के कार्यालय कलेक्ट्रेट के निकट ही स्थित है। शिक्षा विभाग सवाई माधोपुर शहर में स्थित था, किन्तु शीघ्र ही वह इन्हीं कार्यालयों के साथ बजरिया क्षेत्र में स्थानांतरित हो गया और साथ ही जसकौर जी को भी निवास स्थान के लिये इसी ऑफीसर्स कॉलोनी का एक बंगला आवंटित कर दिया गया।

www.archanameena.com

सवाई माधोपुर ऑफीसर्स कॉलोनी स्थित प्रथम निवास

पूरे कार्यालय का ना केवल स्थानांतरण हुआ था, वरन स्थान परिवर्तन के साथ प्रारंभिक वर्ष में ही सम्पूर्ण कार्यप्रणाली व व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन हो रहा था। प्रत्येक कार्य की योजना बनाना, उसके क्रियान्वयन से पहले सम्बन्धित कर्मियों के साथ विचार-विमर्श कर फिर उसे मूर्त रूप देना, किसी कार्य को करने के लिये सम्पूर्ण उत्साह से साथ स्वयं बीडा उठाना और सभी में इस उद्धेश्य के प्रति आस्था की लौ जगादेना उनके व्यक्तित्व का प्रमुख गुण रहा है।

जसकौर जी की एक कही-अनकही प्रतिबद्धता रही है नारी जाति को प्रत्येक क्षेत्र के शीर्ष तक पहुंचाने की, किन्तु इसका अर्थ पुरूष वर्ग के प्रति विद्रोह का बिगुल बजाना है, ऐसा उन्होंने कभी नहीं माना। जितना स्त्री वर्ग ने उन्हें सम्मान दिया उससे एक पग आगे ही पुरूष वर्ग से सम्मान उन्हें मिला। पुरूषों से महिलाओं के हित उत्थान एवं सम्मान की नींव को सुदृढ़ बनाने के लिये सदैव सहयोग मांग उन्होंने सकारात्मक वातावरण की नींव रखी।

कार्यालय सहयोगियों के साथ

समाज की प्रगति के प्रति कर्तव्यनिष्ठा उन्हें प्रेरित करती थी कि यदि कोई भी आगे बढ़ने के लिये उनसे सहयोग की अपेक्षा रखे तो उसे जाति समाज और वर्गो की सीमाओं को लांघ कर सहयोग देना, उनका नैतिक कर्तव्य ही नहीं अपितु धर्म है। अपनी ओर बढे हुऐ हाथ को झटक देना उनका स्वभाव कभी नहीं रहा।

सवाई माधोपुर एक ऐसा जिला मुख्यालय था जहाँ प्रत्येक जाति वर्ग के लोग निवास करते थे। जसकौर जी के इन्हीं गुणों के कारण जनजाति वर्ग से होने पर भी स्मरण नहीं कि कभी किसी ने भी उनकी क्षमताओं को किसी सीमा में बांध कर परखा हो। वे यहाँ भी धीरे-धीरे अपने कार्य व्यवहार से समभाव से सभी के मानस पर अपने सर्वथा भिन्न व्यक्तित्व की छाप छोडती चली जा रहीं थी। उनके कार्यालय के कार्यक्षेत्र में सवाई माधोपुर जिला आता था। साथ ही आज का करौली जिला भी तत्कालीन सवाई माधोपुर का ही भाग था। जसकौर जी का अधिकांश समय दौरों में बीतता। सवाई माधोपुर जिले का एक बहुत बडा भाग ग्रामीण पृष्ठभूमि का था। छोटे-छोटे गांव ओर दूर-दूर बसी ढाणियां। प्राइमरी ओर मिडिल स्कूलों का जो स्वरूप सरकारी रजिस्टरों में था उतना स्पष्ठ वास्तविकता के धरातल पर उनका चित्र नहीं था। तहसील मुख्यालयों में विद्यालय थे भी और अपनी गति से चल भी रहे थे किन्तु सुदूर देहात मे जहाँ शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता थी वहाँ विद्यालयों का अभाव था। भूले-भटके कहीं शिक्षा के ये मन्दिर मिल भी जाते तो ना उनमें देव प्रतिमा मिलती और ना ही उसके पुजारी। अर्थात छात्राओं की संख्या ना के बराबर और अध्यापिकाएं लम्बें अवकाशों पर ही रहतीं। ग्रामीण अंचल का शैक्षणिक स्तर अत्यन्त दयनीय था। उसी के फलस्वरूप उनका वैचारिक स्तर, जीवन स्तर और सामाजिक स्तर इस नकारात्मक प्रभाव से अछूता ना था। इस स्थिति के लिये ग्रामीण, शिक्षक वर्ग पर और शिक्षक वर्ग ग्रामीणों पर परस्पर दोष मढ़ते रहते थे किन्तु आत्मचिंतन कर विकास के लिये दो पग स्वयं आगे बढ़ाने की इच्छाशक्ति किसी में नहीं थी। शिक्षा नामक अध्याय के पन्ने तो मानो किसी की जीवन पुस्तिका में थे ही नहीं।

ग्रामीण क्षेत्रों के दौरे पर

जसकौर जी की जीप जब पगडंडियों की धूल का गुबार ओढ़े सौ-पचास घरों के गांव-ढाणी में पहुचती तो बच्चों के शोर मचाते, कौतुहल से भरे झुंड घेर लेते। कुछ ग्रामीण व्यस्क भी आ जुटते किन्तु एक व्यक्ति भी शिक्षित ना मिलता। बालक-बालिकाओं को पढ़ाने के प्रश्न पर कुछ गरीबी का तो कुछ खेत-खलिहान से समय ना मिलने का रोना रोते तो कुछ का प्रश्न होता कि पढ-लिख कर करेंगे क्या? अभी जो लडकियां खेतीबाडी में मद्द करती है वे पढ़ कर तो उस कार्य के योग्य भी नहीं रहेगी। विकट समस्या थी उन्हें शिक्षा के गुण बताना, शिक्षा की आवश्यकता व उपयोगिता किसी व्यक्तित्व के पोषण संवर्धन की प्रथम खुराक की तरह है। भूखे शरीर के लिये जिस प्रकार भोजन का निवाला आवश्यक है वैसे ही सुप्त पडे मस्तिष्क के लिये ज्ञान का निवाला महत्वपूर्ण है। शिक्षा व्यवहारिक हो, जनउपयोगी हो, ज्ञानवर्धक हो तो किसी भी रूप में किसी भी माध्यम से वह ग्रहण करने योग्य है।

सरकारी तौर पर जहाँ जितना संभव हो पाता वे करतीं किन्तु सवाई माधोपुर अपने कार्यालय में लौटने के पश्चात मूल समस्या को भुला कर अन्य कार्यो में लग जाना उन्हें सुहाता न था। अपने नाम के आगे लिखे ''वरिष्ठ उप जिला शिक्षा अधिकारी'' का अर्थ उनके लिये बहुत भिन्न था। इस पद के साथ आने वाली समस्त जिम्मेदारियों पर भारी पड़ते थे दो शब्द '' (छात्रा संस्थाएं)''। शब्द कोष्ठक मे लिखे थे किन्तु इस कोष्ठक में मात्र दो शब्द नहीं वरन् जसकौर जी के जीवन उद्धेश्य का निचोड़ समाहित था मिट्टी में सर से पांव तक मटमैली हुई छोटी-छोटी घघरी- कुरती पहने, मां की पुरानी ओढ़नी से फाड कर बनाई एक मलिन फटी ओढनी ओढे 4-5 वर्ष की बालिकाएं जब गांव में घुसती उनकी जीप के पीछे दौड़ी आतीं और फिर जीप के रूकते ही उसे घेर कर खडी हो जातीं। वे जिनकी आंखों में सपने नहीं हैं, ना कुछ और सीखने की उत्सुकता। उन्हीं के इन कोमल मन को जिज्ञासु बना, उनकी आंखो में नये सपने भरना इनका लक्ष्य था उन्हें शिक्षा के माध्यम से ज्ञान का संसार दिखाना होगा। जीवन के विभिन्न आयामों से परिचित कराने के लिये उन्हें सामान्य जीवन से छात्र जीवन में प्रवेश कराना होगा तभी कोष्ठक में लिखे यह शब्द '' (छात्रा संस्थाएं)'' व स्वयं उनका उद्धेश्य सार्थक रूप ले सकेगा।

जसकौर जी ने सरकारी पद को प्रतिमाह वेतन पाने का माध्यम मात्र कभी नहीं समझा। उनकी दृष्टि में यह महत्वपूर्ण था कि पूरे माह में स्वयं उनका योगदान क्या रहा। इसी कारण आलसी व अकर्मण्य लोग इनके निकट टिक नहीं पाते थे और इसके विपरीत जुझारू कार्यकर्ताओं में वे सदैव घिरी रहती थी। वे अपने कार्यालय मे सहकर्मियों का आदर्श थी। उनका अनुभव था कि सकारात्मक परिणामों के लिये कार्य करने का वातावरण सकारात्मक होना आवश्यक है। वे अपने कार्यालय व कार्य की एक नई पहचान चाहती थी। प्रयास करके उन्होंने ना केवल कार्यालय के लिये एक भूमि आवंटित करवाई वरन् एक परिसर का निर्माण भी करवाया। यह पहला शिक्षा विभाग का कार्यालय था जो जिला मुख्यालय पर स्वयं के भवन में स्थापित हुआ। कार्य करने के समुचित स्थान के साथ समस्त रिकॉर्ड एवं जरूरी कागजात के लिये स्थान सुनिश्चित होने से सुव्यवस्था हो गई और इसके चलते कार्यालय में अब वातावरण तो सकारात्मक था ही साथ ही दूर-दूर से आने वाली अध्यापिकाओं के कार्यालय सम्बन्धित कार्य शीघ्रता से निपटने लगे। समस्त कार्यकलाप की जसकौर जी स्वयं जानकारी रखतीं ।

सरल वाणी किन्तु कठोर अनुशासन उनकी पहचान थी। स्पष्ठ व सटीक बोलने में उन्होंने कभी हिचकिचाहट अनुभव नहीं की। कहते है सुयश, सुगन्ध से भी तीव्र गति से फैलता है। जसकौर जी के कार्यों और उनके व्यक्तित्व की सुगन्ध जहाँ-जहाँ फैलती वहीं उनकी एक पृथक पहचान बनती जा रही थी। वह सुगन्ध जो माटी से उपजी थी माटी से जुडी थी किन्तु बरबस ही सबका मन मोह लेती थी। वह मरूभूमि की मिट्टी जो उनके अस्तित्व की निर्मात्री थी वही उनके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का सही माध्यम भी थी। इसी मिट्टी से सने पांवों को सही दिशा में सही मार्ग पर गतिमान कर इसी मिट्टी से मैले पड़े छोटे छोटे हाथों मे कलम पकड़ा वे इसके ऋण से स्वयं को मुक्त करना चाहती थीं। अब कार्य ही उनका जीवन था और इस कर्मयोगी जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ जाए, यह उन्हें स्वीकार्य नहीं था।

अन्य सभी संलग्न कार्यालयों के कर्मचारी व अधिकारीगण भी अधिकांशतः उनके कार्यों के प्रति सहयोगात्मक रवैया अपनाते थे और उनकी कार्य कुशलता की भूरी-भूरी प्रशंसा करते थे। जिलाधीश कार्यालय में जब भी सभी विभागों की संयुक्त बैठक बुलाई जाती तब जसकौर जी की कार्यप्रणाली व प्रस्तुतीकरण के उदाहरण अवश्य प्रस्तुत किये जाते। दिन - प्रतिदिन बढ़ती अपनी व्यस्तता के साथ तारतम्य बैठाते हुए वे सभी के परिवारों से भी जुड़ी रहतीं। अपने समकक्ष, अधीनस्थ कार्यरत सभी की व्यक्तिगत समस्याओं, पारिवारिक सुख-दुख के प्रति उनका व्यवहार अत्यन्त सहयोगात्मक होता था। कार्य कोई भी हो उससे जुडे व्यक्तियों में यदि भावनात्मक जुड़ाव होता है तो कार्य कुशलता में बढ़ोतरी होती है। एक स्त्री होने का सबसे बडा सकारात्मक पक्ष जसकौर जी के दृष्टिकोण से यही था कि स्त्री अपने साधारण कार्यकलापों से लेकर असाधारण कार्यों तक का आंकलन उसकी भावनात्मक तुष्टिकरण की सामर्थ्य को केन्द्र बिन्दु मान कर करती है। इसी कारण अधिकांशतः उसके मार्ग में लाख बाधाएं हो किन्तु सहयोगियों की संख्या प्रति एक विरोधी पर दस होती है। आवश्यक शर्त यह है कि उस भावना विशेष व उद्देश्य में पवित्रता और ईमानदारी के प्रति कटिबद्धता के साथ उच्च आदर्श व सटीक दृष्टिकोण का समावेश हो। साथ ही अपनी अपेक्षाओं को अपने इस आदर्शात्मक दृष्टिकोण के साथ सम्मिश्रण कर स्पष्ट रूप से व्यक्त कर पाने की कुशलता भी आनी आवश्यक है। जसकौर जी जिस कार्य का बीज बोती उसका अंकुर फूटते देर नहीं लगती। उसे सींचने व संरक्षण देने के लिए असंख्य हाथ आगे बढ़ जाते। यही उनके स्पष्ट दृष्टिकोण व ईमानदारी का सबसे बडा पुरस्कार था।

www.archanameena.com

सवाई माधोपुर में ऐसे कुछ व्यक्ति व परिवार थे जिनका सहयोग व प्रेम प्रत्येक परिस्थिति में जसकौर जी के साथ बना रहा। कार्यक्षेत्र के सहयोगियों में श्री बाबूलाल वर्मा, श्री सत्यनारायण जी वे प्रमुख नाम है। जिन्होंने समाज के हित में होने वाले किसी भी कार्य को पूर्ण रूप देने के लक्ष्य में कार्यालय के दस से पांच की समय सीमा रेखा को नहीं माना। जसकौर जी को अपनी बडी बहन स्वरूप मान उनके निर्धारित किये गये उद्देश्य में सदैव अखण्ड श्रद्धा एवं विश्वास रखा व यथासंभव सहयोग किया। स्थानीय नागरिकगणों ने भी प्रारम्भ से ही पग-पग पर उत्साहवर्धन किया। जसकौर जी की कार्यशैली की विशेषता रही कि उन्होंने सरकारी कार्यों व योजनाओं से आमजन को जोड़ कर रखने की पहल की। ऐसे कार्यों में सवाई माधोपुर के वरिष्ठ एवं प्रबुद्धजन पूर्ण भावना से जुड़ते थे। वरिष्ठ वकील श्री कृपाशंकर जी का उल्लेखनीय योगदान व अविस्मरणीय सहयोग इन्हें मिला।

किसी भी व्यक्ति के बनाए हुऐ भावनात्मक सम्बन्ध कठिन उतार चढ़ाव वाले मार्ग पर सहारे के लिये बने स्तम्भो की भांति होते हैं। व्यक्ति विशेष चाहे ऊँचाई पर पहुंचने के लिए प्रयासरत हो या नीचे उतर रहा हो, थकान अनुभव होने पर इन्हीं स्तम्भों के सहारे खड़ा हो नवीन ऊर्जा व उत्साह जुटाता है। निश्छल, निःस्वार्थ सम्बन्ध किसी के लिये भी सबसे बडी पूंजी है। जसकौर जी के पास भी यह धन दिन – प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति में अधिक नहीं तो भी न्यूनतम एक शिक्षाप्रद गुण अवश्य छिपा होता है जो ग्रहण करने से गुणीजन कभी नहीं चूकते और इसीलिये जसकौर जी ने जब भी, जहाँ भी, जिससे भी संभव हुआ सीखा।

मित्र, परिवार एवं परिचित सभी उनके कार्य कलापों, विचारों व स्वप्नों से जुडकर गौरवपूर्ण प्रसन्नता का अनुभव करते थे। इन सभी का निरन्तर उत्साहवर्द्धन उन्हें अधिकाधिक प्रयास करने की शक्ति प्रदान करता था। हाथ से हाथ जुड़ते थे तो सामर्थ्य बढ़ती जाती थी। स्वर में समवेत स्वर मिलते थे तो उत्साह व हिम्मत की गूंज हर बाधा को क्षण भर में खदेड़ देती थी।

हर क्रान्ति व आंदोलन की भाँति शिक्षा भी एक क्रान्ति है, जन आंदोलन है और इसमें आवश्यकता है जन सहयोग की अन्यथा इसे व्यापक स्तर तक ले जाना व सफल बनाना असंभव है। जन सहभागिता यदि कण भर भी हो तब भी कार्य विशेष के प्रति जनता का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है और कण कण से मन होते देर नहीं लगती यह अनुभव जसकौर जी लालसोट में कर चुकी थी। क्षेत्र में बालिका शिक्षा का प्रतिशत न्यूनतम था। स्थिति यह थी कि कार्य जिनके लिये हो रहा था उन्हें स्वयं इस कार्य के औचित्य की समझ न थी और ना ही महत्व का कोई ज्ञान था। ऐसे में विद्यालयों के अस्तित्व से वंचित छोटे - छोटे गांवों में शिक्षा की अलख जगाने का बीडा उठा जसकौर जी प्रतिदिन निकल पड़ती । गांव वालों को एक स्थान पर एकत्रित कर विश्वास दिलाती की वे भी उन्हीं में से एक हैं। जब वे शिक्षा का सम्बल पा यहां तक पहुँच सकती हैं तो उनकी बेटियां भी प्रगति के मार्ग पर आगे अवश्य बढ़ सकती है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। उन्हीं के गांव देहात व समाज की बेटी उन्हीं की चिरपरिचित भाषा में एक अपरिचित नूतन अध्याय के पन्ने उनके समक्ष खोलती जाती ओर वे ग्रामवासी उसे अपने मानस में उतार, स्थान देते जाते। जब वे उनसे कहती कि सरकार उन्हें यथासंभव सहयोग करेगी यदि वे स्वयं भी स्वयं के विकास के लिये प्रयत्नशील होंगे एवं जनसहयोग से सामर्थ्य अनुसार सहायता जुटाएंगे। वह सहायता किसी भी रूप में हो सकती है धन के रूप में, श्रम के रूप में या फिर संसाधनों को जुटाने में। जो भी जिसके लिऐ सम्भव हो उस रूप में किन्तु शर्त यह है कि सहभागिता आवश्यक है।

इसके पश्चात जब जसकौर जी की जीप एक गांव से पुनः किसी अन्य गांव की ओर मुड़ती तब पीछे उठा धूल का गुबार छंटने तक अनगिनत आंखों में सपने जन्म ले चुके होते। चर्चाएं भंवर की तरह सबको अपने में लपेट लेतीं, उत्साह अपने चरम पर होता इस भागीरथ प्रयास के फलस्वरूप एक या दो नहीं वरन् बत्तीस छोटे-छोटे गांवों में बालिका विद्यालयों के लिये भवनों का निर्माण ग्रामवासियों के परस्पर सहयोग व समर्पित जनभावना से हुआ जो कि जसकौर जी के लिये ना केवल सन्तोषप्रद वरन् अत्यन्त उत्साहवर्धक परिणाम था। बत्तीस विद्यालयों का अर्थ था कई सौ ग्रामीण बालिकाओं को अक्षर ज्ञान एवं प्राथमिक शिक्षा।

जिनके उद्देश्य बड़े होते है, वे प्रारंभिक सफलताओं की खुशी मनाने अधिक देर नहीं रूकते अपितु तुरन्त ही अगले मोर्चे के लिये आगे बढ़ जाते है। अब उन्होंने इस कई सौ की संख्या को हजारों मे ले जाने का निश्चय कर लिया। साथ ही प्रत्येक गांव में इन नवनिर्मित विद्यालयों के लिये उन्होंने स्थानीय पंच-पटेलों को एकत्रित कर उन्हें उसके रखरखाव छात्राओं के दाखिले आदि की व्यवस्था का दायित्व भी सौंप दिया जो उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। जो गांव मुख्य सड़क से दूर पड़ते थे वहां तक प्रतिदिन आने जाने वाली अध्यापिकाओं के नियमित न आ सकने की समस्या थी। इसके लिये मुख्य सड़क से गांव तक नियत समय पर अध्यापिकाओं को लाने ले जाने की व्यवस्था उन्होंने गांव वालों के साथ मिल कर की। गांव में जिसके पास आने-जाने का साधन होता वही समाधान के लिये सामने आ जाता। इस पहल का फल यह हुआ कि गांव वालों के सहयोग, भावनाओं एवं उनके द्वारा प्रदत्त सम्मान से अभिभूत हो कर कई जुझारू अध्यापिकाओं ने गांवो में रहने का मानस भी बना लिया। जसकौर जी के कार्य के प्रति समर्पित आदर्श व्यक्तित्व के रूप में क्षेत्र के शिक्षकगणों को अब एक ऐसा प्रेरक प्रतिनिधि मिला था जो सर्वप्रथम उन सभी की भांति एक शिक्षक था, उसके पश्चात् ही कुछ और। ज्ञान पा कर उन्नति की जो बहुमंजिला इमारत हम खडी करते है, उसकी नींव का पत्थर शिक्षक ही होता है। इस विश्व में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जिसने कभी ना कभी अपने किसी शिक्षक के मार्गदर्शन से प्रेरणा या अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव न किया हो। इसी कारण हम शिक्षक को समाज का निर्माता कहते है। समाज की बहती धारा की दिशा मोड़ सकने की सामर्थ्य शिक्षक वर्ग के अतिरिक्त और किसी में नहीं।

www.archanameena.com

ग्रामवासियों के योगदान से जो विद्यालय बने थे उनके सम्बन्ध में जसकौर जी की कल्पना व सूझबूझ का सही तालमेल रंग लाया। मानव स्वभाव है ही ऐसा कि जहॉ भी उनके तन, मन, धन या समय का एक अंश भी लगा हो वहाँ उसका जीवन जुड़ जाता है। विद्यालय क्या खुले ग्रामवासियों को दिन प्रतिदिन के कार्यो से हट कर कुछ सोचने विचारने का विषय मिल गया। अब चौपालों पर चर्चाओं में नया रंग होता। बालिकाओं के दाखिलों की होड़ लगती, अध्यापिकाओं की समस्याओं को सुलझाने के प्रयास होते। विद्यालय भवन में एक कमरा और कैसे बढाया जाए, इस पर भांति-भांति के सुझाव पंचो के समक्ष रखे जाते। तर्क-वितर्क होते। जितना विचार विमर्श होता, सोच विचार की सीमा रेखा अपने बंधन तोड़-तोड़ कर आगे खिसकती रहती। अब गांव से यदा-कदा ही पारिवारिक कारणों से बाहर जाने वाले बुजुर्ग शिक्षा सम्बंधी समस्याएं व शिक्षा अधिकारी कार्यालय तक पहुंचने लगे। जसकौर जी सभी को नाम से पहचानती थी। वे उनकी समस्याओं के निराकरण एवं सुझावों के क्रियान्वयन की पूरी व्यवस्था करतीं। ग्रामवासियों, पंच-पटेलों को बालिका शिक्षा के कार्य के लिये जिला मुख्यालय तक आता देख उनका हृदय गद्‌गद्‌ हो उठता।

इन बत्तीस गांवों में एक गांव शफीपुरा भी था। विद्यालय के लिये भूमि की व्यवस्था करने से लेकर भवन निर्माण तक, अध्यापिकाओं के आने-जाने एवं रहने की व्यवस्थाओं से लेकर छात्राओं के दाखिले तक इस गांव के बूढ़े-जवान सभी ने अथक श्रम किया था। यह कार्य ग्रामीण परिवेश में जहां बालिकाएं चार-पांच वर्ष की आयु तक ब्याह दी जाती थी, कितना कठिन था जसकौर जी जानती थी। एक दिन आया जब शफीपुरा से भी एक प्रतिनिधि मंडल सवाई माधोपुर आया। सफेद धोती कुर्ता पैरों में चमडे की जूतियां, सरपर सफेद पग्गड ओर कंधे पर अंगोछा डाले बुजुर्गो के प्रसन्नचित्त टोले ने जब शिक्षा अधिकारी कार्यालय परिसर मे प्रवेश किया तब उनका आत्मविश्वास देखते ही बनता था। सरलता और सहजता इतनी की जहां पांव थक जाते वहीं पालथी मार जेब से बीडी, तम्बाकू निकाल सुलगा लेते। सब कुछ जानने-समझने की जिज्ञासा व अपने गांव के विद्यालय के सम्बन्ध में बताने की तीव्र उत्कंठा लिये उन्होंने जसकौर के कक्ष में प्रवेश किया तो सहसा कुछ बोलते नहीं बना। गर्व से मस्तक ऊँचा हो गया, बूढी आंखे छलछला आई जब अधिकारी की कुर्सी पर पहली बार अपने गांव की बहू को बैठे देखा। कुर्सी से उठ जसकौर जी ने उन्हें यथोचित सम्मान दिया। यह वह दृश्य था जिसका विचार कुछ वर्ष पूर्व तक अपनी कल्पना में भी उन्होंने नहीं किया था। गांव की सभी बहुओं का अस्तित्व बुजुर्गो के लिये लम्बे घूंघट के पीछे छिपा है। वे जीवनपर्यन्त अनदेखी अनबूझी ही रहती है। वे भी इस स्थान की हकदार है यह उनके लिये अविश्वसनीय था। इसी असंभव को संभव बनाने की कुंजी अब उन सभी के हाथ में थी। गौरवान्वित हृदय से उन्होंने भी अपने कार्य की समस्याओं एवं उपलब्धियों पर विचार विमर्श प्रारम्भ किया। गर्वित होने की बारी अब जसकौर जी की थी। उन्हें आभास हुआ कि उनका लक्ष्य अब अधिक दूर नहीं। यज्ञ की प्रथम चिंगारी सुलग चुकी थी। इसमें अशिक्षा, पिछडेपन, बालविवाह व स्त्री की अन्य पगबाधाओं, मार्गकंटकों का होम होते देर नहीं लगेगी।

हमारे समाज में अनेकानेक कार्य ऐसे होते हैं जो सामाजिक हित के होते हुए भी इस कारण प्रारम्भ नहीं हो पाते कि उनको मूर्तरूप देने में कुछ समस्याएं होती है। इनका हल भी समाज के भीतर ही छिपा होता है, किन्तु प्रथम प्रयास का जोखिम उठाने के लिये हृदय में संवेदना व निश्चय में पर्वत सी अडिग दृढ़ता अपेक्षित होती है। प्रत्येक कार्य के समक्ष व्यक्तिगत सोच एवं पृथक पृथक मानसिकताओं से उपजी बाधाऐं खडी होती है। अन्तर्मन पूछता है, '' इस कार्य को करने से मेरा क्या भला होगा?'' और व्यस्तताओं का रोना रो प्रयास रूक जाते है, शिथिल पड़ जाते है। विपरीत इसके यदि अन्तर्मन कहता है '' इसमें समाज एवं देश का भला होगा'' तो प्रयास गति पकड लेते है।, मार्ग स्वतः ही बन जाते है, समय अपने आप निकाल लिया जाता है।

सवाई माधोपुर शहर में छात्र व छात्राओं के सहशिक्षा व्यवस्था वाले विद्यालय तो थे किन्तु केवल छात्राओं का विद्यालय एक ही था और वह शहर सवाई माधोपुर में स्थित था। इस कारण मानटाउन क्षेत्र की अधिकांश बालिकाऐं नियमित अध्ययन से वंचित रह जाती थी। स्थानीय निवासियों में व्यापारी वर्ग प्रधान था और समयाभाव के कारण वे इस सम्बंध में विचार नही कर पाते थे। यह समस्या किसी की प्राथमिकता की सूची में स्थान नहीं रखती थी। सन् 1984 में जसकौर जी ने इस कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दी और वकील श्री कृपाशंकर शर्मा, पं.बनारसीदास जी , प्रमुख व्यापारी श्री जगदीश जड़ावता जी, श्री करतार सिंह जी, श्री सत्येन्द्र गोयल व अन्य गणमान्य नागरिकों के साथ बैठक कर मानटाउन में एक बालिका विद्यालय खोलने के लिये रूपरेखा तैयार करने और इस हेतु जन सहयोग जुटाने की अपील की। आपसी विचार विमर्श के पश्चात् सभी ने यथाशक्ति समर्थन देने व सहयोग करने का संकल्प लिया। जसकौर जी की व्यापक सोच व प्रगतिशील विचारधारा पर सभी का विश्वास था। इस विश्वास पर खरे उतरने के लिऐ उन्हें हर क्षण अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ प्रयासरत रहना होता था।

मानटाउन के इस बालिका विद्यालय के लिये अब एक भूमि की आवश्यकता थी जहाँ पूरे क्षेत्र से पहुंचना सरल हो साथ ही विद्यालय के भविष्य में सुनिश्चित विस्तार को दृष्टिकोण में रख कर स्थान का पर्याप्त बड़ा होना आवश्यक था। इन सभी बिन्दुओं की कसौटी पर खरी उतरती थी ऑफीसर्स कॉलोनी से जुडी इन्द्रा कॉलोनी के बीच स्थित पार्क के लियें संरक्षित जमीन। अब दौर पर दौर प्रारम्भ हुए बैठकों के जिसमें इस कॉलोनी के सभी प्रमुख नागरिकगण भाग लेते। अधिकांश बैठकें जसकौर जी के निवास पर होती। पक्ष-विपक्ष, तर्क-वितर्क, सहयोग-असहयोग की सीढ़ियां लाँघ कर सभी को अनेकानेक बार विस्तार से महत्व समझाना जसकौर जी के लिये दिन-प्रतिदिन की बात हो गई। वह पार्क जिसकी आवंटित भूमि पर कभी किसी ने एक पौधा भी नहीं रोपा था उसके समक्ष एक बालिका विद्यालय का विचार जिससे सैकड़ो घरों में ज्ञान गंगा की धारा प्रवाहित होगी, अन्ततः विजयी हुआ। कॉलोनी वासियों ने अपना वह भू-भाग विद्यालय निर्माण के लिये सहर्ष दान कर दिया।

अब भवन निर्माण की बारी थी। उसके लिये धन जुटाना प्रारम्भ हुआ। जसकौर जी ने जन सहयोग से हजारों की संख्या में कूपन छपवाए। इस कूपन का मूल्य रखा गया ''एक रूपया'' जो सम्पन्न से लेकर मजदूर वर्ग तक सभी की सामर्थ्य अनुरूप था। जसकौर जी के इस विनम्र निवेदन को सभी ने स्वीकारा कि जब हर व्यक्ति कन्या के विवाह में कन्यादान को सर्वोच्च पुण्य समझता है तो कन्याओं के हित हेतु दान उससे भी अधिक शुभ एवं अर्थपूर्ण है। उनकी अपील का प्रभाव इतना था कि सवाई माधोपुर में बड़े दानदाताओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सब्जी की दुकान वाले प्रतिदिन ठेला लगाने वाले, मजदूरी करने वाले ने भी वह एक रूपये का कूपन खरीदा और इस पुण्य कार्य से जुड़ कर गौरव का अनुभव किया। विश्वास से दान किया गया खरे परिश्रम और पसीने का वह एक रूपया अमूल्य था। और इसके पीछे जो भावना थी वह अद्वितीय। इस सम्मिश्रण से जो भवन बनकर खडा हुआ उसका मूल्य किसी भी प्रकार आंका नही जा सकता था। इस विद्यालय को देख सभी जन फूले ना समाए। प्रत्येक व्यक्ति उससे जुड़ाव का अनुभव कर सकता था। सभी ने बूँद-बूँद से घट भरने का अर्थ प्रत्यक्ष उदाहरण से समझा था।

सवाई माधोपुर के सम्माननीय नागरिकगणों के साथ

विद्यालय के उद्‌घाटन के पश्चात् जब ये सुचारू रूप से चलने लगा बालिकाओं की चहल पहल से परिसर गूंजने लगा, प्रातः कालीन प्रार्थना के सम्मिलित स्वर ''शारदे मां अमरवर दे, हृदय में मृदु ज्ञान भर दे'' के रूप में घर घर की दिनचर्या का अभिन्न अंग हो गये तब जसकौर जी को लगने लगा जैसे अंधियारे को दूर करने के प्रयास में एक टिमटिमाता दीपक और जुड़ गया है। दृष्टि में मानों कुछ ओर दूर तक देखने की सामर्थ्य छा गई हो।

तत्कालीन सीमेंट फैक्टरी के कर्मचारियों के साथ

उनका मुख्य कार्य अब भी ग्रामीण क्षेत्रों से अशिक्षा व पिछड़ापन दूर करना था। वे जब भी कभी स्वयं से वार्तालाप करती तो अर्न्तात्मा के प्रश्न उन्हें व्यथित करते। उन्हें आभास होता कि कार्य जितना बडा है उसके समापन के पहले क्षण भर को भी सुस्ताना संभव नही चूंकि

www.archanameena.com

जीवन के जितने पल है उससे कई गुणा अधिक उन दीन-हीन निरक्षरों की संख्या है जिनका जीवन समृद्ध साक्षरजनों की तुलना में अभी अत्यन्त सोचनीय परिस्थितियों से जूझा रहा है। यह एक व्यक्ति की सामर्थ्य से परे था। दोष उनका नहीं होगा जो इन परिस्थितियों से अनभिज्ञ है, अपितु उनका होगा जो स्वयं को तो अंधकूप से बाहर खींच लाए, किन्तु पीछे अंधकार में छूट गये अपनों की जिन्होंने सुध नहीं ली। उनके प्रकाश में जाने की सार्थकता इसी में है यदि वे पथ प्रदर्शक बनें उनके लिये, जो कहीं पीछे रह गये। चाहे इस उद्देश्य के लिये अपने सम्पूर्ण जीवन का समय दान ही क्यूं ना देना पडे। पल भर आंखें बन्द कर वे इस विषय पर चिन्तन करतीं तो मानस पटल पर दृश्य उभरते मानों घूंघट की ओट से झाँकतीं शुष्क विकल आँखें उन्हें ढूंढ़ रही हैं। खुरदुरे, सांवले हांथों में अपनी पुत्री का नन्हा हाथ थाम, एक माता धूल धूसरित नंगे पाँव चलती उनकी ओर बढ़ रही है, नन्ही बच्ची का हाथ उनके हाथ में थमाने। वे जागती आंखें खोलती, अर्थ ढूंढती व हल निकालने का प्रयास करती। अधिक चर्चाओं के स्थान पर अधिक चिन्तन करना उनका स्वभाव रहा है। वे जानती थीं कि यह दृश्य जाल उनकी चेतन अवस्था का ऐसा स्वप्न है जो निरर्थक नहीं हो सकता।

स्वामी विवेकानन्द ने एक बार अपने साथी स्वामी अखंडानन्द को भेजे पत्र में लिखा था कि, '' किसी भी प्रकार का अधिकार पाने के लिये योग्यता का होना आवश्यक है। किसानों और मजदूरों को उनकी अवस्था का और साथ ही साथ उनकी शक्ति का ज्ञान करा दिया जाए और फिर उन्हें स्वयं अपने उद्धार के लिये प्रयत्न करने के लिये छोड़ दिया जाए।'' ''उद्धरेदात्मनात्मानम्'', अर्थात् जब उन्हें अपनी अवस्था का ज्ञान हो जाएगा और वे सहायता व उन्नति की आवश्यकता को समझेंगें, तब जानना कि तुम ठीक रास्ते पर हो।

यही उपदेश जसकौर जी के जीवन की कुंजी था। वे दान में दी गई अंगुल भर गहरी नींव पर भवन खडा नहीं करना चाहती थीं, जो हवा, तूफान के थपेडे भर से भरभरा कर गिर पडे। वे जागृति चिन्तन, योग्यता, स्वावलम्बन की शाखाओं वाले वृक्ष को शिक्षा व ज्ञान की जडों से प्रस्फुटित हो लहलहाता देखने के लिये लालायित थी ओर इस वृक्ष को सींचने के लिये वचनबद्ध।

चार अक्षर पढ़ लेने मात्र से कोई शिक्षित हो जाए ऐसा उन्होंने नहीं माना। उनके विचार में शिक्षा एक प्रकार का आत्मबोध है जो आपको विचार-विमर्श, चिन्तन-मनन, दूरदृष्टि व प्रस्तुतिकरण के गुण प्रदान करती है। साथ ही स्वावलम्बन के नये आयाम आपके समक्ष आ खड़े होते है। जसकौर जी का दृढ़ विचार था कि स्वाभिमान व स्वतन्त्रता की रक्षा, बिना स्वावलम्बी हुए करना उतनी ही विरोधाभासी बातें हैं, जितनी बिना दृष्टि के रंगों की पहचान करना। अक्षरज्ञान प्रथम सीढ़ी है। लिखना एवं पढ़ना आने से लक्ष्यपूर्ति नहीं होती यह मात्र प्रारम्भ है। उसके पश्चात लक्ष्य तक पहुंचने की योग्यता जन्म लेती है। वही योग्यता आपको जाग्रत करती है कि जो ज्ञान की कुंजी आपके हाथ मे है, उससे उन्नति के कितने द्वार आप खोल सकते हैं यह व्यक्ति विशेष के उद्योग व ललक पर निर्भर है कि खोले हुए द्वार के पीछे छिपे ज्ञान धन का कितना भाग यह समेट सकता है। अतः जो कुछ कोई अन्य किसी के हित के लिये कर सकता है तो वह है उसे उस स्थिति का भान करवाना जिसमें वह व्यक्ति विशेष जी रहा है एवं उस योग्यता को पाने में सहायता करना, उस शीर्ष स्थिति के दर्शन करवाना जहां वह उस योग्यता के सहारे पहुंच सकता हैं। हर प्रकार से आप माध्यम ही बन सकते है, प्रयास स्वयं व्यक्ति की इच्छाशक्ति पर निर्भर है।

इन पिछडे ग्रामीण भागों में किसान, दलित, मजदूरों के रूप में देश की ना जाने कितनी प्रतिशत शक्ति अपनी चेतना की सुप्तावस्था से अनभिज्ञ, अपनी योग्यता के चरम की सीमा रेखा से कोसों दूर, मुख्यधारा के वेग से पृथक मात्र शारिरिक श्रम की एक पक्षीय परम्परा को निभाती जीवन काटती चली आ रही थी। उसे इसी शरीर में

www.archanameena.com

स्थित मन, बुद्धि व आत्मा की चैतन्य शक्ति से परिचित करवाना ही जसकौर जी का उद्देश्य था। उनमें और अधिक प्राप्त करने की इच्छाशक्ति का उद्भव होना चाहिये यह उनका संकल्प था। वे ईश्वर की सत्ता के प्रति अखण्ड श्रद्धा व भक्ति रखती थीं, किन्तु प्रतिदिन वे प्रभु को अपने कार्य, अपने प्रयास व उसके परिणाम ही समर्पित करती आईं। समयाभाव के कारण वे प्रायः पूजन-अर्चन नहीं भी कर पातीं तो भी स्वयं के मनरूपी मन्दिर में जगत्पिता के प्रति उनके द्वारा यह नैवेद्य श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन चढ़ता था।

उनका निजी जीवन भी उनके विचारों की भांति सरल, पारदर्शक एवं स्पष्ट रहा। आडंबर, पाखंड व प्रदर्शन को उनके जीवन में कोई स्थान कभी नही मिला। स्पष्टवादिता व साहसपूर्ण विचाराभिव्यक्ति उनके प्रमुख शस्त्र रहें जिन्होंने जीवन के प्रत्येक मोर्चे पर उनका साथ दिया। बनावटपूर्ण, दोहरे व्यक्तित्वों, आलस्य भरे लोगों और दूसरों की खिल्ली उड़ाने से न चूकने वाले व्यक्तियों का साथ वे क्षण भर भी सह नहीं पातीं। इस सम्बन्ध में वे कठोर अनुशासन की पक्षधर रही है। सहजता को उन्होंने अपने जीवन का मूल मंत्र बनाया। किसी भी कार्य के प्रति उनमें असीम धीरज रहा है। ''सहज पके सो मीठा होए'' पर उन्होंने अक्षरशः विश्वास किया।

उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सबसे कोमल पक्ष है। पशु-पक्षियों पेड़-पौधों से असीम प्रेम। जहां भी सम्भव हुआ घर के पिछवाडे एक साग-सब्जी की बगीची व मवेशियों का बाडा उन्होंने अवश्य रखा। लम्बे, थकाने वाले दौरे कर वे जब घर लौटती तो पालतु पशुओं को सहलाकर दुलार कर ही घर के भीतर कदम रखती। प्रातः सूरज की प्रथम किरण फूटने से पहले ही वे निंद्रा का त्याग कर पक्षियों के लिये दाना- चुग्गा अपने हाथों से डालतीं। उगते सूरज की किरणों से चमकते रंगों से पुलकित, नाचते-फडफडातें परों को खोले, दाना चुगने को तत्पर भांति भांति के नन्हें पक्षियों को प्रेमपूर्वक निःशब्द बडी देर तक देखा करतीं जैसे प्रतिदिन की स्वतंत्र उडान के लिये उनके परों से ऊर्जा पाना चाहती हों। यह उनकी दिनचर्या का एक अतिआवश्यक भाग था और आज भी है।

उन्होंने सादा जीवन और जीवन में पारदर्शिता का सदैव समर्थन किया और वही सादगी उनके रहन-सहन, शुद्ध सात्विक खान-पान और विचार व्यवहार में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। रचनात्मकता उनमें कूट कूट कर भरी है। उत्पादक श्रम की वे प्रबल पक्षधर हैं। छोटे-छोटे साधारण से दिखने वाले कार्य जैसे स्वयं की उगाई हुई

फल-सब्जी प्रातः काल तोड़ कर एकत्रित कर परिचित घरों में सप्रेम पहुंचाना, पुष्प तोड़ कर उन्हें टोकरियों में भर स्थान-स्थान पर रखना और उनकी सुगंध से सुवासित आंगन में बैठकर पुस्तकों के कुछ पन्ने रोज पढना उन्हें असीम सुख व संतुष्टि प्रदान करते हैं।

वे सर्वप्रथम एक किसान की पुत्री हैं उसके पश्चात् ही कुछ और, स्वयं का यह परिचय देते हुऐ उनका उठा हुआ मस्तष्क व आंखों में दृढ़ता की चमक उनकी भावनाओं को सहज में व्यक्त कर जाते है। अपने बचपन की यादें, सोच, सरलता व समाज को आगे बढानें की निःस्वार्थ शपथ को अन्तर्रात्मा में बसा उन्होंने उस पर अतीत के कष्ट, गहन पीडाओं एवं संघर्ष का कडा खोल चढा लिया ताकि भविष्य की कोई भी गरम हवा, लहरों के क्रूर थपेडे उनके मनोबल को व उनकी आत्मा की सहजता व सरलता को प्रभावित ना कर सकें।

www.archanameena.com

क्षण-क्षण की सीढ़ियां लांघते वर्ष बीत गये। 1988 द्वार पर खड़ा दस्तक दे रहा था। इसी वर्ष सरकार ने सम्पूर्ण साक्षरता अभियान प्रारम्भ किया। जसकौर जी का पद अब जिला शिक्षा अधिकारी का था। यह सम्पूर्ण साक्षरता मिशन उनके स्वप्नों को पूरा करने में अहम् भूमिका रखता था। इसे शिक्षा के प्रसार का स्वर्णिम अवसर जान इस सर्व शिक्षा अभियान के हेतु उन्होंने स्वयं को पूर्णत समर्पित कर दिया। इस अभियान ने उन्हें उन क्षेत्रों तक पहुंचने में सहायता की जिनसे अभी तक उनका सम्पर्क नहीं हुआ था। गोधूली के पश्चात जब रात्रि घिरने को होती तो घरों के कामकाज से निवृत हो महिलाएं व पुरूष लालटेन के उजाले में अक्षरों पर अंगुली धरते दिखलाई पडते। गांवों के बुजुर्ग भी इससे अछूते नहीं थे।

अभियान को पर्याप्त जन सहयोग प्राप्त हुआ और सवाई माधोपुर जिले में इस मिशन ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की। सम्पूर्ण साक्षरता को एक अभिमान के रूप में संचालित करने में जसकौर जी को कई सकारात्मक अनुभव हुए। कार्य चुनौतीपूर्ण तो था ही किन्तु असम्भव शब्द जुझारू व्यक्तियों के शब्दकोष में लिखा ही नहीं होता। आवश्यकता सीधे संवाद की होती है। जितने सरल रूप में प्रस्तुत किया जाऐ ग्रामीण जन उतनी ही सहजता से कठिन से कठिन विषय को आत्मसात कर लेते हैं। उन्हें मात्र यह विश्वास दिलाने की आवश्यकता होती है कि योजना को समझने व कार्य रूप में परिणीत करने की योग्यता उनमें है। सम्पूर्ण साक्षरता मिशन के समाप्त होने तक जसकौर जी ने ना केवल स्वयं की कर्मठता और संचालन की योग्यता को नये आयामों के साथ प्रस्तुत किया अपितु जन जन के साथ आत्मीयता व विश्वास के नये सम्बंधों की सुदृढ़ दीवार खडी कर दी। उन्होंने अपनी कार्यप्रणाली भाषा शैली के साथ, प्रत्येक गांव की उन्नति में निजी रूचि लेते हुऐ ग्रामीणों को सरकारी तंत्र व प्रशासनिक व्यवस्थाओं के साथ बडी सहजता से जोडे रखा। सामाजिक प्रगति का यही मूल मंत्र है। स्थान के मुखिया पंचो व विभिन्न जातीय समुदायों को समझने व उनकी भांति-भांति की समस्याओं की अनबूझी पहेलियों को सुलझाने का जसकौर जी को इस अभियान की समयावधि में अवसर मिला।

समय आयु, अवसर, अनुभव में वृद्धि करता अपनी निश्चित चाल से स्वयं ना बढ़ते हुए, ना घटते हुऐ चलता चला जाता है। और इस संसार में अनवरत चलता परिवर्तन चक्र का पहिया परिस्थितियों में परिवर्तन करता दिखाई देता है। प्रतिदिन परिस्थितियों के इस परिवर्तन को ही जीवन कहते हैं। 1988 से 1993 के बीच बहुत कुछ घट रहा था। जसकौर जी के प्रयासों का पहिया भी गतिमान तो था किन्तु वे स्वयं इस गति को प्रगति के लिये पर्याप्त नहीं समझती थी। प्रगति एक दो या सौ-दो सौ के कदम ताल मिला कर चलने से नहीं मिलती वरन् जन-आंदोलनो से प्राप्त की जाती है। किसी लक्ष्य विशेष के प्रति जन सहभागिता ही जन आंदोलन है। विचार का प्रवाह ऐसा हो जो जन आंदोलन का रूप लेकर एक क्रान्ति में परिणित हो जाऐ। यही उनका ध्येय था।

किसी भी सामाजिक क्रान्ति में कुछ व्यक्ति मोर्चा संभालते हैं और साथ ही होते हैं वे जो प्रत्यक्ष नहीं अप्रत्यक्ष सहयोग करते हैं, किन्तु जब तक जाग्रति व उद्धेश्य के प्रति जुडाव सभी का ना हो, निस्वार्थ योगदान एवं भावनात्मक सहयोग जन-जन द्वारा ना दिया जाऐ तब तक प्रगति की कल्पना करना या आंदोलन की सफलता सुनिश्चित करना दिवास्वप्न देखने के समान है।

जसकौर जी के लिये प्रश्न इसी बिन्दु पर आ कर उलझ जाता था कि वह कौनसा मार्ग है जिसमें असंख्य पैरों को आमंत्रित करने का आकर्षण है? उत्साह की एक ऐसी आंधी उठे कि जहां-जहां से भी वह चले, अपने वेग से जन जन का मानस झकझोर दे। वे जितना विश्लेषण करतीं, चिंतन करती उनकी सोच अनुभवानुसार प्रत्येक समाज में उपस्थित चार प्रकार के व्यक्तियों पर टिक जाती। प्रथम तो वे जो धनोपार्जन करते हैं और धन से सहयोग कर सकते हैं, द्वितीय वे जो ज्ञान की, बुद्धि कौशल की शिक्षा देते हैं और अपनी दूरदृष्टि और कुशल मार्गदर्शन से सहयोग करते हैं, तृतीय वे होते हैं जो शारीरिक श्रम से अपनी जीविका चलाते हैं और श्रम का दान दे सकते हैं और चतुर्थ वे होते हैं जिन्हें इन तीन प्रकार के व्यक्तियों के सहयोग की आवश्यकता होती है। उनमें से भी कुछ इस सहयोग का कण कण उपयोग में लेते हैं, प्रगति करते हैं, स्वयं का चहुमुखी विकास करते हैं और प्रथम द्वितीय या तृतीय प्रकार के व्यक्तियों के समकक्ष आकर खडे हो जाते हैं और इसी को सामाजिक विकास कहा जाता है जब समाज का प्रत्येक खण्ड जुड़ कर सुदृढ़ता से प्रगति की नींव डाले। परन्तु सभी का आव्हान जसकौर जी तभी कर सकती थीं जब जुटाए हुए व्यापक सहयोग के फल के रूप में प्राप्त होने वाले लाभ का वितरण सभी वर्गो में समान रूप से होगा यह विश्वास प्रत्येक को दिला सकें।

www.archanameena.com

यह विचार और बालिका शिक्षा के प्रचार प्रसार का लक्ष्य साथ लेकर उन्होंने पुनः एक अभियान के आरम्भ का शंखनाद किया। इस बार अभियान था सम्पूर्ण बालिका शिक्षा की बेल को पुष्पित पल्लवित होने के लिये स्वयं का एक आधार प्रदान करने का। एक ऐसे केन्द्र की स्थापना का लक्ष्य जहां ग्रामीण अंचल की बालिकाओं के समुचित सर्वांगीण विकास की कल्पना को साकार रूप प्रदान किया जा सके, जो सभी के लिये सुलभ हो, विश्वसनीय हो। जो सबका हो सबके लिये हो। एक ऐसे स्थल का निर्माण जसकौर जी की कल्पना में रच बस गया जो शिक्षा व ज्ञान के स्फुटित होते बीजों के लिये धरती पानी व छाँव का काम करे। जो विकसित होती आकार लेती कल्पनाओं का पालना हो। एक ऐसी विद्यास्थली जो निःशक्त हाथों को शक्ति प्रदान करने की ऊर्जास्थली हो। जो अबोध बालिकाओं के नन्हें हाथों से कुदाल, फावड़ा हटा कर कलम, किताब पकड़ाने का वातावरण निर्मित करे। मानसिक शक्ति ही भविष्य में शारिरिक शक्ति व उसके उपयोग को भी परिष्कृत करती है। संभवतः पशु व मनुष्य में यही विभिन्नता है।

जसकौर जी को कार्य की स्पष्ठ दिशा मिल गई थी। एक ऐसा मार्ग जिसमें सभी मार्ग आकर मिलते थे। निष्ठा विश्वास और उन सभी से सर्वोपरी आत्मविश्वास से वे उस मार्ग पर उतर गईं। पहला पग अकेले ही क्यूं ना उठाया हो, लेकिन जसकौर जी को विश्वास था कि शीघ्र ही इस मार्ग पर वे अकेली नहीं होगी। उन्होंने ''जनजाति महिला विकास संस्थान'' नामक स्वयंसेवी संस्थान की नींव डाल अपनी इस यात्रा का शुभारंभ किया। अंब यही संस्था उनके समस्त प्रश्नों का उत्तर बन चुकी थी, अनेकानेक अनबूझी पहेलियों की मानो यही कुंजी हो। एक विद्यास्थली की संरचना की कल्पना मात्र से ही उनके हृदय में असीम शांति व सुख का अनुभव होता। इस कल्पना को साकार रूप देना एक चुनौतीपूर्ण कार्य था। इस उद्धेश्य की पूर्ति असंभव तो नहीं किन्तु सरल भी ना थी। विद्यालय के स्थान, भवन एवं संसाधन सभी जुटाना आवश्यक था। अतः धन बल, बुद्धि बल व श्रम का बल तीनों का महत्व बराबर था। यह एक महायज्ञ था जिसमें आहुति के लिये अनेकानेक हाथों का सम्मिलित प्रयास अपेक्षित था। हृदय में दृढ़ निश्चय कर वे इस यज्ञ का निमंत्रण जन-जन को देने निकल पड़ीं।

सवाई माधोपुर के आसपास एक विस्तृत ग्रामीण क्षेत्र है। इस संस्था के निर्माण के लिये सहयोग के रूप में उन्हें यथाशक्ति दान चाहिये था। जिनके हित में यह कार्य वे करना चाहती थीं, प्रारम्भ उन्हीं के योगदान से करना था किन्तु कटु सत्य सन्मुख खडा था और वह था इस क्षेत्र के अधिकाँश भागों की दयनीय आर्थिक स्थिति। खेती पर आश्रित घरों में संचित निधि के नाम पर कुछ ऐसा नहीं था, जिसे वे किसी विद्यालय के निर्माण में अपने योगदान के रूप में दान कर सकें। वे अपनी बालिकाओं के लिये परिस्थितियों के परिवर्तन के इच्छुक तो थे, किन्तु इस परिवर्तन के लिये उनकी सहभागिता क्या होनी चाहिये, इसका उत्तर कदाचित उनमें से किसी के पास न था। हर संभव सहायता देने की तीव्र इच्छा तो उनमें थी, किन्तु सालभर के लिये खाने को बचा कर रखे अनाज के अतिरिक्त अधिकांश घरों में देने के योग्य कुछ नहीं था।

अपने विचारों को कुछ प्रमुख गांवों के मुखियाओं के सम्मुख रख जसकौर जी लौट आती। यह उनका प्रतिदिन का कार्य हो गया था। इसी बीच उनकी नियुक्ति कुछ समय के लिये परियोजना अधिकारी महिला एवं बाल विकास के पद पर कर दी गई। कार्य कोई भी हो, जनसम्पर्क करना व सभी में चेतना का प्रवाह करना, स्वयँसे व रूढ़ियों से लड़ना सिखाना, प्रगति के मार्ग से परिचय करवाना उनके दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों में सम्मिलित था। कभी-कभी अचम्भा होता कि इतने प्रश्नों के उत्तर देने की, कई-कई बार एक ही बात को बारीकी से प्रत्येक को समझाने की ऊर्जा वे कहाँ से लाती है। कोई भी व्यक्ति स्वयं को भुलाकर समाज के जागरण के लिये इतने समर्पित भाव से जीवन कैसे बिता जाता है ? किन्तु उनके लिये जीवन की परिभाषा यही थी। इसके अतिरिक्त भी जीवन का कोई औचित्य या उपयोग है, यह उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया।

इसी समयावधि में जसकौर जी को मात्र एक वर्ष के अन्तराल में माता धनकौर बाई व अपनी सास किशनबाई का चिर विछाहे भी सहना पड़ा। मृत्यु शाश्वत सत्य है किन्तु अपनी माताओं व पिता के जीवन काल में वे उन्हें जो दिखाना चाहती थीं, वह देखने के लिये वे ठहर ना सके, इसकी गहन पीड़ा उन्हें आज भी सालती है। अपने अन्त समय तक दोनों माताएँ उन्हें आशीष देती रहीं। उनकी वृद्धावस्था का जसकौर जी गौरव थीं। उनके प्रत्येक सुख, सुविधा, इच्छा, अनिच्छा का उन्होंने अपनी व्यस्ततम दिनचर्या से समय निकाल कर भी ध्यान रखा। माता के देहावसान् के पश्चात कई बार ऐसे क्षण आते जब वे अतीत की यादों में लौट जातीं। माता-पिता के साथ बिताए पलों, बचपन की स्मृतियों को भला कौन भुला पाता है। विपरीत परिस्थितियों में भी माता-पिता के संयत व्यवहार, अपनी पुत्रियों व पुत्रों के बीच कभी अन्तर ना समझने की स्पष्ट सोच उन्हें याद आती तो हृदय गद्गद् हो उठता। स्वयँ लेखन, पाठन से कोसों दूर उनके माता पिता अपने अभाव भरे दिनों में भी किस प्रकार उन्हें लिखा-पढ़ा सके यह स्मृति उन्हें आज भी विस्मित कर देती है। उन्हें याद था कि मण्डावरी लौटने पर जब धनाभाव अपने चरम पर था तब कुछ दे पाने की असमर्थता स्पष्ट रूप से जताकर भी उनके पिता ने शिक्षिका को एक बोरी अनाज के बदले अपनी बेटी को पढ़ा देने का प्रस्ताव रखा था। धन्य थी उनकी सोच।

विचारों में डूबते-उतरते अचानक मस्तिष्क में कौंधी इस स्मृति से जसकौर जी को लगा मानो विचारों की धुंध छंट गई हो। उन्हें अपने प्रश्न का उत्तर अपने पिता की सरल व्यावहारिक बुद्धि की सहायता से मिल गया। जो मार्ग तब सम्भव था, वह आज भी तो सम्भव है। किसान जो तब था वही अब है। परिस्थिति जैसी तब थी, वैसी ही अब भी है। पुत्री भी वही है, पिता भी वही। इच्छा तब भी प्रबल थी, आज भी प्रबल है। शिक्षा के लिये अनाज का दान तब दिया गया तो, आज भी वह स्वीकार्य होना ही चाहिये। यज्ञ की आहुति में सामग्री कई प्रकार की होती है, किन्तु हवन कुण्ड तो एक ही होता है। उन्हें मानो कुंजी मिल गई थी। अब जो कुछ, जिस रूप में जैसे भी दिया जाएगा, वे वही एकत्र करेंगी। विद्यालय निर्माण की रूपरेखा को अब उन्होंने नये सिरे से बनाना प्रारम्भ किया।

किन्तु 1993 के पूर्वार्द्ध में ही उनकी पदोन्नति हो गई। उप निदेशक (बालिका शिक्षा) के पद पर जयपुर उन्हें स्थानांतरण मिला। उन्होंने पदभार गृहण तो कर, लिया किन्तु ग्रामीण क्षेत्र की अपनी कर्मभूमि से दूर रह अपने स्वप्न के साकार होने के मार्ग में यह पदोन्नति उन्हें बाधा लगने लगी। कार्य क्षेत्र यद्यपि बड़ा था, कार्य का स्वरूप विस्तृत था किन्तु यहाँ उनकी आत्मा की तृप्ति नहीं थी। रह-रहकर दो दृश्यों का विरोधाभास उन्हें विचलित करता। एक ओर राज्य की राजधानी की प्रमुख सड़क पर उनका कार्यालय था। शहर के पढ़े-लिखें सम्भ्रान्त वर्ग की आवाजाही लगी रहती थी। वर्षों से स्थापित बड़े-बड़े विद्यालयों में शिक्षित माता-पिता बालिकाओं को ना केवल स्वयँ विद्यालयों तक छोड़ने आते, अपितु उनकी शिक्षा एवम् सॉंस्कृतिक विकास की पूर्ण जानकारी रखने का प्रयास करते। वहीं दूसरी ओर कच्ची-पक्की सड़कों के अंतिम छोरों पर बसे गॉंव और गॉंव की मिट्टी से बने घर आँगन थे। पढ़े-लिखे वहाँ यदा-कदा ही जाते थे, ओर जो पढ़-लिख जाते थे, वे वहाँ से पलायन अवश्य कर जाते थे। इन्हीं गॉंवों की धूमिल पगडण्डियों पर अनगिनत बालिकाएँ शिक्षा से अनभिज्ञ सारा दिन गाय-भैंसों के पीछे नंगे पॉंव दौड़ती। माता-पिता को दो जून की रोटी के जुगाड़ में पौ फटने से गोधूलि तक उनकी सुधि ना रहती। जसकौर जी को लगता यदि वे यहाँ रह गई तो उन बालिकाओं को विद्यालय तक कौन पहुंचाएगा ? नहीं... उन्हें जाना ही होगा, पुनः अपनी उसी कर्मभूमि में। यह निर्णय लेने में उनके हृदय को कोई पीड़ा नहीं हुई, किन्तु पदावनति के लिये दिये गये उनके प्रार्थना पत्र ने सभी को अचम्भे में डाल दिया।

जसकौर जी के उप निदेशक का कार्यभार ग्रहण करने से पहले ही उनके व्यक्तित्व, व्यवहार एवँ कार्यों की भीनी सुगन्ध उनके सहयोगी व सहकर्मियों तक पहुंच चुकी थी। अतः सभी ने उन्हें सदैव आदर, व सहयोग दिया। वरिष्ठ अधिकारी वर्ग उनकी कर्मठता एवं जुझारू स्वभाव से परिचित था अतः उन्हें अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का सुझाव सभी की ओर से मिला। सबका एकमत था कि उनकी सेवाओं से कार्यालय लाभान्वित होगा। किन्तु जसकौर जी शिक्षा में पिछड़े उस समाज के प्रति प्रतिबद्ध थी जिसे लाभ देने वाला कोई ना था। पदों को सुशोभित करने वाले कई योग्य अधिकारी विभाग मे थे, किन्तु शिक्षा को वंचितों की शोभा बनाना उनका ध्येय था। यह वही कर सकता था जो स्वयँ उस समाज का एक भाग हो व उनके संघर्ष एवं परिस्थितियों की गहरी व्यावहारिक समझ रखता हो। अन्ततः उनकी अर्जी स्वीकार कर ली गई एवम् उनकी भावनाओं को सम्मान देते हुए उन्हें पुनः जिला शिक्षा अधिकारी कार्यालय, सवाई माधोपुर में स्थानान्तरित कर दिया गया।

बिना एक भी दिन का विश्राम लिये उन्होंने समाज में छिपे भामाशाहों को खोजना प्रारम्भ किया। किसी को भी अब इस कार्य के प्रति जसकौर जी की लगन व निष्ठा पर सन्देह ना था। सवाई माधोपुर व निकट के गाँवों के कुछ प्रमुख व्यक्ति इस अभियान में उनके साथ उतर पड़े। निकटस्थ, दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्र की ढ़ाणियों में चौपालों पर लोगों को एकत्रित कर वे उन्हें शिक्षा का महात्मय समझाती। उनके प्रश्नों के उत्तर देतीं, शंकाओं का समाधान करतीं। उनकी नन्हीं बालिकाओं को समक्ष खड़ा कर उनके भविष्य की योजनाएँ समझाती। उनके अशिक्षित रहने व शिक्षित होने के बीच वे सेतु बन कर खडी हैं, इसका विश्वास वे जन-जन को दिलाती। उन बालिकाओं के लिये विद्यालय की रूपरेखा सामने रख वे स्पष्ट करतीं कि यह विद्यालय उन सभी के लिये होगा, किन्तु इसके निर्माण का कर्तव्य भार स्वयँ उन सभी के कन्धों पर है।

www.archanameena.com

उनका सम्मोहन कुछ ऐसा था कि अब वे जहाँ भी जाती, वहाँ लोग उन्हें सुनने, देखने के लिये पहले से ही एकत्र हो जाते। घूंघट की ओट से झांकती अनगिनत स्त्रियाँ घण्टों गृहस्थी के काम छोड उन्हें मंत्रमुग्ध देखती, सुनती रहतीं। कुछ बातें वे समझ पातीं, तो कुछ समझ पाने में वे असमर्थ थीं, किन्तु जसकौर जी की आत्मा की सच्चाई व दृढ़ता किसी आलौकिक ज्ञान की भाँति उनकी आत्मा में समाती चली जाती। उन्हें एक आभास होता कि दिनभर की पहनी हुई साधारण सूती साड़ी में रास्तों की धूल को बिना चिन्ता माथे से लेकर पैरों तक आत्मसात कर ये जो समक्ष खड़ी उनके व उनकी बच्चियों के भविष्य की चर्चा में मग्न है, इससे अधिक प्रगाढ़ रिश्ता उनका किसी और से है ही नहीं।

चर्चा समाप्त होने पर वे स्त्रियों के बीच बैठ जातीं और उन्हें उन्हीं की बोली में समझातीं। वृद्ध स्त्रियाँ उनके माथे पर हाथ फेर, गले लगा उन्हें अनेकानेक आशीष देतीं। कोई बहू पैर छूती तो कोई अपने पीहर ससुराल से उनके पीहर ससुराल के रिश्तों के तार जुड़ाने के प्रयास में उन्हें दोनों हाथों से थामे रखती। मुख निहारती उनकी दृष्टि में अनेक प्रकार के विरोधाभासी भाव डूबते-उतराते रहते। उत्साह, उत्सुकता व उल्लास के भाव, छिपी हुई गहन पीड़ा के भावों से मिल-जुलकर दृष्टिगोचर होते। वह कातर दृष्टि जो बालपन से जसकौर जी के मन-मस्तिष्क को झकझोरती, प्रश्न पूछती आई थी, वही आज भी प्रत्येक ग्रामीण स्त्री के अनदेखे, अनजाने अस्तित्व का भाग थी। इसी दृष्टि से यह दरिद्रता, पीड़ा, कातरता का भाव हटाकर जिस दिन आत्मविश्वास दृढ़ता व जागरूकता आ जाएगी, वही दिन उनकी संतुष्टि का दिन होगा, यही उनका संकल्प था।

विद्यालय निर्माण के यज्ञ की चिन्गारी अब सुलग चुकी थी। गाँव के गाँव अब सहयोग के लिये आगे आ चुके थे। कोई स्थान ही ऐसा बचा होगा जहाँ वे स्वयँ ना पहुंची हो। अब समस्त संसाधन जुटाने का समय था। इसके लिये उन्होंने एक-एक प्रमुख गाँव चुना। इसी प्रमुख गाँव के आसपास के गाँवों को समाचार भेज दिया जाता कि अमुक दिन सभी गाँवों के लोग इस प्रमुख गाँव में संध्या समय एकत्रित हों। जसकौर जी दिनभर कार्यालय के कार्यों में व्यस्त रहती थीं। अतः संध्या समय ही वे जन-सम्पर्क का कार्य करतीं। उनके निमन्त्रण पर उन्हें निर्धारित दिन पूरी चौपाल भरी हुई मिलती। लोगों की सहभागिता, उत्साह देख उन्हें असीम आनन्द का अनुभव होगा।

विद्यापीठ के निर्माण की कार्य योजनाओं पर चर्चा होती, जसकौर जी सभी से यथोचित सहयोग देने की अपील करतीं। वहीं भरी पंचायत में बारी-बारी खड़े हो ग्रामीण अपनी दानराशि की घोषणा करते। यह दान राशि कहीं व्यक्ति विशेष के द्वारा होती, तो कहीं सारे गाँव के सम्मिलित प्रयास से एकत्रित की गई होती। वह राशि यथाशक्ति होती, पाँच, पचास या पचास हजार रूपए। दान कितना भी हो, किन्तु देने वाला साधुवाद का पात्र होता है। एक समाज सम्मिलित योगदान से सर्वांगीण विकास की नींव डाल रहा था। एक कन्या जो दो घरों की संस्कृतियों व सभ्यता की नींव होती है, उसके विकास की नींव रखना समाज की नींव को दृढ़ता प्रदान करता है, यह भावना अब सभी के हृद्‌य में गहरे पैठ चुकी थी। बैठक में एकमात्र महिला होने के उपरान्त भी चौपाल के मध्य जसकौर जी मुख्य स्तम्भ थीं। उन्हें आत्मविश्वास से इस सारी कार्यवाही को करता देख, तब तक यह अनुभव ग्रामवासियों को हो चुका था कि शिक्षा से किसी स्त्री के जीवन में क्या सकारात्मक परिवर्तन आ सकता है।

जब बारी उन गाँव की आती, जिनके सामर्थ्य में धन देना नहीं था, तो लोग जसकौर जी से पूछते कि उन्हें क्या करना है ? सभी से हाथ जोड़ वे एक ही बात कहतीं कि किसान की सबसे बड़ी पूंजी अनाज है। सब घरों से अनाज का दान लें। वह एक मुट्‌ठी, एक बोरी, कुछ भी हो सकता है। उस एकत्रित अनाज को बेचकर जो भी राशि प्राप्त हो,

उसे शिक्षा के हेतु दान में दे देवें। उससे बड़ा दान और कुछ नहीं हो सकता। साथ ही साथ जिन गाँवों की बसावट पहाड़ों के पास हैं वह निर्धारित कर लेवें कि गाँव में उपलब्ध ट्रैक्टर, ट्रॉली, ऊँटगाड़ियों से कितनी बजरी व पत्थर वे निर्माण स्थल पर डलवा सकते हैं ? इसके पश्चात् तो मानो किसानों का मनोबल दोगुना हो गया। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि सभी को स्वयँ के पास देने योग्य कुछ ना कुछ मिल ही गया था। हर्षित मन से वे बैठकों में जाते। लिखने वाला दान की सूची लिखता थक जाता था, परन्तु देने वालों का उत्साह कम ना था।

ऊबड़-खाबड़, बिजली के खम्भों से वंचित, धूल भरे विकट रास्तों को पार कर जसकौर जी अर्द्धरात्रि बाद तक घर पहुँचतीं। कभी-कभी रात्रि के एक-दो बजे होते। गाँव में प्रेम से घरों में जो जैसा भोजन करा देता, कर लेतीं और कई बार चर्चा में समय इतना बीत जाता कि भोजन की सुध ना रहती। घर के सुविधाजनक, शीतल वातावरण में जब सब निद्रा में लीन होते, वे कागजों के पुलन्दे, दानदाताओं की सूचियाँ थामे, मार्ग की मिट्टी से आच्छादित और पसीनों से सरोबार, थकान से चूर, घर में प्रवेश करतीं। पलकों पर छाई धूल की परत और अधिक बोलने से भीषण गर्मी के कारण सूखे कण्ठ के साथ उन्हें देखकर ऐसा आभास होता था जैसे इस विद्यापीठ के निर्माण से उनका अस्तित्व, उनका सुख-दुख, सब जुड़ा हुआ है। यही उनके जीवन का एक ध्येय बचा है। स्नान कर व सम्भव हुआ तो कुछ भोजन कर वे निद्रा की गोद में कुछ घड़ी विश्राम करतीं। प्रातः सबकी आँख खुलने पर पता चलता कि वे पक्षियों को दाना-चुग्गा डालने, पेड़-पौधों को सम्हालने अथवा मवेशियों को दुलारने के अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों में पुनः अपनी उसी चिर-परिचित ऊर्जा के साथ जुटी हुई हैं।

विस्मयकारी थी, उनकी लगन।
कभी इस सम्बन्ध में पूछने पर भी
यही कहतीं कि कोई भी कार्य
जिसमें व्यक्ति की हृद्य से
भागीदारी हो, थकान नहीं देता,
वरन् प्रसन्नता के सच्चे स्वरूप
के दर्शन करवाता है।
ऐसी थकान से ही आत्मा को
विश्राम की अनुभूति होती है।

www.archanameena.com

इस अभियान ने अब अपने उद्धेश्य की भाँति ही विशाल रूप ले लिया था। भागीदारी के लिए आगे आने वालों में सवाई माधोपुर जिले के अतिरिक्त अब जिला दौसा व करौली के ग्रामवासी भी थे। जसकौर जी के दौरों में दिन-प्रतिदिन निर्धारित गंतव्य स्थल की दूरी बढ़ जाती और उनके लक्ष्य की दूरी कम हो जाती। सवाई माधोपुर क्षेत्र के गाँवों में सिनोली, श्यामोता, अजनोटी, बनेठा, धनोली, नींदड़दा, सूरवाल आदि अनेकानेक गाँव थे, जो हर-सम्भव सहायता देने को तत्पर थे।

उन्हीं में से एक गाँव था मैनपुरा। सवाई माधोपुर मुख्यालय से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित यह छोटा सा गाँव है। अपनी लघु सीमा में विशाल हृदय लिए इस गाँव में प्रगतिशील विचारधारा के पक्षधर वरिष्ठ ग्रामवासियों का एक समूह था, जिनमें स्वर्गीय उप सरपंच हरिनारायण जी, रामकरण व्यापारी, स्वर्गीय हरभजन जी, रामनाथा जी, रामकरण जी अकाउण्टेन्ट एवँ अन्य पंच-पटेलगण आदि वे नाम हैं, जिनका जसकौर जी की इस यात्रा से जुड़ी स्मृतियों में विशिष्ट स्थान है।

मैनपुरा गाँव यूँ तो सपाट फैले भू-भाग से घिरा हुआ है, किन्तु इसके समीप एक छोटी सी पहाड़ी है, जो बबूल और धौंक की फैली पसरी झाड़ियों से आच्छादित दिखती है। मानो तपती गर्म जलवायु के क्षेत्र में दृष्टि को हरियाली की ठण्डक से सहलाना ही उसका ध्येय हो। दूर से यह पहाड़ी इस क्षेत्र के उन्नत भाल सी दिखाई देती है और उस भाल पर तिलक की भाँति है, इस पहाड़ी पर स्थित पीर बाबा का स्थान। पीर बाबा की मान्यता यहाँ दूर-दूर तक है, जहाँ हर एक धर्म व जाति के लोग मनौती माँगने अथवा कोई अभिष्ट इच्छापूर्ण होने पर आते हैं। यहाँ एक अखण्ड ज्योति जलती रहती है, जिसे अखण्ड रखने के लिए पीर बाबा के द्वार पर आने वाले कृतज्ञजनों द्वारा अर्पित तेल का दान काम आता है। इसी आशा का संचार करने वाली पहाड़ी की तलहटी में कंकरीला, पथरीला एक बहुत बड़ा मैदानी भाग था। निर्जन, बन्जर एवँ अनुपयोगी। जो सरकारी दस्तावेजों में सिवायचक, (गैर मुमकिन भूमि) के अन्तर्गत् आता था। जसकौर जी जब भी यहाँ से गुजरतीं, तो लगता कि इस बन्जर भूमि की सूनी गोद उन्हें अपनी ओर बुलाती है। इस रास्ते से जब भी निकलतीं, अनुभव होता मानो कोई अदृश्य शक्ति उन्हें अपनी ओर खींचती चली जा रही है।

www.archanameena.com

विद्यापीठ की नींव डालने के लिए एक उपयुक्त स्थान की खोज चल रही थी। एक ऐसा स्थान जहाँ चहुँओर से पहुँचना सरल हो, जो सुरक्षित हो एवँ आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों से सीधा जुड़ा हुआ हो। तत्कालीन जिलाधीश श्री बी.एल. शिशु जी जसकौर जी की योजनाओं व प्रयासों से अवगत थे, साथ ही उन्होंने जसकौर जी को आश्वस्त किया था कि वे इस पुनीत कार्य में यथा-सम्भव सहायता को तत्पर हैं। एक दिन गहराई से विचार मन्थन कर जसकौर जी सीधे उनके कार्यालय पहुँचीं एवँ मैनपुरा की इस दुःसाध्य भूमि पर विद्यापीठ निर्माण की अपनी इच्छा प्रकट की।

सम्भवतः पीर बाबा के टिमटिमाते चिराग को सदियों तक देखते-देखते पृथ्वी ने अपने इस असमर्थ भू-भाग के लिए कोई वरदान माँग लिया होगा, सो सही अर्थों में फलने-फूलने का आशीर्वाद इसे मिल गया और जिलाधीश महोदय ने ना केवल तत्काल अपनी सहमति दी, वरन् आवंटन की रसीद के 10 रूपए स्वयँ अपनी जेब से निकालकर जमा करवाए और अपनी शुभकामनाओं के साथ बालिका विद्यालय के निर्माण हेतु यह सवायचक भूमि उन्होंने जनजाति महिला विकास संस्थान के नाम आवंटित कर दी।

1993 आधा बीत चुका था। विद्यालय की समस्त रूपरेखा तैयार थी। धन-धान्य व श्रम का दान भवन के

प्रारम्भिक चरण के निर्माण के लिए पर्याप्त था, किन्तु भवन के बनने और उसके पश्चात् बालिकाओं के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने में अभी समय लगना निश्चित था। शिक्षा को प्रारम्भ करने के लिए प्रतीक्षा की कोई आवश्यकता ना समझते हुए जसकौर जी ने वर्ष 1993 में मैनपुरा गाँव के मध्य स्थित एक मन्दिर के प्रांगण में ग्रामीण महिला विद्यापीठ के नाम से 15 बालिकाओं का दाखिला ले, उनके पठन-पाठन की व्यवस्था का श्री गणेश किया। भवन के बनने के पश्चात् इस अस्थाई व्यवस्था को स्थायित्व मिल ही जाएगा, किन्तु तब तक जितने दीप अक्षर ज्ञान के जल सकें, उतने ही भले, यही उनकी सोच थी। इसी गाँव की एक बेटी केसन्ती मीना एवँ एक बहू चन्द्रकला आगे आई और इन पन्द्रह बच्चियों को अक्षर ज्ञान करवाने का बीड़ा उठाया। इनकी मासिक पगार व अन्य खर्च के लिए जसकौर जी ने अपनी तनख्वाह प्रतिमाह विद्यापीठ के हेतु देना प्रारम्भ किया और यह सिलसिला आठ वर्ष तक चलता रहा।

इसके पश्चात् उन्होंने आव्हान किया कि सभी सरकारी पदों पर कार्यरत क्षेत्रवासियों का, कि वे अधिक नहीं किन्तु अपनी मासिक आय में से एक दिन का भाग विद्यापीठ निर्माण हेतु दान में देवें। उनकी इस अपील का प्रभाव यह था कि ना केवल सवाई माधोपुर वरन् करौली व दौसा क्षेत्र के सरकारी कर्मचारियों ने भी अपनी एक दिन की आय सहर्ष दान की।

वर्ष 1994 व 1995 का पूर्वार्द्ध जसकौर जी ने विद्यापीठ के लिए जन-समर्थन व सहयोग जुटाने एवँ शिक्षा के उद्देश्य के लिए जन चेतना जगाने में तो काम लिया ही, साथ ही साथ विद्यापीठ हेतु शिक्षा का स्वरूप तय करने व जनजाति महिला विकास संस्थान के अन्तर्गत् आने वाले अन्य कार्यों में भी वे लिप्त रहीं।

उनके स्वयँ के कार्यालय के कार्य व संस्थान के कार्य एक-दूसरे के पूरक थे। समस्त कार्यों में सामन्जस्य बैठ पाता था, तो इसका कारण था कि समस्त मार्गों का एक बिन्दु पर आकर पहुँचना। उनका उद्देश्य था कि शिक्षा से वंचितों के लिए शिक्षा सुलभ करवाना। नारी के विकास की गति बढ़ाने के लिए नारी के पैरों के नीचे कुण्ठाओं का दलदल नहीं, विश्वास व उत्साह का सुदृढ़ आधार चाहिए। अपने इसी विचार से वे निष्ठा के सथ जुड़ी रहीं। उनका विश्वास रहा कि विकास का पुष्प किसी भी शाखा पर खिले, उसकी जड़ शिक्षा ही है। अतः जागृत, सजग, चैतन्य जीवन व्यतीत करने हेतु अकर्मण्य, निष्चेष्ट पड़े रहकर सपने देखना मार्ग नहीं है, चेष्टा करना मार्ग है। साथ ही कौन सी राह पकडूँ? क्या करूं? वह करूं? या यह करूं? जैसे प्रश्नों में समय व्यर्थ करने के स्थान पर ''एकै साधै सब सधै'' पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है। उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निचोड़ किसी भी कार्य को करते हुए उनकी लगन, कार्य के प्रति उनकी निष्ठा व लक्ष्य के प्रति उनकी एकाग्रता में स्पष्ट परिलक्षित होता है। उनके इस अभियान के अन्तर्गत् वह जहाँ कहीं भी जातीं ज्ञान को विविध स्वरूपों में प्रस्तुत करतीं। समाज में होने वाली चर्चाओं में वे बाल श्रमिकों की अवस्था, उनकी शिक्षा व्यवस्था, जन जागृति, जन स्वास्थ्य, जनसंख्या आदि विषयों पर बोलना नहीं भूलतीं। स्वयँ प्रकृति से अगाध प्रेम होने के कारण जन-जन को पेड़-पौधे, पशु-पक्षियों व सम्पूर्ण पर्यावरण की रक्षा का महत्व समझना उनके लिए बिसार देने जैसी बातें ना थीं। यह सब किसी औपचारिक कार्यकलाप की भाँति नहीं था, वरन् यह उनके हृद्य की गहराईयों से निकले उद्गार होते थे।

महिलाओं के लिए स्वयँ सहायता समूहों का गठन कर उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाना संस्थान के उन प्रमुख कार्यों में से एक था, जिससे जसकौर जी को परिस्थितियों में सुधार की अपेक्षा थी। बिना किसी आर्थिक स्वतन्त्रता के स्त्री कभी अपनी पराधीनता की बेड़ियों को काटकर नहीं फेंक पाएगी, यह कटु सत्य है। विद्यापीठ के पाठ्यक्रम में वे इन सभी समाज सुधारक विषयों का समावेश चाहती थी। कृषक परिवारों से आने वाली

बालिकाएँ अपनी धरती से व उसके संस्कारों से सदैव जुड़ी रहें। अपने समाज व देश के प्रति अपने योगदान के सन्दर्भ में जागरूक रहें। जड़ों से उखड़कर बड़े से बड़ा वृक्ष भी अन्त में सूख जाता है। उसी प्रकार अपनी जड़ों से इस भावी पीढ़ी को अलग करना देश के आने वाले भविष्य को अन्धकार के मार्ग पर मोड़ देने के समान है। बालिकाओं की शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जहाँ सामाजिक, साँस्कृतिक मूल्यों का पोषण, सम्वर्द्धन हो व रूढ़िवादिता का दमन। उन्हें उस राजहंस की भाँति गुणी होना होगा, जो दूध में से पानी को पृथक करने की सूझबूझ रखता है, अन्यथा स्वयँ विकास के मार्ग पर आगे निकलकर पीछे छूट गए अपनों को तुच्छ समझ छोड़ देना मनुष्य की एक ऐसी असन्तुलित और अदूरदर्शितापूर्ण नीति है, जिसके कारण हर युग में एक समाज पिछड़ों व दलितों के नाम से जाना जाता रहा है। अपनी जड़ों की ओर देखकर अपने मूल अस्तित्व से जो लज्जा का अनुभव करते हैं, वह महानता का नहीं कुण्ठा का मार्ग चुनते हैं। व्यक्तित्व पर पड़े प्रश्न चिन्हों का बोझ उनके विकास में बाधा बनता है। जिस प्रकार अद्वितीय रूपवान मयूर अपने नृत्य से सभी को वशीभूत कर लेता है, किन्तु स्वयँ अपने पैरों के कुरूप होने पर ही ध्यान केन्द्रित रखता है और विलाप करता है। सम्भवतः यदि वह अपने पैरों को असुन्दर ना समझता तो जग उसके पंखों के रंगों से अधिक सम्मान उसके उन पैरों को देता, जिनसे वह इतनी सधी हुई गति और मोहक चाल का संचालन करने में सक्षम है।

विद्यापीठ में आने वाली हर बालिका विकास के मार्ग से वंचित, गाँव में बसने वाले अपने परिवार व जीविकोपार्जन के लिए उनके द्वारा किए जाने वाले कार्य के प्रति सदैव सम्मान का भाव रखें, यह उनकी शिक्षा का अर्थ होना चाहिए। वह जीवन व्यतीत करने के एक परिष्कृत् ढ़ंग को सीखे और सिखाए, तभी उसके शिक्षित होने का औचित्य है, अन्यथा अलगाव पैदा करने या किसी भी स्तर पर मनुष्य, मनुष्य में अन्तर कर देने वाली शिक्षा का कोई लाभ नहीं। हस्तकला, पशुपालन, पर्यावरण संरक्षण, घरों का स्वच्छ रख-रखाव, कृषि सम्बन्धित कार्यों का ज्ञान उनके सपनों की शिक्षा व्यवस्था के अनिवार्य अंग थे। इसी के बल पर वे ग्रामीण पृष्ठभूमि से आई बालिकाओं के भविष्य में आत्मनिर्भरता की अधिकाधिक सम्भावनाएँ उत्पन्न करना चाहती थीं।

इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली के निर्माण में उन्हें सहयोग करने सामने आई, शिक्षा विभाग में उप निदेशक के पद से सेवानिवृत्त सुश्री कमल केसकर। मूलतः महाराष्ट्र की सुश्री केसकर के व्यक्तित्व व जीवन में सादगी, आत्मनिर्भरता, बुद्धि कौशल, श्रम व त्याग कूट-कूटकर भरा है। वह एक सजीव विद्यास्थली है। सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने अपना समय व अनुभव शिक्षा के प्रचार-प्रसार में अर्पित कर देने का निर्णय लिया था व इसका प्रारम्भ उन्होंने ग्रामीण महिला विद्यापीठ में प्रधानाचार्या का पद स्वीकार कर किया। विद्यापीठ के बाल्यकाल को उनके अनुभव का पालन-पोषण प्राप्त हुआ, जिसके कारण उसकी उन्नति की सुनिश्चितता बढ़ गई।

वह 1995 के मई मास का बीसवां दिन था, जब सूर्य की प्रथम किरण अशिक्षा के अन्धकार को चीरती शिक्षा के चिर-स्थायी उजाले का सन्दे । लेकर आई। मैनपुरा गाँवमें पीर बाबा की पहाड़ी की पथरीली तलहटी में सुबह सवेरे से सफेद धोती-कुर्ते में कन्धे पर अंगोछा लिए ग्रामीण ट्रैक्टर, बस व जीपों से उतर रहे थे, मानो अनुष्ठान के लिए एकत्रित हुए हों। रंग-बिरंगी ओढ़नियों में सजी-संवरी ग्रामीण महिलाओं की टोलियां गीतों के गुंजार के साथ स्थान-स्थान से बढ़ी चली आ रही थीं, देखकर आभास होता था, जैसे कोई मंगल उत्सव है। प्रसन्न मुखमण्डल लिए बालक-बालिकाएँ समस्त क्रिया-कलापों से अनभिज्ञ यह सोच खेलने में मगन थे कि माता-पिता सम्भवतः कोई मेला दिखाने लाए हैं।

पीर बाबा की पहाड़ी, मैनपुरा (मई,1995)

www.archanameena.com

यह मेला, यह उत्सव, यह अनुष्ठान एक ऐसे समाज का था, जिसके मुक्त हृद्य से दिए हुए दान ने अशिक्षा की बेड़ी में बंधी हुई बेटियों को अज्ञान से उत्पन्न संकीर्णता से लड़ने की दिशा में अग्रसर किया। यह एक यज्ञ था, शिक्षा का महायज्ञ, जिसकी प्रज्जवलित अग्नि की प्रथम चिन्गारी उस समाज ने सुलगाई थी, जिसे यह तक पता ना था कि आहूति के लिए उसके पास कुछ है भी या नहीं। वही समाज उस दिन कण-कण जोड़कर विद्यापीठ की अपनी भूमि पर, अपने भवन की आधारशिला रखने एकत्रित हुआ था। किसी सुखद स्वप्न के वास्तविकता में रूपान्तरित हो जाने की प्रसन्नता से उपजा उल्लास, उत्साह प्रत्येक हृद्य को हर्ष के अतिरिक्त स्पन्दनों से भरे दे रहा था।

चुनौतियाँ अधिकाँशतः हृद्य को व्याकुल कर देती हैं। व्यक्ति विजय-पराजय के विचारों में डूबता-उतरता रहता है, किन्तु चुनौतियों को जीत वही पाता है, जिसके मानस में संशय नहीं होता। जसकौर जी के समक्ष इस यज्ञ को पूर्णाहूति तक ले जाने की चुनौती थी। जन-जागरण से उपजे इस भावनात्मक वेग के सम्मुख अकेली वहीं खड़ी थी, जो विश्वास उनके प्रति जन-जन ने प्रकट किया था, उस पर खरा उतरना एक अग्नि परीक्षा थी। किन्तु इस चुनौती में ही उनकी मानसिक शक्ति का उद्भव छिपा था। उन्हें बोध था कि यही चुनौती उनके जीवन का लक्ष्य है। ''सर्वे भवन्तु सुखिनः'' के अतिरिक्त उनकी ईश्वर से कोई प्रार्थना नहीं थी। ज्ञान का सूर्य जो उस दिन उगा था, वह सभी के लिए सुख का रश्मि पुन्ज था। सभी से मिल आत्म-संतुष्टि भरे क्षणों को सहजता से उन्होंने बाँटा और जसकौर जी के जीवन के सबसे कठिन किन्तु सबसे आत्म-संतुष्टिदायक कार्य का शिलान्यास अति उल्लासपूर्ण वातावरण में परम् पूज्य सन्त स्वर्गीय बाबा जसराम जी महाराज के हाथों से सम्पन्न हुआ, जो कि मूलतः मीना जनजाति से थे और अपना योग आधारित सरल जीवन पद्धति व सूत्रों के ज्ञान और बालक समाज निश्छल स्वभाव के लिए इस क्षेत्र में पूज्य थे।

उसी दिन से निर्मल प्राकृतिक वातावरण में धरती के इस टुकड़े पर कल्पनाओं ने तीव्रता से आकार लेना प्रारम्भ कर दिया। ग्रामवासियों ने तन-मन और धन से यथा-सम्भव सच्चे अर्थों में सहयोग दिया। विभिन्न गाँवों से ईंट, पत्थर व अन्य भवन निर्माण सामग्री भरे ट्रैक्टर, ट्रक, रात-दिन चले आते। धन समाप्त होने से पहले ही कहीं ना कहीं से एकत्रित हो जाता। जसकौर जी का मासिक वेतन पूर्ण रूप से विद्यापीठ के कोष में जाता। ऐसी लगन और जुझारू इच्छाशक्ति से विद्यालय की गतिविधियाँ प्रारम्भ कर सकने योग्य निर्माण सात माह में पूर्ण हो गया और 11 दिसम्बर 1995 को विद्यालय का संचालन निजी, नव-निर्मित भवन में प्रारम्भ हुआ। भवन के आधे भाग में पठन-पाठन की व्यवस्था थी व आधे भाग को छात्रावास के उपयोग में लिया गया। विद्यालय की सम्पूर्ण सुरक्षा का उत्तरदायित्व मैनपुरा गाँव के वरिष्ठजनों ने अपने कन्धों पर ले लिया। सीमित संसाधन होने पर भी बालिकाओं की संख्या में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी होती गई। जिन गाँवों ने निर्माण में सहयोग किया, वहाँ के निवासी जसकौर जी के गाँव में आने पर अपनी बच्चियों का हाथ बिना हिचकिचाहट के उनके हाथ में थमा देते। यह कहकर कि अब उसकी माता-पिता व शुभचिन्तक सब आप ही हैं।

शिक्षा के मार्ग में बाल-विवाह, इस क्षेत्र की प्रमुख बाधा थी। अधिकाँश दस-बारह वर्ष की बालिका विवाहित थीं। उनकी शिक्षा के लिए माता-पिता व ससुराल पक्ष को समझाना-बुझाना सर्वाधिक कठिन कार्य था। कहीं दुलार से तो कहीं कठोरता से भी काम लेना पड़ता था। जसकौर जी माता-पिता के मुँह से यह सुनकर व्यथित हो उठतीं कि जिन लड़कियों को ससुराल जाना है, वह पढ़ाई-लिखाई का क्या करेंगी ? पढ़ाने-लिखाने से माता-पिता का क्या भला होगा। उन्होंने कमर कस ली कि चाहे चौदह-पन्द्रह वर्ष की बालिका प्रथम कक्षा में ही बैठेगी, वे उनका दाखिला करवाने के लिए यथाशक्ति प्रयास करेंगी।

www.archanameena.com

जिन्हें बड़े-बड़े उपदेश समझ नहीं आते, उन्हें कदाचित् एक छोटे से वाक्य से पूरी बात का मर्म समझ आ जाता है। वे बेटियों को पढ़ाने या ना पढ़ाने की डांवाडोल मनःस्थिति में पड़े माता-पिता को यही कहतीं कि तुम्हारी बेटी ससुराल से तुम्हें जब राजी-खुशी का पत्र लिखेगी तब सभी को इन्हें अक्षर ज्ञान करवाने का औचित्य समझ आएगा, इससे अधिक सोचने की आवश्यकता नहीं है। उचित हठ के समक्ष सभी को झुकना पड़ता।

अक्षर ज्ञान बुद्धि की सीमाओं पर चमत्कारी प्रभाव डालता है। यह बालिकाओं को वृहद् रूप में प्रत्येक पक्ष को समझने में सहायता देगा अतः इस लाभ से किसी को भी वंचित रख देना किसी भी कारण से उचित नहीं है। उनके तर्कों के आगे सब मौन रह जाते। क्षेत्र में उनके प्रति सम्मान व अपनापन इतना था कि घर के बड़े की भाँति सब उनकी बात शिरोधार्य कर लेते थे। खेतों की रखवाली करती, मवेशियों को चारा-पानी देती विवाहित, अविवाहित पुत्रियों को बुला परिजन तुरत-फुरत विद्यापीठ की ओर भेज उनकी जीवन दशा बदलने का प्रयास कर रहे थे।

विद्यापीठ का परिवार शनैः-शनैः उतना ही विशाल रूप लेता जा रहा था, जितना कि विशाल उसका उद्देश्य था। सीमित अध्यापिकाओं की संख्या के समक्ष असीमित लक्ष्य थे। कच्ची, मिट्टी के पिण्ड की भांति हर बालिका थी। गढ़ना कहाँ से प्रारम्भ करें, कुछ सूझता ही न था। भाषा शुद्धीकरण करें या स्वच्छता के महत्व से प्रारम्भ करें, पाठ्य पुस्तकों के पन्ने पलटें या नियमानुसार दिनचर्या पर भाषण दें, किन्तु अन्त में यह निर्णय हुआ कि स्वाभाविकता व सहजता से जो कुछ भी सीख सकती हैं, सीखें। बड़ी बहनों की भान्ति शिक्षिकाओं ने स्नेह व प्रेम से उन्हें साधारण बाल्यावस्था से छात्र जीवन में प्रवेश करवाया। जिसे जितने समय में जो कुछ समझ आया, वही उसकी पूंजी बन गया।

इन अबोध बालिकाओं को उस मार्ग का बोध होता जा रहा था, जहाँ प्रत्येक पग पर व्यक्ति कुछ ऐसा पा ही लेता है, जिससे उसके ज्ञान की पूंजी की गठरी के आकार में वृद्धि होती चली जाती है। जीवन में जब कभी आर्थिक, सामाजिक या वैचारिक रूप से व्यक्ति अभाव का अनुभव करता है, तब इसी गठरी की संचित निधि उसके प्रतिकूल समय को अनुकूल बनाने में सहायक होती है। किसी भी व्यक्ति विशेष की जीवन दिशा के निर्धारण में परिस्थितियाँ, घटनाएँ व चरित्र बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। इनके द्वारा जो प्रतिक्रिया हृद्य में उत्पन्न होती है, उसी के फलस्वरूप विचार और भाव प्रस्फुटित होते हैं और उन्हीं से प्रेरित हो व्यक्ति किसी निश्चित दिशा की ओर जाने वाले मार्ग पर कदम बढ़ाता है। उस मार्ग पर वह कितना आगे बढ़ पाया यह निर्धारित करता है, उसका मनोबल, उसकी दृढ़ इच्छाशक्ति और उसकी दूरदर्शिता।

यह जीवन का वह पक्ष है, जिसका निर्धारण बहुत सीमा तक स्वयँ मनुष्य के हाथ में है। इसके अतिरिक्त एक पक्ष विधि ने अपने स्वयँ के हाथ में रखा है, वह है व्यक्ति की सामर्थ्य का आँकलन कर उसे कुछ ऐसे ध्येय व उन तक पहुँचने के मार्ग प्रदान करना, जिनका विचार स्वयँ उसने कभी किया ना हो। सद्-व्यवहार व सद्बुद्धि से मनुष्य यश प्राप्त करता है। यशकीर्ति की सुगन्ध की गति अपयश की दुर्गन्ध के फैलने की गति से बहुत धीमी होती है। फलस्वरूप एक सच्ची निःस्वार्थ भावना की सत्यता को प्रमाणित करने के लिए प्रयासरत व्यक्ति को अनेकानेक कसौटियों पर तौलती-टटोलती समाज की दृष्टि से प्रतिपल साक्षात्कार करना पड़ता है।

वर्षों के अथक प्रयासों की यश आभा अब जसकौर जी के निकट ही सिमटकर बैठी हो, ऐसा नहीं था। इस आभा की किरणें दूर-दूर तक उनके कार्यों व कार्यों के प्रति उनके सकारात्मक दृष्टिकोण का सुगन्धित सन्देश लेकर पहुँचने लगी थी। उनके व्यक्तित्व की सादगी, उनकी लक्ष्य के प्रति निष्ठा, कर्म को आधार बिन्दु मानकर आगे

बढ़ता उनका प्रेरणादायी जीवन, भारतीय संस्कृति का पोषण करने वाली स्त्री शिक्षा व्यवस्था के प्रति उनकी लगन उन्हें समाज में उनकी कल्पना से कहीं अधिक प्रेम व सम्मान का एक ऐसा सुनिश्चित स्थान प्रदान करती जा रही थी, जिसके अनुभूति उन्हें स्वयँ भी ना थी। उनके विचार, व्यवहार व व्यक्तित्व का यदि कोई उदाहरण सम्भव था, तो वह फैले, पसरे सुनहरे खेतों की मिट्टी में उग आया एक सुन्दर जंगली पुष्प ही हो सकता था। मनमोहक रंग व मनमोहक गन्ध का स्वामी। सुगन्ध ऐसी जो मिट्टी की सुगन्ध से मिल जाए और अस्तित्व ऐसा जो ठिठुरन भरी सर्दी और तपती लू में समभाव खिला रहे। नष्ट होते-होते अंशभर अनुकूलता से पुनः दो दिन में हाथ भर प्रस्फुटित हो जाए। रहे तो धरती के प्रति वचनबद्ध, किन्तु दृष्टि आसमान की छाती में गढ़े नक्षत्रों से भी परे लक्ष्य खोजती हो। प्रकृति ने जो जीवट उस पुष्प को प्रदान किया, उसकी परख उसी को हो सकती है, जो धरातल पर चलता है और अपनी मिट्टी से जुड़ाव रखता है।

www.archanameena.com

कुछ ऐसा ही हुआ, जब तत्कालीन शिक्षा मंत्री श्री गुलाबचन्द्र कटारिया जी ने बालिका शिक्षा के उद्धेश्य के प्रति जसकौर जी की निष्ठा, लगन व प्रण को पहचाना। अपने समाज के पिछड़ेपन के कारण को पहचान उसकी जड़ तक पहुँच, उसे समूल उखाड़ फेंकने का उनका जुनून प्रशंसनीय था।

जसकौर जी के कार्य, उनके व्यक्तित्व एवँ लोकप्रियता की चर्चा राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमंत्री स्व. भैरोसिंह जी शेखावत तक कटारिया जी के द्वारा पहुँच चुकी थी।

माननीय श्री भैरोसिंह जी शेखावत भारतीय मूल्यों के प्रबल समर्थक व संरक्षक होने के साथ-साथ कर्मठ और जुझारू व्यक्तित्वों के सच्चे पारखी के रूप में भी जाने जाते थे। जसकौर जी की कोई राजनीतिक पृष्ठभूमि नहीं थी, ना ही भारतीय जनता पार्टी से जसकौर जी का कोई सीधा जुड़ाव था। किन्तु प्रारम्भ से ही वे इस वृहद् परिवार के साँस्कृतिक मूल्यों, भारत और भारतीयता के प्रति उनकी सटीक वैचारिक अभिव्यक्ति व नारी के प्रति उनके सम्माननीय दृष्टिकोण के साथ-साथ उनके समस्त कार्यकलापों से स्वयँ का जुड़ाव अपने अन्तर्मन में निरन्तर अनुभव करती थीं। लालसोट के अपने छोटे से कार्यालय से लेकर उन्हें अनेक बार राजनीति की ओर मोड़ने के प्रयास किए गए, किन्तु वे अपने लक्ष्य तक स्वयँ को सीमित रखना चाहती थीं, ताकि उनके कार्यों के साथ सम्पूर्ण न्याय हो सके। साथ ही उनका विचार था कि जो कार्यपद्धति व जीवनशैली उनकी है, उसके रहते वे सम्भवतः स्वतन्त्र रूप से ही कार्य करें, तो उचित होगा। राजनीतिक क्षेत्र को दूर बैठे व्यक्ति के लिए समझ पाना असम्भव कार्य है और जो भी समझ ना आए, उस क्षेत्र विशेष के प्रति संशय का भाव होना स्वाभाविक सी बात है। राजनीति में प्रवेश के लिए प्रेरित करने वाले स्वर पहले यदा-कदा ही सुनाई पड़ते थे, किन्तु अब जसकौर जी के लिए निरन्तर आते इन स्वरों से ध्यान हटा पाना सम्भव ना रहा।

विनम्रता से अपनी असमर्थता वे सभी को बता देती थीं, किन्तु माननीय श्री भैरोसिंह शेखावत जी प्रथम ऐसे व्यक्तित्व थे, जिन्होंने जसकौर जी को यह आभास करवाया कि राजनीति का अर्थ, लक्ष्य व उद्देश्य सामाजिक हित के कार्यों में व्यवधान स्वरूप या समाजसेवा से परे हो, ऐसा नहीं है। यह सभी कार्य क्षेत्रों की भांति एक ऐसा कार्यक्षेत्र है, जिसमें आप पर ही निर्भर है कि आप कौनसा पथ चुनते हैं। सरलता और सहजता का अथवा जटिलता व कुटिलता का। यह किसी भी सामाजिक कार्य को करने का एक सर्वश्रेष्ठ मंच है, जहाँ आप बहुत व्यापक सन्दर्भ में किसी विचार को उठा सकते हैं, व जन-जन तक उसे पहुँचा सकते हैं। निःस्सन्देह यहाँ दायित्वों का निर्वहन कठिन है, किन्तु असम्भव नहीं। त्रुटियाँ आमजन की भांति राजनीतिज्ञ से भी होती हैं, किन्तु आमजन की भांति उसे क्षमा सरलता से नहीं मिलती। जिन्हें स्वयँ के मनोबल, चरित्र, लक्ष्य को लेकर संशय नहीं है, उन्हीं के लिए यह क्षेत्र बना है। जिसका कहा उसकी आत्मा व हृदय मानते हैं, उसी का कहा जन-जन भी मानता है। राजनीतिक जीवन में साधारण, असाधारण सभी के लिए स्थान है, किन्तु सामान्यजन का नेतृत्व करने लिए उन्हें प्रतिपल यह स्मरण रखना होता है कि वह जिनके प्रतिनिधि हैं, उनकी अपेक्षाओं की कसौटी पर खरे उतरने के लिए प्रथम स्वयँ की कसौटी पर स्वयँ को परखना अति आवश्यक है। इस मार्ग पर बहुत कुछ पाने की आकाँक्षा रखने के स्थान पर बहुत कुछ त्यागने का बल हृदय में होना चाहिए।

www.archanameena.com

आयु, क्षेत्र, जनाधार, योग्यता व इच्छाशक्ति ये मूल तथ्य जितने आवश्यक हैं, उतने ही आवश्यक उपरोक्त तथ्य भी हैं, जिनका आंकलन राजनीति में प्रवेश से पहले करना आवश्यक है। सम्माननीय, अनुभवी नेता के दिशा–निर्देशन से जसकौर जी के मनोबल में वृद्धि हुई, किन्तु निर्णय छोटा ना था। वे मूलतः स्वयँ को एक साधारण महिला मानती थी, जो मात्र अपने जीवन में कुछ उद्देश्यों के प्रति वचनबद्ध है। वह आत्मा से आज भी मण्डावरी गाँव के एक अनपढ़ किसान पिता की वही पुत्री हैं, जिसे पिता ने मनोबल का हल हांककर आशाओं के बीज बोना सिखाया था। उन्होंने जीवन भर उसी फसल की रखवाली और पालन–पोषण किया है। आज उनका निर्णय कहीं इस फसल के दानों से उनके समाज को वंचित ना कर दे, कहीं उनका लक्ष्यभेदी तीर लक्ष्य से चूक ना जाए। स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वावलम्बन, स्त्री की साँस्कृतिक मूल्यों पर पकड़, स्त्री की वैचारिक शक्ति को समाज में प्रवाहित करना ही उनका लक्ष्य था।

वह कलम के रूप में स्त्री को वह बल देना चाहती थीं कि स्वयँ के चारों ओर युगान्तर से चली आ रही लक्ष्मण रेखा खींचने की बुद्धि, सामर्थ्य व अधिकार स्वयँ उसी के हाथ में हो, ना कि किसी और के। राजनीति उनके इन उद्देश्यों की पूर्ति में बाधक रहेगी या सहायक बनेगी, यह निर्णय निःस्सन्देह सरल ना था। उनका विद्यापीठ, उनके सहायक व्यक्ति, सहयोगी रहे ग्रामीणजन यदि कल को उनके पास समयाभाव रहा तो उत्साह की ज्वाला को इसी प्रकार प्रज्जवलित रख पाएंगे अथवा नहीं। वे किसी भी कार्य को हाथ में तभी लेती थीं, जब उसकी पूर्णता के प्रति स्वयँ को वचनबद्ध कर लें और आश्वस्त हो जाएं। राजनीति में प्रवेश भी उसी सीमा रेखा के भीतर था। वहाँ भी पूर्ण निष्ठा के साथ वे कार्य करेंगी, यह भी वे जानती थीं। अतः तब तक इस क्षेत्र में उतरना नहीं चाहती थी, जब तक कि भावी जीवन में जलने वाला प्रत्येक दीप उनके महायज्ञ की ज्वाला का भाग ना हो। सभी भिन्न–भिन्न उद्देश्यों के साथ राजनीति में आते हैं, किन्तु प्रवेश के पश्चात् उस उद्देश्य से भटकाव की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। स्वयँ के मनोबल पर विश्वास व लक्ष्य के प्रति अखण्ड निष्ठा ही व्यक्ति को उस भटकाव से बचा सकती है, जो पूरे मार्ग पर उसे भ्रमित करने के लिए उपस्थित है। वैचारिक मन्थन से ही अन्ततः अमृत फल के समान लाभकारी परिणाम तक पहुँचा जा सकता है।

www.archanameena.com

जसकौर जी ने जीवन के अनेक वर्ष स्त्री की विपरीत परिस्थितियों के लिए उत्तरदायी अशिक्षा को मूल से उखाड़ फैंकने के लिए लगाए थे। यह कार्य किसी एक से सम्पूर्ण हो जाए ऐसा असम्भव था। इसके लिए उन्हें निरन्तर जन सहयोग अपेक्षित था। संवेदनशीलता की आवश्यकता इस कार्य में पग–पग पर थी। ऐसे संवेदनशील हृद्य न जाने कितने थे, किन्तु उन तक पहुँचने का कोई मार्ग नहीं था। उन सभी तक अपने विचार और उद्देश्यों की जानकारी पहुँचाने का सही मार्ग चुनना होगा। शक्ति के कई रूप हैं। जनशक्ति उसका सबसे प्रबल रूप है। वही जनशक्ति अभी तक के उनके द्वारा किए गए कार्यों का आधार थी। अब उसमें शासन, प्रशासन के सहयोग की शक्ति को जोड़ देने का समय आ गया था। राजनीति में प्रवेश के लिए मानस बनाने का एक अन्य पक्ष भी था और वह था राजस्थान की महिलाओं का राष्ट्रीय मंच पर अभाव। शिक्षा जागरूकता से वंचित इस क्षेत्र से महिलाओं को अवसर बहुत कम थे। परिणामस्वरूप नेतृत्व के अभाव को योग्यता का अभाव मान लिया जाता था। सुप्तावस्था में न जाने कितने ज्वालामुखी दबे थे। अनुकूल परिस्थितियों में स्फुटित होने की प्रतीक्षा में अनगिनत बीज स्थान–स्थान पर मिट्टी की परतों में ढ़के थे। एक स्पन्दन पैदा करना यहाँ आवश्यक था। एक मार्ग दिखा देना पर्याप्त था। इसके पश्चात् योग्यता को खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। ज्वालामुखी से निकले लावे की भाँति, बीज से फूटे अंकुर की भाँति योग्यता स्वयँ अपना मार्ग सुनिश्चित कर लेगी।

निर्णय लिया जा चुका था। 30 जून 1999 को परियोजना निदेशक (सवाई माधोपुर) के पद से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले, उन्होंने सर्व-सम्मति से भारतीय जनता पार्टी की सदस्यता ग्रहण की। वर्षों तक जसकौर जी व बालिका शिक्षा सवाई माधोपुर जिले में एक-दूसरे का पर्यायवाची बने रहे। शिक्षकों व विभाग से जुड़े सभी व्यक्तियों के लिए उनसे अलग होना इतना सरल ना था, किन्तु इस सेवानिवृत्ति के साथ शिक्षा विभाग का गौरव भी जुड़ा था। एक शिक्षक जो अप्रत्यक्ष रूप से नेतृत्व के गुणों का निर्माण करता है। यदि प्रत्यक्ष नेतृत्व करें तो निःस्सन्देह देश के लिए गौरव का विषय है। यही विचार था, जिससे प्रेरित होकर विभाग से संलग्न सभी जनों ने उनसे विछोह के दुःख को हृद्य में दबा उन्हें प्रोत्साहन भरे शब्दों व गौरवान्वित अनुभूति व शुभकामनाओं के साथ विदा किया। सदस्यता ग्रहण करने के पश्चात् उनका पार्टी के नेतागणों, पदाधिकारियों व कार्यकर्ताओं से भेंट का क्रम चला। वे राजनीति में नई थीं। राजनीतिक माहौल का प्रत्येक पक्ष उनके लिए नवीन था। वर्षों से राजनीतिक कार्य-कलाप को संचालित करने वाले राजनीति के प्रत्येक पक्ष से संलग्न नेतागण से लेकर कर्मठ जुझारू कार्यकर्ताओं तक किसी ने जसकौर जी का स्वागत हृद्य में संशय लेकर नहीं किया। किसी की भी वाणी में कहीं उन्हें हतोत्साहित करने वाले निराशाजनक उद्गार ना थे। उनके शान्त, सरल, सादगी भरे व्यक्तित्व व प्रसन्नचित्त मुखमुद्रा के साथ उनकी आँखों में झलकता विस्मित कर देने वाला आत्मविश्वास व दृढ़ निश्चय का भाव देखने वाले को एकाएक उनकी योग्यता पर श्विास करने के लिए आश्वस्त कर देता था। उनकी बातों में सकारात्मक ऊर्जा होती थी। उनके भावों में सच्चाई कूट-कूटकर भरी थी। एक ऐसी सच्चाई जिसकी साक्षी विगत् तीस वर्ष का अथक परिश्रम देता था। जन-जन के साथ जुड़ी उनकी मानसिकता, उनके विचारों को वह प्रवाह देती थी कि उनकी अभिव्यक्ति किसी भी रूप में निरर्थक नहीं होती थी। उनके व्यक्तित्व का सर्वाधिक आकर्षक पहलू यह था कि उनसे मिलकर किसी व्यक्ति को भी जीवन के नकारात्मक पक्ष या असफलताओं की छाया दिखाई ही नहीं देती थी। कोई उनके विचारों से सहमत हो या ना हो, किन्तु वह यह अवश्य अनुभव कर लेता था कि जीवन जसकौर जी के लिए प्रयासों और उनके फलीभूत होने अर्थात् सफलताओं का दूसरा नाम है। यह सफलता पूर्ण सफलता है या आँशिक, वे इससे अधिक प्रभावित नहीं होती थीं। उनके लिए सफल होने का अर्थ प्रयास में निरन्तर लगे रहना था। उनसे यदि प्रश्न पूछा जाता कि जीवन हर्ष है या विषाद, तो वह कहतीं हर्ष। उनसे यदि यह कहा जाता कि उन्हें जीवन में भलाई अधिक देखने को मिली या बुराई? तो वह बिना अधिक समय लिए कहतीं, ''निःसन्देह भलाई''।

इसका कारण स्पष्ट है कि उन्होंने जीवन को अपने सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ जिया। उन्हें जीवन में जुड़ने वाले प्रत्येक व्यक्ति के गुणों से काम था और वही उन्होंने देखे। उन्हीं को प्रोत्साहन दिया, उन्हीं से प्रोत्साहन लिया। श्रम यदि अंशमात्र भी फलीभूत हुआ तो उन्होंने उसकी प्रेरणा से उस अंशमात्र पर ही निरन्तर स्वयँ को एकाग्रचित्त किया और उसे सौ प्रतिशत तक पहुँचाने के प्रयास में अपना समय लगाया। इसी सरल व सटीक कार्यशैली व उसकी अभिव्यक्ति के कारण वे राजनीति के अपने नवीन कार्यक्षेत्र में सभी से अलग दिखाई देती थीं। किन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपने वरिष्ठ नेताओं का विश्वास जीत लिया। माननीय श्री भैरोसिंह जी शेखावत के राजनीतिक कद से सभी परीचित थे। उनके आशीर्वाद व मार्गदर्शन ने जसकौर जी को आत्मबल व आत्मविश्वास प्रदान किया। राजनीति जैसा नितान्त नया क्षेत्र होने पर भी अब उनके मन में किसी प्रकार का संशय शेष नहीं बचा था।

1999 का सितम्बर माह आया और लोकसभा चुनावों की घोषणा हुई। पार्टी चुनावी रूपरेखा बना तैयारियों में जुट गई। इसके साथ ही प्रत्याशियों के चयन को लेकर भिन्न-भिन्न अटकलें लगने लगी। जसकौर जी के जीवन में अति महत्वपूर्ण समय का शंखनाद हुआ, जब उनकी योग्यता में पूर्ण विश्वास व्यक्त करते हुए भारतीय जनता पार्टी ने सवाई माधोपुर लोकसभा क्षेत्र से उन्हें अपना प्रत्याशी घोषित किया। इस घोषणा से सम्पूर्ण क्षेत्र में हर्ष व उत्साह की लहर व्याप्त हो गई। ग्रामीण क्षेत्रों में तो उत्सव का सा माहौल था। जसकौर जी से जुड़ा हर व्यक्ति इस घोषणा मात्र से आत्मविभोर हो उठा। कभी चिन्तित हो सब सोचते यह तो मात्र नाम की घोषणा है, चुनाव का परिणाम तो नहीं। इतना बड़ा लोकसभा क्षेत्र है और जसकौर जी के लिए यह एक नई चुनौती है, क्या सफल हो पाएँगी ?

अर्न्तध्वनि कहती कुछ नवीन अवश्यक होने वाला है। हर्षोल्लास पुनः छा जाता। आत्मा कुछ नवीन करने को छटपटाती और सभी जन उनके समर्थन में कार्य करने जुट पड़ते। अनगिनत हाथ जसकौर जी के हाथों से काम बाँट ले गए। असंख्य कन्धे उनके कन्धों से आ जुड़े। अतुलनीय बल भर अनगिनत पैर उनकी पदचाप से पदचाप मिला चल पड़े। परम् पिता परमेश्वर से आशीर्वाद माँग जसकौर जी इन देखे-अनदेखे समर्थकों से मिलने चल दीं। चुनाव का महासंग्राम लड़ना उन्हें नहीं आता था, किन्तु वैचारिक युद्ध में नव योजनाओं, नव कल्पनाओं की धूल के बादल कैसे उठते हैं और कैसे छा जाते हैं, यह वे बखूबी जानती थीं। मतपेटियों में बन्द मतपत्रों की गिनती से कैसे जीता जाएगा, इसका उन्हें कोई विशेष भान ना था, किन्तु मानव शरीर में स्पन्दित होते हृद्यों पर छाप छोड़ना उनके लिए सहज था।

www.rajnameena.com

नामाँकन पत्र दाखिल करने का दिन आया। सवाई माधोपुर, रणथम्भौर रोड़ स्थित उनका अनुराग निवास उनके शुभेच्छु जनों से खचाखच भरा था। राजनीति जसकौर जी के लिए लक्ष्य नहीं अपितु मार्ग थी। ''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया'' का जाप उनकी दिन-प्रतिदिन की पूजा थी। वह ईश्वर का जब भी स्मरण करतीं, सबका सुख, सबकी समृद्धि के अतिरिक्त कुछ और सोच ही नहीं पातीं। इसके पश्चात् उनके हाथ एक ही प्रार्थना के लिए जुड़ते, जब वे स्वयँ के लिए मद लोलुपता, छल, कपट और दिखावे से दूर रहने का बल माँगतीं। इस दिन भी प्रातः उन्होंने सबसे पहले यही स्तुति की। नेत्र बन्द कर स्वयँ से अनगिनत प्रश्न पूछे, स्वयँ को स्वयँ की कसौटी पर परखा, जानती थीं कि राजनीति में प्रवेश व्यक्ति को शक्ति प्रदान करता है। शक्ति सत्ता तक और सत्ता मद और दिखावे तक भी ले जा सकती है। वे कृषक सुता हैं, जिसे जीवन के पाठ परिस्थितियों के अतिरिक्त अन्य किसी ने नहीं सिखाये। संसार का यह अथाह सागर और खोई हुई मछली की भाँति जैसे नवजात शिशु स्वयँ ही सीखता है, उन्होंने स्वयँ की आत्मा से ही सीखा। बाहर प्रतीक्षारत शहर और गाँव के उनके अपने लोगों के साथ नामाँकन पत्र भरने जाने से पहले उन्हें अपने आत्मबल पर वह लौहपरत चढ़ानी होगी, जो मार्ग के इन प्रलोभनों को रौंदकर उन्हें निरन्तर आगे बढ़ने का सम्बल प्रदान करें। उन्होंने पुनः स्मरण किया कि राजनीति वह मार्ग है, जिस पर चल उन्हें बालिका शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक उत्थान, जागरण, सर्वशिक्षा व आत्मविश्वास के लक्ष्यों को साधने की यात्रा को सरल और सुगम बनाने में सहयोग मिलेगा। उन ग्रामीणजनों की बात कहने के लिए वे राजनीति में उतर रही हैं, जिनकी बात राष्ट्रीय मंच पर वे लोग करते आए हैं, जिन्होंने साधारण जन की पीड़ा व समस्याएँ स्वयँ नहीं भोगी, उनके अभावों को स्वयँ नहीं जिया। जिनके लिए ग्रामीणजन एक विषय है, शरीर और आत्मा का भाग नहीं। किन्तु वे स्वयँ उनमें से एक है, वह जो स्वयँ के प्रयासों के कारण आत्मबल से परिपूर्ण हैं। विकास के लिए अग्रसर होने को तत्पर है, यही उनकी गौरव अनुभूति है। यही गौरव, यही अनुभूति उन्हें अपने समाज को प्रदान करनी है।

इसके पश्चात् अपनी वही सहज मुस्काल ले तथा भविष्य के लिए स्वयँ से कुछ शपथ पत्र मन ही मन भरवाकर वे नामाँकन पत्र भरने के लिए निकलीं। सबसे व्यक्तिगत रूप से मिलतीं, सबकी शुभकामना लेतीं वे इतनी सरल व सौम्य दिख रही थीं, मानो हृद्य की स्वच्छता उनकी मुख आकृति को पखारकर उनके चारों ओर घुल रही हो। अपार जन समूह ने अब जुलूस का रूप ले लिया। जसकौर जी अनुराग निवास से जिलाधीश कार्यालय तक सभी की शुभकामना विनीत भाव से शिरोधार्य करती हुई आगे बढ़ रही थीं। सवाई माधोपुर की वही सड़कें, वही गलियाँ और उनके चिर-परिचित लोग और वही वे स्वयँ थीं। किन्तु भावना, लक्ष्य, उत्साह सभी कुछ पहले से पूर्णतः भिन्न था। जो नहीं बदला था, वह था जन-जन का उनके प्रति सम्मान व प्रेम का भाव। आज उस भाव का अतिरेक था। जिलाधीश कार्यालय तक पहुँचते-पहुँचते उनका गला पुष्प मालाओं से लद गया। घरों की देहरी लाँघ ना जाने कितनी बेटियों, बहुओं और माताओं ने उनके मस्तक पर स्वयँ की आशाओं का तिलक सजाकर उनके विजयी होने की कामना की। आभास होता था, जैसे यह चुनाव जसकौर जी नहीं लड़ रहीं, इस क्षेत्र का जन-जन लड़ रहा है। जसकौर जी गद्गद् हृद्य से जिला कार्यालय परिसर में सबको धन्यवाद दे, सम्बोधित कर, नामाँकन भरने जिलाधीश कक्ष में गईं तो उनके हृद्य में अपार शान्ति थी। चुनाव का परिणाम जो भी हो, हार या जीत, किन्तु वे सबके हृद्य जीत चुकी थीं।

नामाँकन दाखिल करने के साथ ही क्षेत्र में चुनाव प्रचार प्रारम्भ हो गया। कठिन धूल भरे रास्ते, छोटे-छोटे गाँव, छितराई हुई ढ़ाणियाँ। यही सवाई माधोपुर लोकसभा क्षेत्र के अधिकाँश भाग का चित्रण था। प्रातःकाल घर से निकल जसकौर जी उसी प्रकार गाँव-गाँव, घर-घर जातीं, जिस प्रकार कि इससे पहले जाती रही थीं। सम्भवतः

वह अकेली ऐसी प्रत्याशी थी, जिनके लिए अपने क्षेत्र का हर कोना जाना-पहचाना था। वह स्थान-स्थान पर लोगों को सम्बोधित करतीं, उनकी भावनाएँ पहचानतीं और अपनी भावनाओं और विचारों से उन्हें अवगत करातीं। जीवन में कभी उन्हें लिखित भाषण को पढ़ने की आवश्यकता नहीं पड़ी। वो जो भी कहती, वह उनके सहज हृद्योद्गार होते। वे इस बात का उदाहरण थीं कि हृद्य में यदि बहुत कुछ हो, स्व-प्रेरणा से यदि व्यक्ति आगे

बढ़ा हो तो ऐसे विचार उपजते भी हैं और अभिव्यक्त भी किए जाते हैं, जो दूसरे के हृद्य को स्पर्श करते हैं। विपरीत इसके यदि हृद्य भावनाओं से रीता हो तो अभिव्यक्ति को भी नियोजित करने की आवश्यकता पड़ती है और आपके, विचार सुनने वाले को चिन्तन के लिए बाध्य नहीं करते। उनकी भाषा की सरलता, व्यक्तित्व की सौम्यता व अपनापन क्षेत्रवासियों के लिए मोहपाश का काम करते थे।

www.archanameena.com

जसकौर जी शिक्षक वर्ग, कर्मचारियों व महिलाओं में विशेष रूप से लोकप्रिय थीं। प्रचार के लिए जहाँ भी गईं, इन सबसे उन्हें विशेष प्रेम मिलता। उनसे मिलकर महिलाएँ स्वयँ में शक्ति का संचार पातीं, शिक्षक गौरवान्वित होते व किसान नई ऊर्जा से भर जाते। सवाई माधोपुर मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्र में बसा है, किन्तु इसमें आने वाले कस्बों में व्यापारी वर्ग भी बहुतायत से निवास करता है। इस वर्ग का समर्थन भी उन्हें प्रचुर मात्रा में मिला और इसका कारण था, जसकौर जी का समान भाव से सभी से जुड़े रहना। वे किसी जाति विशेष अथवा वर्ग विशेष की ही होकर नहीं रहीं, अपितु उस मानव समुदाय की रहीं, जिन्हें उनकी आवश्यकता थी। उनके मानस में संसाधनों के अभाव में जीने वाले व्यक्तियों का समुदाय व जाति एक ही थी। उनकी इसी प्रवृत्ति ने उन्हें सर्वप्रिय बनाया था। उनके प्रशंसकों की संख्या कितनी है, यह कभी उन्होंने नहीं गिना, किन्तु कोई भी, किसी भी क्षेत्र का हो, यदि वह स्वयँ के परिश्रम से उन्नति कर रहा हो, ऐसे बच्चे जो अभावों में संघर्ष कर पढ़-लिख रहे हों, उनकी वे स्वयँ प्रशंसक बन जाती थीं। ऐसे अनजाने कर्मयोगी लोगों को नाम से याद रखना, उनके उदाहरण स्थान-स्थान पर

देना, उनके स्वभाव में था। उन्हें स्वागत के लिए गाँवों के बाहर द्वार सजे मिलते। ग्राम-कस्बों के बाहर उनके आगमन की सूचना से लोग पलक बिछाऐ प्रतीक्षारत घण्टों खड़े रहते। कहीं गाजे-बाजे के साथ उन्हें गाँव के भीतर प्रवेश कराया जाता, तो कहीं विजय की मंगल कामना लिए उनकी आरती उतारी जाती।

इन सबसे परे उन्हें अपार सुख का

अनुभव होता, जब इन समस्त कार्यों में वे महिलाओं की भागीदारी व उत्साह का अनुभव करतीं। उनकी विजय का मार्ग प्रशस्त करने के लिए बहुत से हाथ परस्पर जुड़ गए। निष्ठावान कार्यकर्त्ता इस लगन से जुटे थे कि उनके परिश्रम व भावनाओं को देखकर कई बार जसकौर जी का हृद्य भावुक हो जाता। भोजन, पानी, घर, संसार को भूलकर सभी लोग एक ही लक्ष्य लेकर आगे बढ़ रहे थे और वह था, उन्हें भारत की सर्वोच्च पंचायत में स्थान दिलाना।

किसी गाँव की वे बेटी थी, किसी गाँव की बहू, किन्तु रिश्तों की डोर हर गाँव, हर पगडन्डी से बंधी थी। तीस वर्ष के सतत् परिश्रम से उन्होंने जो पूंजी एकत्रित की थी, वह सम्बन्धों के यह कच्चे-पक्के सूत्र ही थे। तब, जब उन्हें सर्वाधिक आवश्यकता भावनात्मक सहयोग की थी, इस पूंजी से भरी गठरी का मुँह स्वतः ही खुल गया था। उनके विरोध में उठने वाले स्वर इस उत्साह, उमंग की आँधी में तिनका-तिनका बिखर चले थे। जसकौर जी के ओजपूर्ण, ऊर्जावान भाषणों में मात्र एक ही सन्देश होता कि उनकी जीत किसी एक व्यक्ति की जीत नहीं होगी। वह प्रत्येक कृषक की जीत होगी। उस महिला की जीत जो खेतों में मूंगफली बीनती है, उस बालिका की जीत जो मुँह अन्धेरे मवेशियों और खेतों का काम कर बस्ता उठा भागती हुई विद्यालय पहुँचती है, उस किसान पिता की जीत होगी, जो परिश्रम का एक मुट्ठी अनाज दान करके अपनी पुत्री को अक्षर ज्ञान करवाता है, उस माता की जीत होगी जो अपनी लाडली का हाथ निर्भीक होकर भविष्य संवारने के लिए जसकौर जी के हाथ में दे देती है और यही जीत उनका लक्ष्य थीं।

वे भिन्न थी, उन सभी से जो चुनाव लड़ चुके थे या लड़ रहे थे। उन सभी से भी जो इस घमासान में जीत और हार का

स्वाद चख चुके थे। उनसे जो चुनावों की रणनीति में सिद्धस्त थे और जीतने के रहस्मयी सूत्र जिन्हें अक्षरशः याद थे। उनसे भी जो व्यक्तित्वविहीन, निर उद्देश्य मात्र एक नाम होते थे। वे सर्वथा विपरीत थी इन सभी के। चुनाव ना उनके लिए रण था, ना ही उन्हें जीतने के सूत्र पता थे। उनके लिए जीत-हार की दौड़ में दौड़ने के उद्देश्य उनके हृद्य की गहन पीड़ा से उपजे थे। गरीबी उन्मूलन, अशिक्षा को दूर भगा शिक्षा का अलख जगाने जैसे नारे सारे देश को स्मरण रहते हैं, किन्तु इनके अर्थों को भोगा कितनों ने है, वे जो इन परिस्थितियों में जी रहे हैं, उनके भीतर की सामर्थ्य, उनके गुण व उनके स्वप्नों को अशिक्षा कैसे लील जाती है। गरीबी कैसे उनके दौड़ते पाँवों को बेड़ियों में जकड़ लेती है, यह सब स्वयँ अनुभव किए बिना इसका मर्म समझना असम्भव नहीं तो सरल भी नहीं है। जसकौर जी ने इन्हीं परिस्थितियों की कुण्डली से अपने लोगों को सदैव घिरा पाया था। वे जीतना चाहती थी और समस्त देश का ध्यान आकृष्ठ करना चाहती थीं। मात्र इस बिन्दु की ओर कि दृढ़ निश्चय और सकारात्मक दृष्टिकोण से विषम परिस्थितियों में भी व्यक्ति आगे बढ़ सकता है। इस समाज को जो शिक्षा के अन्धकार में घिरा, अभावों के दलदल में फंसा है, सहानुभूति के नारों कि या किसी बन्द कमरे में मेज पर होने वाली बैठकों या समीक्षाओं की आवश्यकता नहीं है, अपितु शिक्षा की एक सुदृढ़ रस्सी की आवश्यकता है, जिसका सिरा पकड़कर वे उस दलदल से बाहर निकल सके। जसकौर जी के जीवन का निचोड़ था, शिक्षा। उसमें भी उनके लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी, बालिका शिक्षा। उनका अटूट विश्वास था कि प्रत्येक महिला की सफलता में कुछ गुणों का योगदान होता है, जिनमें शिक्षा, स्वाबलम्बन, स्वाभिमान, संस्कार व गरिमा प्रमुख है। समाज में फैली किसी भी बुराई से लड़ने के लिए एक बालिका को उसके बालपन से ही इन गुणों की घुट्टी देना आवश्यक है और शिक्षा उसे यह सब स्वाभाविक रूप से प्रदान करती है। स्त्री की उन्नति के बिना समाज लंगड़ाकर ही चल सकता है, दौड़ कभी नहीं लगा सकता। उनका एक ही उद्देश्य था।

''कन्याप्येवं पालनीया शिक्षणीया यत्नतः''
अर्थात् पुत्रियों का पुत्रों के समान सावधानी और ध्यान से पालन और शिक्षण होना चाहिए।

वे जीतना चाहती थी, उन आँखों को सपने दिखाने के लिए जो पुत्री के जन्म पर कोई स्वप्न नहीं देखतीं। वह जीतना चाहती थी, उस समाज के लिए जो यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि उनकी खेतों में फावड़ा, कुदाल सम्भालने वाली बेटी भारत की लोकसभा में उनके क्षेत्र के नेतृत्व की बागडोर सम्भालेगी। वे चाहती थीं कि बेटी के जन्म को दुर्भाग्य मान रोने वाली माताएँ अपनी नन्ही बच्ची के माथे पर भी कुदृष्टी से बचाने के लिए काला टीका लगाएँ, वैसे ही जैसे वे अपने पुत्र के माथे पर लगाती हैं।

जसकौर जी ने जीवन के पग-पग पर हर-सम्भव प्रयास किए थे, जिनसे बालिका शिक्षा को बढ़ावा मिले। कई बार विचारों को समझने में किसी को अधिक मानसिक श्रम ना करना पड़े, इस कारण उन्हें बहुत अधिक बोलना पड़ता था। वह अपने स्वास्थ्य का विचार ना करते हुए अपनी समस्त ऊर्जा लगा देती थीं। अब वह इस चुनाव को जीतकर एक ऐसा उदाहरण प्रत्यक्ष रखना चाहती थीं कि जिसे प्रमाण की आवश्यकता ही ना हो। वो चाहती थीं कि उन्हें देखकर हर बालिका की आँखों में चमक और ललक पैदा हो, स्वप्न जागे और इस सपने को पूरा करने के लिए वह जी-जान से जुट जाए। किसी भी क्षेत्र में वांछित लक्ष्य प्राप्ति करने वाले व्यक्ति के द्वारा, उससे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े अनगिनत लोगों की जीवन दिशा मोड़ी जा सकती है। किसी के समान प्रभावशाली बनने की महत्वाकाँक्षा कभी-कभी सुप्तावस्था में पड़ी प्रतिभाओं को झकझोर कर जगा देती है। जसकौर जी जीतना चाहती थीं, इसी प्रभाव को उत्पन्न करने और उसकी तरंगों को जन-जन तक व हर महिला तक पहुँचाने के लिए। यही कारण उनकी चुनाव जीतने की महत्वाकाँक्षा को अन्य सभी से पृथक भाव प्रदान करता था।

www.archanameena.com

उनके लिए इस चुनाव प्रचार का अविस्मरणीय भावुक क्षण था, जब उन्होंने करौली में एक प्रत्याशी के रूप में कदम रखा। इस स्थान ने उन्हें बहुत कुछ दिया था। भिन्न-भिन्न समय पर विभिन्न रूपों में आमंत्रित किया था। करौली की मिट्टी में उनके जीवन के सुख-दुख के क्षण दबे थे। सवाई माधोपुर में कोई स्थान उनकी ससुराल था, तो कोई मायका। किन्तु एकमात्र करौली थी, जो उनकी सखी थी।

जीवन के विकट क्षणों में ढ़ांढ़स देने वाली उल्लास भरे क्षणों में उनके साथ प्रसन्नता बाँटने वाली। उन्होंने जब भी यह स्थान छोड़ा, इस स्थान ने उन्हें पुनः अपने पास बुला लिया और प्रत्येक बार पहले से कुछ अधिक प्रदान करने के लिए। आज भी उन्हें करौली के जन-जन से कुछ माँगने की आवश्यकता नहीं थी। वह अपनी मीना बहन जी के लिए पलकें बिछाए बैठे थे। उनके साथ कार्य कर चुके सभी शिक्षकगण, मित्रगण उनके इस नए रूप में आने से अति उत्साहित थे। करौली से जब वे लौटीं तो समवेत् स्वर से सभी ने उन्हें यह करकर विदा किया कि वह यहाँ के चुनाव कार्य से निश्चिन्त हो अन्य स्थानों पर ध्यान केन्द्रित करें। करौली उनकी अपनी है। यहाँ के हंसते-मुस्कुराते लोगों की सहृद्यता और अपनेपन के ऋण को सर माथे पर रख उन्होंने यहाँ से विदा ली।

धुआँधार प्रचार अभियान था। भोजन की कोई सुध ना थी, ना ही यह पता था कि रात्रि विश्राम कहाँ होगा। जहाँ भी प्रेम से भोजन की थाली कोई ले आता, वे खा लेतीं। थकान से चूर होने पर भी उनकी मुखमुद्रा सदैव शान्ति और प्रसन्नता के भाव से ओत-प्रोत रहती। उनकी आँखों में लेशमात्र भी चिन्ता व तनाव की झलक नहीं थी, ना ही जीत के प्रति अति उत्साह का भाव था, ना ही हार जाने के भय की छाया। वे मगन हो अपने कार्य में पूरी लगन व निष्ठा से जुड़ी थीं। हँसती, मुस्कुराती सबसे बोलतीं, बात करतीं। जहाँ से भी वे निकलतीं अपनी अमिट छाप हर एक पर छोड़ती जाती थीं। चुनाव क्षेत्र में उनका अपना ससुराल गाँव शफीपुरा भी आता था। वहाँ का वातावरण कुछ ऐसा था, जैसे जसकौर जी नहीं, वरन् इस गाँव का एक-एक व्यक्ति चुनाव में प्रत्याशी बनकर खड़ा हो। आशाओं की नदी अपने उफान पर थी। उत्साह की प्रबल हिलोरें हृद्य में समाती ना थी। जसकौर जी के समक्ष जो भी आता, उनके मुख से अपने भोलेपन में एक ही बात निकलती, ''देखज्यो जीत आपणी ही होवैगी''।

उनमें से कुछ को तो यह भी ज्ञात नहीं था कि इस चुनाव के क्या अर्थ हैं। कमल के फूल में मोहर लगाने पर हम जीतेंगे, बस वे इतना ही जानते थे, किन्तु वह इस जीत से मिलने वाले सम्मान को पहचानते थे। उनकी आत्मा यह समझती थी कि जसकौर जी उनकी पहचान हैं। जब उन्हें जीत प्राप्त होगी, तभी उनके अस्तित्व को व सामर्थ्य को इन गाँवों और जिलों की सीमा के बाहर सम्मानीय पहचान मिलेगी।

इसी प्रकार दिन पर दिन बीतते गए और प्रचार कार्य समाप्त होकर मतदान का दिन आ गया। गाँव में स्त्रियों का उत्साह ऐसा था कि मानो कोई मेला हो। 11 सितम्बर 1999 सुचारू रूप से मतदान का कार्य सम्पन्न हुआ और मतगणना के दिन की प्रतीक्षा प्रारम्भ हो गइ। जसकौर जी का यह समय कुछ विश्राम में कटा, कुछ आत्मचिन्तन में और कुछ सभी के साथ विचार-विमर्श में। मतों की गणना से परे उनका हृद्य अब तक के जीवन में घटित समस्त घटनाओं के विश्लेषण में गहराई से डूबा रहता। वह यात्रा जो उन्होंने अकेले प्रारम्भ की थी, वह प्रथम पदचिन्ह जो उन्होंने समाज के उत्थान के मार्ग पर कदम बढ़ाते हुए छोड़ा था, उसे किसी ने नहीं देखा था। किन्तु आज उनके साथ पथ पर सैंकड़ों पदचिन्ह थे। इन पदचिन्हों की गणना में वे स्वयँ को जीता हुआ पाती थी, आज जहाँ उनकी दृष्टि जाती थी, साथ-साथ सैंकड़ों बालिकाओं की दृष्टि भी उसी ओर उठ जाती थी। स्वप्न वे देखतीं और चमक कई आँखों में कौंध जाती। वे इतना जानती थी कि उनके उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए वे आधी दूरी तय कर चुकी थीं। नारी की आँखों की इस चमक को वे उस महायज्ञ की अग्नि की प्रथम चिन्गारी मानती थीं, जो

स्त्री की अशिक्षा एवँ उसके पिछड़ेपन की आहूति देने के लिए उन्होंने प्रारम्भ किया था। उन्होंने संकल्प लिया कि जब तक यह महायज्ञ पूरा नहीं हो जाता, वह जीवन में कभी भी विश्राम नहीं लेंगी। कभी उनके जीवन में अल्पविराम भी नहीं आएगा। चाहे चुनाव का परिणाम जो भी हो, उनका उद्देश्य उनका कार्य है। उस कार्य के हेतु सर्वाधिक फलदायी मार्ग चुनना और उस पर सच्चाई व दृढ़ता के साथ आगे बढ़ते रहना ही उनका लक्ष्य है। इस लक्ष्य के अतिरिक्त और कुछ भी उनके लिए निर्णायक नहीं था।

दिनांक 6 अक्टुबर 1999 को मतपेटियों में बन्द मतों की गणना का कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रातःकाल से ही जसकौर जी के निवास पर आने-जाने वालों का तांता लगा हुआ था। सवाई माधोपुर के अधिकाँश ग्रामीण क्षेत्रों से लोग आ पहुँचे थे। हर वह व्यक्ति, जिसने दिन-रात एक कर इस चुनाव कार्य में सहयोग दिया था, वहाँ उपस्थित था। किसी शुभचिन्तक ने पूजा करवाई थी, तो किसी ने अनुष्ठान। प्रत्येक ने मन ही मन कुछ संकल्प ले रखे थे, जिन्हें जसकौर जी की जीत के पश्चात् वे पूरा करने लिए तत्पर थे। मतगणना केन्द्र पर टेलीविजन के सामने बिना पलकें झपकाए लोग बैठे थे। पल-पल की खबर, घटत-बढ़त के अन्तर, एक-दूसरे को सुनाने के लिए हर कोई उतावला था। मतों की गिनती के साथ-साथ सभी का उत्साह भी बढ़ रहा था। जसकौर जी ने एक बार बढ़त ली और वह अन्तर बढ़ता गया। सायँकाल आते-आते तक परिणाम घोषित हो गया।

एक किसान की बेटी, संसार के सबसे बड़े लोकतन्त्र की सर्वोच्च पंचायत में अपना सम्माननीय स्थान सुनिश्चित कर चुकी थी।

मतगणना केन्द्र पर तत्कालीन जिला कलक्टर ने जसकौर जी को विजयी घोषित किया। केन्द्र सवाई माधोपुर सीमेन्ट फैक्ट्री स्थित साहूनगर स्कूल था। उसके बाहर प्रातःकाल से खड़े प्रतीक्षारत जनसैलाब ने घोषणा होते ही जयघोष से आसमान गुंजा दिया। हर्ष की ध्वनि ने नगाड़े और ढ़ोल की ध्वनि के साथ मिलकर एक ऐसा स्पन्दन उत्पन्न कर दिया, जो हर हृद्य में समाहित हो गया। ग्रामीणों के उत्साहित मुखमुद्राओं की व्याख्या कोई क्या करे, परस्पर गले मिलते एक-दूसरे को बधाई देते ऐसे प्रतीत होते थे, जैसे जसकौर जी की जीत उनके जीवन की सबसे बड़ी खुशी हो। विभिन्न गाँवों से आए लोग जो एक-दूसरे को पहचानते भी नहीं थे, मिलकर इस प्रकार नाच रहे थे, जैसे एक ही परिवार के सदस्य हों। उन सभी को एक ही सूत्र में जोड़ा हुआ था, जसकौर जी ने। मतदान केन्द्र से बाहर आ, उन्होंने सभी का अभिवादन किया। मुखमण्डल पर वही चिर-परिचित संतुष्टि का भाव लिए उन्होंने

सभी को हृद्य से धन्यवाद दिया। इस भीड़ ने एक बड़े जुलूस का रूप ले लिया था। चारों ओर से लोग एकत्रित होते गए। सवाई माधोपुर के स्थानीय लोग, महिलाएँ व परिजन सभी प्रसन्नता व उत्साह के अतिरेक से भरे हुए थे। इस विशाल जनसमूह को दृष्टि भर देखने के बार जसकौर जी ने पलभर को आँखें मूंद उस परम्पिता को धन्यवाद दिया, जिसने उन्हें इन सभी अपेक्षाओं पर खरा उतरने की शक्ति प्रदान की थी और स्मरण किया अपने माता-पिता व अपनी सास किशन बाई का।

माता-पिता की उपस्थिति इस अपार जनसमूह के मध्य उनकी आत्मा को अनुभव हो रही थी। नाचते-गाते, गुलाल उछालते लोग आगे बढ़ रहे थे। इस जुलूस में कदम-कदम पर लोग जुडते चले जा रहे थे। घरों से निकल महिलाएँ उनको देखने और तिलक, आरती करने खड़ी थीं। मिठाई की दुकानों पर दुकानदारों ने सजाकर रखी सभी मिठाईयाँ जुलूस में शामिल लोगों में बाँट दी। रोली के तिलक से उनका माथा भर गया, गले में पुष्पहार थे। वे सौम्य मुस्कुराहट बिखेर सबके सामने हाथ जोड़ देतीं। उनका व्यक्तित्व अत्यन्त गरिमामयी लग रहा था, जैसे शरद् ऋतु का चन्द्रमा होता है, शीतल व सम्पूर्ण।

जसकौर जी को अपार संतुष्टि थी कि वह पार्टी के अपने वरिष्ठजनों के विश्वास की कसौटी पर खरी उतरी हैं। एक जड़ों से जुड़ी विचारधारा वाला संगठन ही एक जड़ों से जुड़े व्यक्ति का मूल्य समझ सकता था। भारतीय जनता पार्टी के मूलभूत सिद्धान्त व कार्यप्रणाली जसकौर जी के विचारों के साथ सहजता से एकाकार हो गई थी। बड़े पदों पर बैठे नेतागण भी भाई-बहिनों की भाँति शुभेच्छु और मित्रों की भाँति सहयोगी थे। जीत के पश्चात् उन्हें सभी से बधाई सन्देश प्राप्त हो रहे थे। आने वाले समय में उन्हें सभी का मार्गदर्शन प्राप्त करना था। पार्टी ने उन्हें जो राष्ट्र स्तरीय पहचान दी थी, उसकी कसौटी पर खरा उतरने के लिए स्वयँ की ओर से कोई कमी वे नहीं छोड़ना चाहती थी। निःस्वार्थ कार्य करना, उनका जीवन मंत्र था। अब जो भी कार्य पार्टी उन्हें प्रदान करेगी व जो भी अपेक्षा उनके क्षेत्र के लोगों की उनसे होगी, उसे सम्पूर्णता देना, उन्होंने अपना कर्त्तव्य मान लिया था।

औपचारिक-अनौपचारिक भेंटों का क्रम कई दिनों तक चलता रहा। इसके पश्चात् समय आया, दिल्ली प्रस्थान का। सवाई माधोपुर से वे रेलमार्ग से दिल्ली रवाना हुईं। स्टेशन पर उन्हें शुभकामनाओं के साथ विदा देने के लिए अनेक स्वजन एवँ स्थानीय निवासी उपस्थित थे। गद्गद् हृद्य से सभी के प्रति आभार व्यक्त कर वे अपने गंतव्य

की ओर चल पड़ीं। दिल्ली पहुँचकर वरिष्ठ नेतागणों व अन्य नव-निर्वाचित संसद सदस्यों से भेंट हुई। जसकौर जी के लिए जीवन के इस अध्याय में प्रतिपल नवीन पृष्ठ खुलते जा रहे थे। बहुत कुछ सीखना व समझना शेष था, किन्तु उनके गुणों में दो गुण ऐसे थे, जो उन्हें प्रत्येक पल सजग रखते थे और वे थे अद्वितीय आत्मविश्वास व दृष्टिकोण में सकारात्मकता।

वे जितने नव परिचित साथियों से मिलीं, सभी पर उनके सहज ऊर्जावान व्यक्तित्व की गहरी छाप पड़ी। राजनीति के चक्रव्यूह की सीमा में प्रथम बार प्रवेश इतने आत्मविश्वास से करना सरल नहीं है, यह सभी अनुभवी वरिष्ठगण जानते थे। इसके लिए स्वच्छ व प्रपंचों से निर्लिप्त अन्तःकरण होना आवश्यक है। कर्म के प्रति ईमानदारी व लक्ष्य के प्रति गहरी प्रतिबद्धता ही यह आत्मविश्वास और सहजता उत्पन्न कर सकती है।

वह दिन भी आ गया, जब उन्हें भारत के संसद भवन में प्रवेश करना था। प्रातःकाल ईश्वर का स्मरण कर वे संसद भवन के लिए रवाना हुईं। भारत देश की संसद की विशालता, उसके भवन से कहीं अधिक उसकी गरिमा में छिपी है। उनका हृद्य एक अनूठे अविस्मरणीय अनुभव से भर गया। करौली के लाल पत्थरों के विशाल स्तम्भों के बीच प्रवेश द्वार था। उसी लाल पत्थर की सीढ़ियाँ और उन सीढ़ियों के दोनों ओर पत्रकारों का हुजूम, जो नव-निर्वाचित साँसदों के प्रवेश के क्षणों को स्मृतियों से बाहर निकाल संजो लेना चाहते थे, उनके कैमरे आँखों में चकाचौंध पैदा करते थे। सीढ़ियों पर रखा हर कदम जसकौर जी के हृद्य में एक कम्पन्न उत्पन्न करता था। यह वही सीढ़ियाँ थीं, जिन पर हमारे देश के कर्णधारों के पैर पड़े थे। वह नाम जो अपने आप में देश का प्रतिनिधित्व करते थे। ऐसे व्यक्तित्व, जिनकी विशालता व दृढ़ता के समक्ष पर्वत की चोटियाँ लघु जान पड़ती थीं। अनन्य देशभक्ति में लिपटी विश्वव्यापी सोच, अभूतपूर्व साद्गी, देश के विकास को झकझोरकर जगाने वाली क्रान्तिकारी विचारधारा लिए हमारे भूतपूर्व सम्मानीय नेतागण इन्हीं सीढ़ियों पर पाँव रख उस कक्ष तक पहुँचते थे, जहाँ के वातावरण में उनके स्वरों का ओज आज भी उपस्थित है। संसद भवन में स्थान-स्थान पर लगे उनके चित्रों से निकल वे जसकौर जी की आँखों के समक्ष मानो साक्षात् खड़े थे। उनका हृद्य भावातिरेक से गद्गद् हो उठा। अनेकानेक विचार मस्तिष्क में आ जा रहे थे।

सम्भवतया यही वह क्षण था, जिसकी नींव का पत्थर ईश्वर ने उनसे अनजाने में रखवाया था। क्योंकि इस क्षण में उनके जीवन सार्थकता छिपी थी। एक निरक्षर किसान पिता की साक्षर पुत्री ने इन सीढ़ियों पर अपना पाँव धरा था। आने वाले भविष्य में अनेकानेक कृषक सुताएँ इन सीढ़ियों पर मस्तक ऊँचा कर पाँव रख सकें, इसलिए। शिक्षा की नींव प्रत्येक जीवन का आधार है। जसकौर जी के इन विचारों और शिक्षा के विकास के सम्बन्ध में उनके प्रयासों के फलीभूत होने का यह प्रत्यक्ष उदाहरण था। असम्भव कुछ भी नहीं है, यह उन्होंने प्रमाणित कर दिखाया था। सांसद के रूप में शपथ ग्रणह करने के उपरान्त जब भारत देश की सर्वोच्च पंचायत के सुसज्जित गरिमामयी कक्ष में अपने निर्धारित स्थान पर बैठीं तो उन्होंने प्रण लिया कि वे इस स्थान की गरिमा को कभी कम नहीं होने देंगी। क्यों कि लोकसभा में वे उनकी प्रतिनिधि थीं, जिनकी निष्ठा, विश्वास व आशाओं को यहाँ स्थान मिला था, जिन्होंने सम्पूर्ण हृद्य से अनेक अपेक्षाओं के साथ उन्हें यहाँ पहुँचाया था।

भारतीय जनता पार्टी पूर्ण बहुमत के साथ सत्ता में आई थी। अतः प्रथम बार निर्वाचित होने पर सत्ता पक्ष में बैठना जसकौर जी का सौभाग्य था। भारतीय जनता पार्टी की सरकार का नेतृत्व तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के हाथ में था। भारतीय राजनीति के इतिहास में उनका नाम युग पुरूष के रूप में अंकित है। एक ऐसे व्यक्तित्व, जिनकी ओर पक्ष-विपक्ष सभी श्रद्धा से देखते थे। उनके सानिध्य में काम करने वालों के लिए

वे व्यक्ति कम एक संस्था अधिक थे। इसके अतिरिक्त श्री लालकृष्ण आडवाणी जी, श्री मुरली मनोहर जोशी जी, श्री वैंकेया नायडू जी, स्व. श्री प्रमोद महाजन जी, स्व. श्रीमती सुषमा स्वराज जी आदि वे नाम हैं, जो सम्मिलित रूप से किसी भी मंच पर जब दिखाई देते थे, तो भारतीय जनता पार्टी का साकार स्वरूप जान पड़ते थे। ऐसे व्यक्तित्वों के साथ भेंट होना जसकौर जी के लिए एक सुखद अनुभव था। सभी का व्यवहार, मधुरता एवम् मार्गदर्शन से परिपूर्ण था। ऐसे प्रेरणादायी वातावरण से जो ऊर्जा उत्पन्न होती थी, वह अत्यन्त सकारात्मक थी। जसकौर जी ने शीघ्र ही अपनी छवि की छाप सभी के हृद्य में अंकित कर दी। एक ऐसी छवि, जिसमें मृदु व्यवहार के साथ अचम्भित कर देने वाली दृढ़ता व आत्मविश्वास का समन्वय था।

वे निःसंकोच अपने क्षेत्र की समस्याओं के प्रश्न उठातीं, सभापटल पर उन्हें सबके समक्ष स्पष्ट रूप से रखतीं और अपने क्षेत्र के लिए अधिकाधिक लाभ की माँग करतीं। उनकी उपस्थिति ने सवाई माधोपुर को एक नई पहचान प्रदान की। सभी इस स्थान की पहचान एक बाघ परियोजना वाले पर्यटक स्थल से करते आए थे। जसकौर जी ने इस क्षेत्र में बसे गाँव-गाँव और उससे जुड़ी समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया। वह समस्या सूखे से सम्बन्धित हो, या तालाबों और जल संसाधन के अन्य वैकल्पिक उपायों से, सड़कों की दुर्दशा से, रेलगाड़ियों के आवागमन और उनकी सुविधा से वंचित अनगिनत महत्वपूर्ण स्थानों से, उनकी वाणी यह सब शब्दों के माध्यम से लोकसभा में साकार कर देती। जब अपनी बात कहतीं तो अशिक्षा, आवागमन के अपर्याप्त साधन, संचार सुविधाओं के अभाव से जूझते उनके सवाई माधोपुर क्षेत्र से ध्यान हटा पाना किसी के लिए भी सम्भव नहीं होता था।

शीघ्र ही वैंकेया नायडू जी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी के गठन की घोषणा हुई और जसकौर जी को राजस्थान मीना जनजातिय समाज से प्रथम महिला राष्ट्रीय सचिव बनने का गौरव प्राप्त हुआ।

इस महत्वपूर्ण पद पर नियुक्ति से उनके समाज व सम्पूर्ण सवाई माधोपुर क्षेत्र में खुशी व उल्लास की लहर दौड़ गई। अपनी जिस पुत्री को अपना प्रतिनिधि चुनकर उन्होंने दिल्ली भेजा था, उसने अपनी योग्यता एवँ कार्यों से उनका व प्रदेश की माटी का मान बढ़ाया था। सवाई माधोपुर आगमन पर उनका भव्य स्वागत किया गया। उनकी प्रगति उनसे जुड़े प्रत्येक व्यक्ति के लिए सुखद अनुभूति की भाँति थी। जसकौर जी को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली थी। एक संसद सदस्य के रूप में इतने कम समय में अपना विशेष स्थान बना लेना, एक विशिष्ट उपलब्धि थी। उन्होंने कभी किसी पद को अपना अन्तिम लक्ष्य नहीं माना और ना ही पद प्राप्त करने के लिए कोई प्रयास ही किए। उन्होंने सम्पूर्ण जीवन एकाग्रचित्त हो काम पर ध्यान केन्द्रित किया। सच्ची लगन से कार्य करने के कारण उन्हें उससे जुड़ा यथोचित स्थान स्वतः ही प्राप्त हुआ।

जिस प्रकार श्वास का लेना और छोड़ना कभी किसी के लिए भी थक जाने वाली उबाऊ प्रक्रिया नहीं है, उसी प्रकार जसकौर जी ने उनके शिक्षा और विकास पर आधारित कार्यों से कभी विश्राम नहीं चाहा। यह उनके जीवन में श्वास की भान्ति स्वाभाविक था, सहज था। जिन छोटे-छोटे किन्तु महत्वपूर्ण कार्यों के लिए लोग भूमिका बनाते हैं, बैठकर अधिकाँश समय और ऊर्जा रूपरेखा बनाने में व्यर्थ कर देते हैं, उन कार्यों को वे कब निबटा देतीं थी, किसी को भी भान नहीं होता था। कार्य करने के पहले व उसके पश्चात् ढ़िंढ़ोरा पीटने से उन्हें कोई सरोकार ना था। अपितु कई बार वे ऐसे समय व्यर्थ करने वालों को स्पष्ट शब्दों में टोक भी देती थीं। इसका कारण इतना ही था कि ऐसे व्यक्तियों को जीवन बहुत लम्बा और कार्य थोड़े से दिखाई देते हैं, किन्तु जसकौर जी को उद्देश्यों की सूची

www.archanameena.com

लम्बी और जीवन का समय अपर्याप्त दिखाई देता था। उनका यह भी मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति को इसी दृष्टिकोण से जीवन को देखना चाहिए, तभी इस जीवन काल से चुने हुए क्षणों का संचय एवम् उनका भरपूर उपयोग हो सकता है।

www.archanameena.com

उनका जीवन दर्शन अन्तःकरण की गहन अनुभूतियों पर आधारित है। प्राकृतिक नैसर्गिक सौंदर्य उन अनुभूतियों की पृष्ठभूमि में उनके लिए सदैव विद्यमान रहा है। अनुभूतियाँ जिनकी साँकेतिक भाषा आत्मा के अतिरिक्त कोई और नहीं समझता। जिन्हें बोलना मात्र पशु-पक्षी, जीव-जन्तु और तितलियों को आता है, जिन अनुभूतियों का आश्रय फूलों-पत्तियों, पेड़-पौधों पर होता है, जिनकी सुगन्ध मिट्टी की गोद में एकत्रित होती है, जिनका प्रवाह बहती हवा के झोंकों से अनुभव किया जाता है और जिनका विस्तार बादलों के पंखों पर होता है। यह अनुभूतियाँ किस प्रकार समय को सार्थक बनाती हैं, यह उन्होंने स्वयँ के जीवन से सिखा है। मूलतः किसान होने के कारण उनके पास जो कृषि योग्य भूमि थी, उसको उन्होंने एक आदर्श के रूप में स्थापित किया। विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले किसानों व विद्यार्थियों को उन्होंने यह सिखाया कि धरती से ग्रहण करना, जब हम अपना अधिकार समझते हैं, तो उस धरती को पुनः लौटाना हमारा कर्त्तव्य भी होना चाहिए। दुग्ध उत्पादन के लिए पशुपालन, जैविक खाद, का उत्पादन उन्होंने क्षेत्र में सबसे पहले स्वयँ के प्रयासों से कार्य रूप में परिणित किया। कृषि की वैज्ञानिक तकनीक को प्रयोग में लाकर उससे पैदा होने वाले साग-सब्जी का उन्होंने विद्यापीठ के छात्रावास में भोजन बनाने में उपयोग किया। उनके द्वारा विकसित उत्पादन की प्रक्रिया देखने-समझने के लिए प्रतिदिन कई लोग आते। आँवले के लदे हुए पेड़ व अमरूदों के बगीचे और उसमें स्वतन्त्र उड़ते उनके प्रिय सफेद कबूतरों का झुण्ड, जो भी देखता मन्त्रमुग्ध हो जाता। वह वातावरण जसकौर जी का पर्याय था। उनकी सहजता का उद्भव स्थल यही है। कोई दिन ऐसा नहीं जाता, जब प्रातःकाल उनके हाथ खेत की मिट्टी को नहीं छूते।

जसकौर जी के द्वारा स्थापित प्रत्येक कार्य के पीछे रोजगार के अवसर पैदा करना एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। विद्यापीठ पर कार्यरत शिक्षकगण हों या अन्य कर्मचारी, सभी स्थानीय थे। कृषि में हाथ बंटाने वाले सभी आसपास के गाँवों के युवा थे। व्यस्तता कितनी भी हो, किन्तु जसकौर जी ने अपनेपन से सारा कार्य करने वाले इन सहयोगियों के सुख-दुख को सदैव अपना सुख-दुख माना। इन सभी की पारिवारिक समस्याओं के उत्तरदायित्व निर्वहन में भी वे सदा उनके साथ खड़ी होती थीं। कोई विशेष प्रशिक्षण ना होते हुए भी उनके रोजगार के अवसर स्वयँ के प्रयत्नों से जुटा, उन्हें कामकाज में निपुण बनाने का प्रयास वे करती रहीं।

www.archanameena.com

वर्षों से उनके पास वही लोग निरन्तर कार्य करते आ रहे थे। जसकौर जी के संरक्षण में वे स्वयँ को सुरक्षित तो अनुभव करते ही थे, साथ ही पारिवारिक वातावरण में आपसी सौहार्द्र से रहते और कार्य करते। सवाई माधोपुर से दिल्ली के बीच में ना जाने कितनी बार वे आती-जाती थीं। इस राजनीतिक व्यवस्था में भी विद्यापीठ पर निरन्तर उनका ध्यान बना रहता। उनकी मानसिकता में किसी भी समय परिस्थिति से प्रभावित हो, विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा। उन्हें अपने चहुँओर इन्हीं सरल व स्वाभाविक लोगों की उपस्थिति भाती थी। यह सभी उन्हें निरन्तर उस क्षेत्र का स्मरण करवाते थे, जिस क्षेत्र का ऋण उनके कन्धों पर रखा था। उन्हें उस क्षेत्र के लिए अधिकाधिक साधन व सुविधा की व्यवस्था करना व अलग-थलग रह गए पिछड़े क्षेत्रों को देश की मुख्यधारा से जोड़ने का सपना पूरा करना था।

भारत माता ग्रामवासिनी।
खेतों में फैला है श्यामल,
धूल भरा मैला सा आँचल,
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा उदासिनी।
सफल आज उसका तप संयम,
पिला अहिंसा स्तन्य सुधोपम,
हरती जन मन भय, भव तम भ्रम,
जग जननी जीवन विकासिनी।।
भारत माता ग्रामवासिनी।
"भारत की आत्मा गांवों में बसती है
और उसका प्राण कृषि है
(महात्मा गांधी)

सवाई माधोपुर क्षेत्र से जुड़ी कुछ समस्याएँ ऐसी थीं, जो उन्हें सर्वाधिक विचलित करती थी, जैसे – पानी की कमी, संचार सुविधाओं का अभाव, सड़कों का अधिकाँश क्षेत्रों को ना जोड़ना, आवागमन के प्रमुख साधन रेलमार्ग का बहुत सीमित होना। इसके अतिरिक्त शिक्षा की विकट स्थिति तो प्रमुख समस्या थी ही। संसद के पटल पर उन्होंने अनेक बार इन बिन्दुओं को रखा। छोटे-छोटे गाँव चिकित्सा सुविधा से वंचित थे। सबसे बड़ी कठिनाई गर्भवती महिलाओं और बीमारी से जूझ रहे वृद्धों के साथ थी। अधिकाँशतः प्रसव घरों में ही होता था। कभी स्थिति बिगड़ने पर उन्हें निकट के कस्बे के स्वास्थ्य केन्द्र में ले जाने के लिए ग्रामवासी ट्रैक्टर व ट्रोलों पर निर्भर थे। सड़कों के अभाव में कच्ची पगडण्डी और ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर होते हुए जाना कई बार जानलेवा होता था। जसकौर जी ने यह सब मात्र सुना हो, ऐसा नहीं था, वरन् उन्होंने अपने लोगों को इन कठिनाईयों से दिन-प्रतिदिन जूझते हुए देखा था। उनके निरन्तर प्रयास से प्रधानमंत्री सड़क योजना के अन्तर्गत् सवाई माधोपुर-करौली जिले में 106 करोड़ रूपए की लागत से 218 सड़कों का निर्माण कार्य स्वीकृत हुआ।

सड़कों के निर्माण के साथ ही अधिकाँश कस्बों को रेलमार्ग से जोड़ने के कार्य की पहल करते हुए ना केवल छह रेलगाड़ियों का ठहराव विभिन्न स्थानों पर उन्होंने करवाया, अपितु दो नई रेलगाड़ियाँ प्रारम्भ की गईं। इसमें से एक जयपुर से बयाना जाने वाली गाड़ी थी, जिसका ठहराव सवाई माधोपुर व गंगापुर सिटी करवाने पर ग्रामीणजनों की प्रसन्नता का ठिकाना ना रहा। आसपास के क्षेत्र में फैले गाँवों के लोग गंगापुर सिटी से सवाई माधोपुर के बीच अनेक कार्यों से आते-जाते हैं। इस मार्ग को उनके लिए सुगम बनाना जसकौर जी की एक बड़ी उपलब्धि रही। अति उत्साहित ग्रामवासियों ने अपनी सर्वप्रिय रेलगाड़ी को अपनी सर्वप्रिय नेता का नाम दे दिया और यह रेलगाड़ी तब से लेकर आजतक इस क्षेत्र में "जसकौर मेल" के नाम से ही जानी जाती है।

इसके अतिरिक्त सभी प्रमुख रेलवे स्टेशनों पर कम्प्यूटरीकृत् आरक्षण व्यवस्था का आरम्भ किया गया। साथ ही सवाई माधोपुर का रेलवे स्टेशन जो कि प्रतिवर्ष रणथम्भौर बाघ परियोजना के भ्रमण को आने वाले हजारों सैलानियों का स्वागत करता था, को मॉडल स्टेशन का दर्जा जसकौर जी के साँसद काल में ही मिला।

किसी भी क्षेत्र का विकास उसके संचार माध्यमों पर निर्भर होता है। यह वह समय था, जब शहरी क्षेत्र मोबाइल क्रान्ति से परिचित हो रहे थे, किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में टेलिफोन की मूलभूत सुविधा भी उपलब्ध नहीं थी। अधिकाँश गाँवों में साँझ ढ़ले पश्चात् वातावरण कुछ ऐसा रहता था, मानो आजादी से पूर्व के भारत में हम पुनः लौट आए हों। ना जल वितरण के लिए नलों की व्यवस्था, ना बिजली और ना ही खबरों के आदान-प्रदान के लिए संचार माध्यम। जसकौर जी के सफल प्रयासों और लगन से सवाई माधोपुर-करौली एवँ श्रीमहावीरजी में मोबाइल फोन सेवा का शुभारम्भ हुआ। साथ ही सवाई माधोपुर-करौली जिले में 92 नए टेलिफोन एक्सचेन्ज बनाए गए।

स्थानीय प्रशासन में अधिकाँश अधिकारीगण जसकौर जी के कार्यों को आगे बढ़ाने में व सहयोग देने में प्रसन्नता का अनुभव करते। इसका कारण था समस्त प्रशासनिक कर्मचारियों के साथ उनका खरा व मृदुल व्यवहार। उनके व्यक्तित्व की पारदर्शिता व व्यवहार की सहजता उनके साथ काम करने को सरल बना देती थी। इसी प्रकार केन्द्र सरकार में अधिकाँश मंत्रीगण जानते थे कि जसकौर जी कभी कोई अविचारणीय बिन्दु उनके समक्ष नहीं रखेंगी। वे उसी कार्य के लिए दबाव डालती थीं, जो वास्तव में न्यायसंगत व आवश्यक थे। प्रशासन के साथ मिलकर जन कल्याण के कार्यों को लेकर तालमेल बैठाने वाले राजनीतिक व्यक्ति कम ही होते हैं और जो यह कर सकते हैं, वह निश्चित ही अपने क्षेत्र को विकास के पथ पर ले जाने में सक्षम होते हैं।

राजस्थान के इस भू-भाग की एक बड़ी त्रासदी थी, वर्षा का कम होना। सूखे से फसल की हानि तो होती ही है साथ ही साथ पीने के स्वच्छ जल की व मवेशियों के चारे की कमी ग्रामीण जीवन को झकझोर देती है। पानी के जल स्त्रोत सूख जाते हैं और पानी का स्तर भूमि में बहुत नीचे चला जाता है। बामनवास और उसके समीप स्थित गाँव, जिनमें शफीपुरा भी एक है, में सूखे तालाब में दस-बारह हाथ गहरी कुई खोद, उस एकत्रित गन्दे पानी से लोग प्यास बुझाने के लिए लाचार हो जाते हैं। जसकौर जी को यह बात बहुत कष्ट पहुँचाती थी, कि जो पानी

मवेशियों के पीने लायक भी नहीं होता है, उसे लोग स्वास्थ्य की चिन्ता किए बिना पीने को बाध्य हैं। भूजल के संरक्षण, वर्षा के पानी को सहेजने व उसका रख-रखाव करने के आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों से अनजान था, उनका समाज। इन मूलभूत जानकारियों से अवगत कराने के साथ-साथ उन्होंने केन्द्र सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय से अपने क्षेत्र में 86 एनिकट के निर्माण के लिए लगभग 14 करोड़ रूपए स्वीकृत् करवाए, ताकि पानी की कमी कुछ सीमा तक दूर हो सके और वर्षा के जल को व्यर्थ होने से रोका जा सके। साथ ही 9 करोड़ रूपए की भू जल-संरक्षण योजना खण्डार व करौली में स्वीकृत करवाई गई।

ग्रामवासियों व स्कूली छात्र-छात्राओं की सुविधा के लिए ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अन्तर्गत् 52000 सामान्य व 1000 विद्यालय परिसरों के लिए शौचालयों के निर्माण कार्य हेतु 6 करोड़ रूपए की स्वीकृती उनके प्रयासों ने दिलवाई। संचार, आवागमन, स्वच्छता, शुद्ध पानी, पौष्टिक भोजन को प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार मानने वाली जसकौर जी, शिक्षा को सबसे बड़ा अधिकार व शिक्षा के विकास का मार्ग प्रशस्त करने को प्रत्येक व्यक्ति का सर्वोच्च कर्त्तव्य मानती थीं। मैनपुरा, सवाई माधोपुर में उनके अथक परिश्रम से खड़ा हुआ ग्रामीण महिला विद्यापीठ इस समय तक 400 बालिकाओं को शिक्षा व संस्कारों का लाभ दे रहा था। छात्राओं की इस संख्या में प्रतिवर्ष बढ़ोतरी होती जा रही थी। उसी लगन से अभूतपूर्व प्रयास कर जसकौर जी ने गंगापुर सिटी व करौली में केन्द्रीय विद्यालय खुलवाने की व्यवस्था की और हिण्डौन सिटी में नवोदय विद्यालय स्वीकृत करवाया।

www.archanameena.com

केन्द्र सरकार से इतनी अधिक मात्रा में क्षेत्र को लाभ दिलवाने वाली सवाई माधोपुर की वे पहली संसद सदस्य थीं। इसके अतिरिक्त उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाली साँसद कोष की राशि से अपने क्षेत्र के विकास एवँ उन्नति में उन्होंने भरपूर योगदान दिया। अधिकाँश साँसद अपने कोष की राशि का सद्धुपयोग ना कर पाने का

दोष स्थानीय प्रशासन या अन्य छोटे-छोटे व्यवधानों पर डालकर निश्चिन्त हो जाते हैं, किन्तु जसकौर जी ने जीवन भर व्यवधानों को दूर करना, उलझनों को धीरज से सुलझाना सीखा था। हथियार डालने व दोषारोपण की प्रवृत्ति उनकी कभी नहीं रही। फलस्वरूप सवाई माधोपुर-करौली क्षेत्र में 800 विकास कार्यों पर 12 करोड़ रूपए खर्च किए गए। उन्होंने आमजन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा, जिसमें एनीकट से लेकर महत्वपूर्ण सड़कों तक, अभिभाषक संघ कार्यालय भवन के निर्माण से लेकर, चिकित्सा भवन के निर्माण तक व चिकित्सालय में विशेष रूप से प्रसूति गृह निर्माण जैसे महत्वपूर्ण कार्य सम्मिलित थे। आपातकाल में रोगियों को लाने-ले जाने के लिए चिकित्सालय वाहन की व्यवस्था व अनेक सार्वजनिक सुविधाएँ भी इन कार्यों में समाहित थीं।

विद्यालयों में कक्षों के निर्माण कार्य करवाए गए तथा वहाँ तक पहुँचने वाली सड़कों को सुगम बनाने का यथासम्भव प्रयास किया गया, ताकि अपने बालक-बालिकाओं को विद्यालय के द्वार तक ना पहुँचा पाने का किसी के पास कोई कारण ना रह जाए। जसकौर जी के क्षेत्र के विकास के लिए अनवरत् प्रयास चलते रहे। व्यस्तता दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई और इसी कारण बढ़ती रही क्षेत्र में उनकी लोकप्रियता और संसद में उनका कद। उन्होंने प्रमाणित कर दिखाया था कि मार्ग चाहे जो भी हो कार्यों का होना ना होना करने वाले की इच्छाशक्ति के अधीन होता है, ना कि परिस्थितियों के। उद्देश्य को पूरा करने के लिए चार कदम बढ़ाने पर यह स्मरण रखना चाहिए कि उद्देश्य स्वयँ आठ कदम इच्छाशक्ति की ओर बढ़ा चुका होता है। कदम बढ़ते हैं और लक्ष्य से दूरी दिन-प्रतिदिन कम होती जाती है। व्यक्ति की यह लगन ही उसे प्रथम और उच्च स्थान दिलाने में सहायक होती है। जसकौर जी के निश्छल स्वभाव, सादगी व सरलता लिए सटीक व प्रगतिशील सोच एवँ उनके आत्मविश्वास ने अपना स्थान अब अपनी पार्टी के प्रत्येक नेता के मानस पटल पर सुनिश्चित कर लिया था। सभी मुक्त हृद्य से उनकी प्रशंसा करते थे। विभिन्न क्षेत्रों से आई हुई अन्य सभी सम्माननीय महिला संसद सदस्यों के साथ उनका बहनों जैसा सम्बन्ध था। अपने से वरिष्ठ व अनुभवी महिला साँसदों से मार्गदर्शन लेने में वे कभी नहीं हिचकिचाती थीं। जीवन के अनुभवों को बटोरकर उन पर मनन करना और कुछ सीखना किसी भी व्यक्ति को कई अप्रिय परिस्थितियों से बचा सकता है व साथ ही किसी कार्य के परिणाम का पूर्वाभास देता है, ऐसा उनका विचार था।

कहते हैं भारत गाँव में बसता है और उसी भारत का जसकौर जी प्रतिनिधित्व करती थीं। उन्हें आभास भी ना था कि इस प्रतिनिधित्व को वह कितने सटीक ढ़ंग से अभिव्यक्त कर रही हैं। मृग अपनी नाभि में स्थित कस्तूरी से स्वयँ परीचित नहीं होता, दीपक जब जलता है तो उस स्थान को प्रकाशित करने के लिए नहीं जलता, जहाँ वह स्वयँ टिका है, अपितु चहुँओर प्रकाश की किरणें पहुँचे इस कारण वह जलता है। इन सभी के अस्तित्व के योगदान का मोल संसार लगाता है। वह लगाते हैं, जो इनसे लाभान्वित होते हैं।

कुछ दिन बीते व्यस्तता के कारण वे सवाई माधोपुर नहीं जा पाई थीं। वहाँ कुछ महत्वपूर्ण कार्य जसकौर जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। मन में इच्छा जागृत हुई और उन्होंने ट्रेन पकड़कर सवाई माधोपुर की ओर प्रस्थान किया। सोच में मगन, चिन्तन में लीन होने का, स्वयँ के विचारों के विश्लेषण का उनका यही समय होता था। जब वे रेल की खिड़की से बारी-बारी आते-निकलते गाँव, खेत-खलिहानों को एकटक देखती जाती थी। रेलगाड़ी के साथ दौड़ते खेतों में भागते बच्चों का झुण्ड निकलता। फावड़े से छोटी-छोटी क्यारियाँ बनाते किसान। कभी फसल काटती, फूस बाँधती, एकत्रित करती औरतों की झुकी पीठ, रंग-बिरंगे धब्बों सी जान पड़ती। धूप की झुलसा देने वाली तपिश से साँवले पड़े हाथों से आँखों पर छाँव करके कभी क्षणभर को रेलगाड़ी देखने के लिए कमर सीधी कर वे खड़ी होतीं। जब साँझ ढ़लती तो, उन्हीं सरकण्डों की छतों से धुआँ उठता और गौधूली में मिल जाता। पानी के भरे मटके सर पर रखकर लौटती औरतें दिखाई देने लगतीं। कहीं खेतों की मुण्डेर पर बने सफेद चबूतरे पर आस्था का दीप टिमटिमा रहा होता, वही वातावरण हर गाँव का था, जिसको जसकौर जी जानती थीं। वे जानती थीं कि धुआँ उगलती फूस की छत के तले वह घर कैसा है। उस पगडण्डी में कितने उतार- चढ़ाव हैं। उस कुएँ के पानी का स्वाद कैसा है। रेलगाड़ी उनके लिए तनिक सुस्ता लेने का साधन थी। उन्हें अपने गाँव और अपने अतीत से जुड़े क्षण स्मरण हो आते। अपनी जीवन यात्रा पर बन्द आँखों से वे जब भी अर्न्तदृष्टि डालतीं, तो उन्हें आभास होता कि अतीत के इन संस्मरणों व परिस्थितियों ने उन्हें समय-समय पर झकझोरा है। जो कुछ भी वे कर पा रही हैं, वह मात्र इसलिए कि स्वयँ के खोल में सिमटकर सुख भोगना उन्हें नहीं आया। उनका विद्यापीठ, उसमें ऐसे ही खेतों से उठकर पढ़ने चली आई छोटी-छोटी बालिकाएँ, उनके पहुँचते ही विद्यालय गणवेश में उन्हें माँ कहकर घेर लेती हैं, तो उनके हंसते-खिलखिलाते मुखड़े जसकौर जी को अपने सुखद स्वप्न का सजीव चित्रण जान पड़ते हैं। आज विद्यापीठ उनके लिए उनके अस्तित्व का पर्यायवाची था। वे जहाँ भी हों उनकी आत्मा इसी विद्यालय में वास करती थी। उनके व्यक्तित्व के विस्तार की परिधि बहुत विस्तृत थी, किन्तु वे जहाँ भी जाएं, जिनके भी बीच हों, वैभवपूर्ण विशाल कक्षों के चार अंगुल मोटे गलीचों पर खड़े होकर भी उन्हें प्रतीत होता था, जैसे उनके पैर खेत की भुरभुरी मिट्टी में अंगुल भर धंसे हैं। उजले वस्त्र पहने सम्भ्रान्त लोगों के बीच बैठकर भी उनके मानस पटल से उस अबला की छवि धूमिल नहीं होती थी, जो माटी से आच्छादित ओढ़नी में खड़ी उनकी ओर आशा भरी दृष्टि से देख रही है। कीमती इत्र की मनमोहन सुगन्ध से सुवासित वातावरण में भी जसकौर जी उस सूखी माटी की शुष्क बास को अनुभव ना कर पाईं हो, ऐसा कभी नहीं हुआ। चलती रेल की ध्वनि में जसकौर जी को महादेवी जी की चन्द पंक्तियाँ सम्मिश्रित होती लग रही थीं -

"कह दे माँ क्या देखूं,
देखूं खिलती कलियाँ या, प्यासे सूखे अधरों को,
तेरी चिर-यौवन सुषमा, या जर्जर जीवन देखूँ"

अपने इन्हीं भावों में डूबते-उतराते उन्होंने जब दिल्ली से सवाई माधोपुर की आधी यात्रा तय कर ली, तब उनके मोबाइल फोन की घण्टी बज उठी। दिल्ली का नम्बर देख यह सोच फोन उठाया कि कोई महत्वपूर्ण कार्य होगा, किन्तु कितना महत्वपूर्ण होगा, इसका उन्हें भान तक ना था। जसकौर जी के लिए वह क्षण अविस्मिरणीय हो गया, जब दूसरे छोर से तत्कालीन उप प्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी जी का स्वर सुनाई दिया। मंत्रीमण्डल के नवीन विस्तार में उन्हें स्थान दिया गया था। शपथ ग्रहण समारोह के लिए तत्काल दिल्ली लौट आने का निर्देश देते हुए श्री आडवाणी जी ने उन्हें शुभ आशीर्वाद के साथ शुभकामनाएँ दीं। अपने वरिष्ठ सम्माननीय नेता को उनकी शुभकामनाओं के लिए हृद्य की गहराईयों से धन्यवाद अर्पित कर फोन रखने के उपरान्त उन्होंने ईश्वर का धन्यवाद किया और आँखें बन्द कर अपने माता-पिता की छवि को स्मरण किया। उनका बोया बीज आज

फलदार वृक्ष बनकर खड़ा था। यह जीवन की ओर उन्हीं माता-पिता के आशावादी एवँ प्रगतिवादी दृष्टिकोण का परिणाम था। जसकौर जी से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति, फिर चारे वह परिवार का सदस्य हो या अन्य परिचित यह समाचार गौरव की अनुभूति देने वाला था। इस अनुभूति से जो भाव मन में उत्पन्न हो रहे थे, उनको शब्दों की परिभाषा में बाँधना सम्भव नहीं था। यह उनकी जीवन यात्रा को जानने व समझने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनेक भावनाओं के सम्मिश्रण का अनुभव था।

सवाई माधोपुर रेलवे स्टेशन पर उतर वे दूसरी रेल से तत्काल दिल्ली के लिए रवाना हो गईं। प्रातःकाल जब तक वो पुनः राजधानी पहुँचीं, तब तक समाचार पत्रों के माध्यम से उन्हें मंत्री पद मिलने का समाचार आग की भाँति चारों और फैल चुका था। सवाई माधोपुर में अपूर्व हर्ष की लहर दौड़ गई। एक ऐसा उल्लास चहुँओर छाया था, जो वर्णित नहीं किया जा सकता। इस हर्षोल्लास के पीछे सबसे बड़ा तथ्य यह था कि इतिहास में प्रथम बार राजस्थान प्रदेश से केन्द्रीय मंत्रीमण्डल में स्थान सुनिश्चित करने वाली महिला मंत्री देने का श्रेय सवाई माधोपुर क्षेत्र ने प्राप्त किया था। महिला सशक्तिकरण में व शिक्षा के क्षेत्र में सर्वाधिक पिछड़े राज्यों की सूची में आने वाले राजस्थान ने आज अपने मस्तक पर लगी इस कालिख को धो डालने की दिशा में अपने आपको अग्रसर कर लिया था और इसमें उसके जिस क्षेत्र ने प्रथम कदम बढ़ाए थे, वह था जसकौर जी का गौरवान्वित क्षेत्र सवाई माधोपुर।

जसकौर जी के पास बधाईयों का तांता लग गया। मंत्रीमण्डल विस्तार सरकारों के लिए, आम जनता के लिए, कोई नवीन या अनहोनी घटना हो, ऐसा नहीं है। सभी प्रमुख समाचार चैनलों पर भी नए बने मंत्रियों के नाम पढ़े जा रहे थे। वैसे ही जैसे हर विस्तार के समय पढ़े जाते हैं, किन्तु एक नाम का परिचय विशेष रूप से दिया जा रहा था, वह नाम था श्रीमती जसकौर मीना का, जिन्होंने किसान परिवार में जन्म लिया, उसी वातावरण में शिक्षा प्राप्त की, शिक्षक बनीं, शिक्षा विभाग में कार्यरत रहीं और प्रथम बार राजनीति में आकर मंत्री पद ग्रहण किया। यह परिचय बरबस ही उन लोगों का ध्यान भी आकृष्ट कर रहा था, जो भारत के विभिन्न भागों में बसे हुए थे, जिनका जसकौर जी के नाम से, जीवन से कोई परिचय नहीं था, किन्तु जिसकी भी दृष्टि टेलिविजन की ओर उठी, वह उनके परिचय के पीछे छिपे कठिन संघर्ष के प्रति प्रशंसात्मक भाव से उठी। क्षण भर ठिठककर उनकी स्मृतियों के किसी कोने में जसकौर मीना का नाम अंकित करके ही लौटी। स्त्री की योग्यता, क्षमता व शक्ति के प्रति विश्वास जागृत करने के लिए जसकौर जी ने सबके जीवन का यह एक क्षण एकत्रित कर भविष्य के लिए संरक्षित कर लिया था।

दिनांक 29 जनवरी 2003 को जसकौर जी के परिवार के सदस्य दिल्ली उनके निवास पर पहुँच चुके थे। उनके शपथ ग्रहण के अवसर पर एकत्र हुए सभी स्वजन हृद्य में उस क्षण को अपनी आँखों से देखने की अभिलाषा संजोए थे। शपथ ग्रहण समारोह राष्ट्रपति भवन में सायं 6.00 बजे आरम्भ होना था। सम्भवतः अकेली वे ही थीं, जिनके साथ आने वाले अतिथियों की सूची में इतने अधिक नाम थे। साथ ही उन नामों की सूची और लम्बी थी जो सशरीर उपस्थित तो नहीं थे, किन्तु जसकौर जी के मानस पटल पर और उनकी आत्मा व हृद्य में जिनका स्थान सुनिश्चित था। उनके पिता नीली आँखों वाले भोले, हंसमुख किसान, जिसका स्वप्न अपनी छोटी को चिट्ठी-पत्री लिखने योग्य बनाना था। उनकी माता, जिन्होंने सतत् निःस्वार्थ कर्म के संस्कार उनके हृद्य में बीज रूप में अनजाने ही बोए थे। उनकी सास, जिन्होंने पुत्रवधु के प्रगतिशील गतिमान पाँवों में कभी परम्पराओं की बेड़ियाँ नहीं बाँधी। उसकी दृष्टि की असीमित सामर्थ्य को घूँघट का अवरोध नहीं दिया। और भी कई व्यक्तित्व थे, जो आज सशरीर उपस्थित नहीं थे, किन्तु इस दिन की नींव जिन्होंने अपने हाथों से डाली थी। जसकौर जी की स्मृति में उनकी छवि घिर-घिर आती। उनकी प्रथम गुरू, जिन्होंने बोरी भर अनाज को विनम्र भाव से स्वीकार कर

उनका परिचय शिक्षा से करवाया। बामनवास की अध्यापिका सरदार देवी, जिनसे उन्होंने सीखा कि एक सम्पूर्ण शिक्षक कैसे बना जाता है। अनेक लोग जो इस संसार में नहीं हैं, किन्तु जिनके अगणित, अमूल्य योगदानों का ऋण वे अपने हृद्य में छुपाए रखती हैं, वे सभी आज जसकौर जी की अनुभूति के सम्मुख अपने शुभाशीष के साथ उपस्थित थे और उपस्थित था, उनका सम्पूर्ण क्षेत्र। क्षेत्र का एक-एक व्यक्ति, जो टेलीविजन के समक्ष गाँव, कस्बों में टकटकी लगाए सीधा प्रसारण देख रहा था, किन्तु मन से उनके साथ राष्ट्रपति भवन में खड़ा था। उत्साह, उमंग से जिनके शरीर रोमांचित थे और हृद्य गर्वित।

नियत समय पर परिजनों के साथ वे राष्ट्रपति भवन पहुँचीं। पार्टी के सभी वरिष्ठ नेता व केन्द्रीय मंत्रीमण्डल उपस्थित था। शपथ ग्रहण के लिए आए नए मंत्रीमण्डल के अन्य सदस्यों के साथ वे स्वयँ के लिए निर्धारित स्थान की ओर बढ़ गईं। राष्ट्रपति भवन के अशोक हॉल का वह गरिमामयी वातावरण अपनी अनुशासित शान्ति में भी कितना मुखर था। इतिहास के पन्नों से लेकर प्रतिदिन के समाचार पत्रों तक की यात्रा में इस भवन और इस कक्ष की गरिमा में गौरव के क्षण जुड़ते ही चले आए थे। समय बदला, व्यक्तित्व बदले, किन्तु यह कक्ष अपने स्थायित्व की साक्षी स्वयँ देता था। दोनों ओर अतिथियों के लिए कुर्सियाँ लगी थीं और मध्य का स्थान आने-जाने के लिए रिक्त था। सामने की पंक्तियों में सभी मंत्रीगण व वरिष्ठ नेतागण बैठे थे और उनके समक्ष वह स्थान था, जहाँ शपथ ग्रहण समारोह होना था। एक ओर समाचार जगत के लोग अपने कैमरों व टेप रिकॉर्डरों के साथ अपनी पूरी तैयारी से खड़े थे। निर्धारित समय पर तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम श्री ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कक्ष में प्रवेश किया। राष्ट्रगान की धुन से पूरा वातावरण और गरिमामयी हो गया। शपथ ग्रहण समारोह प्रारम्भ हुआ और कुछ समय बाद जसकौर जी के नाम की उद्घोषणा हुई। गाजरी रंग की साड़ी पहने एक हाथ में शपथ पत्र व दूसरे हाथ में चश्मा थामे वे इतनी निर्मल लग रही थीं,जैसे कमल के पत्तों पर ठहरे हुए जल के कण होते हैं, होते तो उसी जल का भाग हैं, जिस पर कमल तैर रहा होता है, किन्तु कुछ अलग करने के प्रयास में अपना स्थान ईश्वर के मस्तक पर चढ़ने वाले पुष्पदलों में सुरक्षित कर लेते हैं।

www.archanameena.com

उनके खड़े होते ही सभागार प्रशंसा भरी करतल ध्वनि से गूंज गया। यह ध्वनि तब तक नहीं रूकी, जब तक कि वे महामहिम राष्ट्रपति जी को प्रणाम कर शपथ के लिए निर्धारित स्थान तक नहीं पहुँच गईं। जैसे ही उन्होंने शपथ पत्र पढ़ना प्रारम्भ किया, ''मैं जसकौर मीना, ईश्वर की शपथ लेती हूँ कि ..... वैसे ही कैमरों की चकाचौंध व ध्वनि नें नभ में तैरती दामिनी का स्मरण करवा दिया। शपथ पूरी कर उन्होंने तालियों की गूंज में सर्वप्रथम राष्ट्रपति जी को व उसके पश्चात् अपनी पार्टी के सभी वरिष्ठजनों को प्रणाम किया। भारत की नई महिला एवँ बाल विकास राज्य मंत्री के रूप में जसकौर जी को देख हर्ष व संतुष्टि उनकी पार्टी के सभी नेताओं के मुख पर स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थी। जसकौर जी से अधिक स्पष्ट इस पद के अर्थ को कोई नहीं समझ सकता था।

उस सभागार की एक कुर्सी मेरे लिए भी आरक्षित थी। हृद्य में भावनाओं का अतिरेक था और मस्तिष्क में विचारों का मेला। यह तो नहीं कह सकती कि इस क्षण की रूपरेखा इसी रूप में कभी कल्पना ने गढ़ी थी या नहीं, किन्तु प्रारम्भ से ही वे अपने स्वजनों के लिए मस्तक के मुकुट में जड़े दुर्लभ, दैदिप्यमान अनमोल हीरे की भाँति रही हैं। अतः उन्हें लेकर कल्पना सदैव अपनी मनचाही स्वप्निल उड़न भरती आई थी।

देश, समाज व परिवारों के माथे पर अपने श्रेष्ठ कार्यों से गौरव का तिलक करने वाली अनेक स्त्रियों ने इस धरा पर भिन्न-भिन्न समय काल में व विभिन्न समाजों में जन्म लिया है। उन सभी स्त्रियों के योगदान को पुरूषों के योगदान से अधिक श्रेष्ठ माना गया। इसका कारण है कि किसी भी समाज में मूल्यों को निर्धारित करने का कार्य

स्त्री नहीं करती। अतः आवश्यक नहीं कि उसे स्वयँ की भावनाओं के अनुरूप कार्य करने के लिए अनुकूल वातावरण मिल सके। वह सपने देखे तो आवश्यक नहीं कि उसके सपनों को वास्तविकता का धरातल प्राप्त हो। निजगृह की देहरी लाँघकर जाने-आने के लिए स्त्री को पुरातन काल से लेकर किसी न किसी रूप में आज के वर्तमान युग तक सामाजिक स्वीकृति की आवश्यकता पड़ती है। वह समाज जिसमें जीवन की अनुकूलता या प्रतिकूलता को स्त्री आज भी बहुत कम मात्रा में नियन्त्रित कर सकी है, उसके अपनों से बना है। माता-पिता, भाई-बहिन, सगे-सम्बन्धी, फिर ससुराल पक्ष और सबसे बढ़कर पति वास्तव में उसका समाज है। इसी लघु सीमा में उसका अस्तित्व भी शनैः-शनैः अपनी सीमा रेखा को छोटा करता चला जाता है और वह अपनी इच्छाओं, आकाँक्षाओं को व्यक्त करने व उन्हें परिपूर्ण करने से डरती हुए जीवन बिता देती है। अपना आदर्श पुत्री, आदर्श पत्नी व आदर्श माता का स्वरूप बचाने के लिए वह इतनी समर्पित हो जाती है कि उसे स्मरण ही नहीं रहता कि समाज के उत्थान में परोपकारी कर्म करने का असीमित क्षेत्र जो ईश्वर ने प्रत्येक को जन्म के समय से ही बराबर क्षमता व बुद्धि के साथ दिया है, उसे उसने कितना सीमित कर लिया है। एक विशाल व महान देश का आदर्श नागरिक, कर्मठ व्यक्तित्व, जुझारू कार्यकर्त्ता, समाज के उत्थान में आगे रहने वाला आदर्श समाज सुधारक आदि अंलकणों पर स्त्री का उतना ही अधिकार है, जितना कि पुरूष का। किन्तु अधिकाँशतः नारी की अगणित पग बाधाएँ उसे अपनी योग्यता व बुद्धिमता का सही उपयोग करने से रोकती हैं और परिणामस्वरूप देश अपनी आधी योग्यता, आधे सामर्थ्य के योगदान से अछूता रह अपने आधे विकास से वंचित रह जाता है। वे महिलाएँ जो इन सभी विपरीत परिस्थितियों में आगे आती हैं, उनके योगदान के पीछे पुरूषों से कई गुना अधिक श्रम, पुरूषों के तुलनात्मक रूप से सरल, समतल मार्ग से कहीं अधिक दुष्कर मार्ग की यात्रा व कई गुना अधिक सामाजिक अवरोध छिपे होते हैं। यही कारण है कि स्त्री जब कुछ श्रेष्ठ कार्य कर जाती है तो, उसके योगदान का मूल्य कहीं अधिक होता है। उसी प्रकार जैसे कि धनी व्यक्ति के द्वारा दिए गए दान से निर्धन के द्वारा दिया गया दान अधिक बड़ा है या फिर ठीक वैसे, जैसे नख से शिख तक संसार को त्याग, आठों पहर हरि की भक्ति में लीन नारद से अधिक बड़ा भक्त भगवान ने उस गृहस्थ को माना, जो सम्पूर्ण कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए हरि का जाप निरन्तर अपने हृदय में करता रहता है।

www.archanameena.com

केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास राज्यमंत्री (भारत सरकार) के रूप में

www.archanameena.com

विभिन्न देशों में आयोजित बैठकों व संगोष्ठियों में प्रतिनिधित्व करते हुऐ

यह समाज पहल करे। अपनी बालिकाओं की शिक्षा, पोषण, संरक्षण के लिए। समाज जो उसका अपना है, जिसमें उसके जनक, संरक्षक व उसके अन्य सगे हैं, जो उसकी भावनाओं से ही नहीं उसके रक्त से भी जुड़े होते हैं। क्यों वे उसकी योग्यता की सीमाओं को अपनी मानसिकता के पाश से बाँध संकुचित हो जाने को बाध्य करते हैं?

आज तक यह प्रश्न अनुत्तरित है, किन्तु उत्तर यहीं है, उपचार हैं और परिणाम भी हैं। इस समाज को भगवानाराम जी जैसे पिता, रामपाल जी व हजारीलाल जी जैसे भाई चाहियें। किशन बाई जैसी सास और श्रीलाल जी जैसे पुरुष चाहियें, जिनमें सहजता हो, सजगता हो, नई सोच हो। वे व्यक्तित्व चाहियें जो पूर्वाग्रह से ग्रसित ना हो, कुण्ठित ना हो। प्रत्येक नवजात बालिका जब माता की कोख से गोद में आती है, जब उसमें अपार सम्भावनाएँ, असीमित योग्यता व क्षमता होती है। शिक्षा को माध्यम बना उसके स्वप्नों को संरक्षण देकर उसके विकास के अवरोधों को यदि उसके अपने हटा दें, तो निःसन्देह एक नहीं अनेक जसकौर विभिन्न समाजों के माथे को सुशोभित करने वाला मस्तकाभिषेक बन सकेंगी। प्रत्येक समाज को यह जान लेना आवश्यक है कि जिसके अंश कुछ बन दिखाते हैं, वही समाज एवम् वही देश संसार में अपना एक विशिष्ट स्थान पाते हैं। अतः आवश्यकता शिक्षा को एक क्रान्ति बनाने की है, जिसमें मिटने का कोई स्थान नहीं, अपितु शिक्षा की क्रान्ति का भविष्य तो स्वाभाविक रूप से नवाँकुरों के प्रस्फुटन से परिपूर्ण है। योग्यता की फसल का बीज है शिक्षा। किसी भी सभ्य समाज का श्वास, शिक्षा व ज्ञान ही है। एक शिक्षित बालिका विकसित देश के द्वारा उठाई हुई प्रथम सौगन्ध है। ज्ञान ही आधार है और ज्ञान ही शीर्ष।

बालिका शिक्षा घर का पहला संस्कार है। आने वाली पीढ़ी के अस्तित्व का आधार है। यह वह क्रम है जो टूटी हुई कड़ियों के कारण अपनी निरन्तरता खो सकता है। अतः एकजुट होना होगा। पुरूषों को स्वयँ महिलाओं को, बालिकाओं को, परम्पराओं की पुनः परिभाषा लिखने में समर्थ हमारे बड़ों को, बुजुर्गों को। हमारे ध्येय में सार्थकता होना आवश्यक है। वही सार्थकता हमें असीमित संतुष्टि के सागर में गोते लगवाती है। फलस्वरूप कार्य की निरन्तरता से विश्राम की आवश्यकता पड़ती ही नहीं। जसकौर जी अपने उद्देश्य की सार्थकता से पूर्णतः संतुष्ट हैं। अतः लक्ष्य प्राप्ति के अतिरिक्त किसी और उपलब्धि पर सम्पूर्णता अनुभव करना उन्हें नहीं आता। वे निरन्तर गतिमान है, सम्पूर्ण बालिका शिक्षा के अपने ध्येय की ओर। किन्तु कुछ उद्देश्य ऐसे होते है।, जिनको प्राप्त करने के लिए सम्मिलित प्रयास की आवश्यकता पड़ती है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति में किसी एक का कोई स्वार्थ नहीं होता, अपितु वे बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय की धारणा से उपजे होते हैं और अपनी सम्पर्णूता में इसी भावना का चरम होते हैं। वे किसी जुझारू के प्रथम प्रयास से प्रारम्भ होते हैं, किन्तु अपनी यात्रा में व उसकी समाप्ति तक अनगिनत हाथों की शक्ति व अनगिनत पाँवों की पदचाप से अपना सम्बन्ध स्थापित कर ही लेते हैं।

लक्ष्य की ओर यह एकाग्रता मनुष्य को देवत्व के दर्शन करा सकती है, असंख्य, अतुलनीय, बलशाली, श्रेष्ठ योद्धाओं से भरे कुरूक्षेत्र में मात्र अर्जुन ही थे, जिनके सारथी स्वयँ भगवान श्री कृष्ण थे। अगणित महान धर्म परायणों के उस रण में उपस्थित होने पर भी वे अर्जुन के ही नेत्र थे जो श्री हरि का भव्य विराट स्वरूप देख पाने में सक्षम थे। लक्ष्य को साधने की उनकी एकाग्रता, उनकी दृष्टि की सीमा में आने वाले सारे प्रलोभनों को अदृश्य कर देती थी। अतः वे वही देखते जो देखना उनका उद्देश्य था। मनुष्य का यही गुण उसे क्षणिक सुखों से ऊपर उठाकर अलौकिक सुख में ले जाता है और श्री हरि स्वयँ कह उठते हैं –

''वृष्णिनां वासुदेवोअस्मि
पाण्डवानां धनञ्जयः''

अर्थात् वृषनी वंशियों में वासुदेव अर्थात् मैं, स्वयँ तेरा सखा व पाण्डवों में धनन्जय अर्थात् तू, मैं स्वयँ ही हूँ।

संसार में जो भी श्रेष्ठ है, वह ईश्वर रूप है और एकाग्रता ही मनुष्य को साधारण से श्रेष्ठ बनाती है। अपनी बालिकाओं के लिए हमें समाज में अनेक धनन्जय चाहिएं, जो उनकी शिक्षा को अपना लक्ष्य बना सके। उनके नन्हे हाथों को शक्ति और उनके भावुक हृदयों को दृढ़ता का सम्बल प्रदान कर सकें। भारत देश के प्रत्येक कोने, प्रत्येक समाज में पुत्री के जन्म का उत्सव मनाया जा सके। हमारी भारत माता की मूर्ति के शिथिल पड़े आधे अंगों में रक्त का संचार हो सके।

जय हिन्द, जय भारत, जय भारती

www.archanameena.com

"अविरल धारा" पुस्तक के प्रकाशन के शुभ अवसर पर अपनी छोटी बहिन प्रिय रचना को हृद्य की गहराईयों से शुभकामनाएँ देती हूँ। ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि वे साहित्य जगत में दिन दूनी-रात चौगुनी प्रगति करे। बचपन से ही अपने आसपास घटने वाली हर छोटी-बड़ी घटनाएँ रचना के संवेदनशील हृद्य पर गहरी छाप छोड़ती रही है। जीवन के प्रत्येक उतार-चढ़ाव को बहुत बारीकी से अनुभव करना, अपने आसपास हंसी-खुशी का सृजनात्मक वातावरण बनाए रखना तथा सभी का यथा-सम्भव सहयोग करना रचना का मौलिक स्वभाव है।

"अविरल धारा" मात्र एक कहानी नहीं, अपितु गौरव गाथा है, उस ओजस्विनी की, जिसने हमें सिखाया है कि यदि हमारे उद्देश्य पवित्र व अर्थपूर्ण हैं, तो हम अपने सहज, सरल, सुलभ स्वभाव से भी लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

सौभाग्यशाली हूँ, गौरवान्वित हूँ, नत्-मस्तक हूँ, एक ऐसी कर्मठ माँ के गर्भ से जन्म लेकर, जिसने एक साधारण स्त्री के अस्तित्व को नया आयाम, नया विश्वास, नई प्रतिबद्धता, नई ऊँचाई दी। सामाजिक विषमताओं से घिरे समाज के बीच रहकर स्वयँ को सदैव सकारात्मक धरातल पर रखा। ध्रुव तारे की भाँति अटल, मजबूत, स्पष्ट रहीं। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनके दिखाए रास्ते पर चलूं और हर जन्म में वे मेरी माँ व मैं उनकी पुत्री के रूप में ही जन्म लूं।

शुभकामनाओं सहित
अर्चना मीना

कर्मवीर

देख कर बाधा विविध, बहु विघ्न घबराते नहीं।
रह भरोसे भाग के दुख भोग पछताते नहीं।
काम कितना ही कठिन हो किन्तु उकताते नही
भीड़ में चंचल बने जो वीर दिखलाते नहीं।।
हो गये एक आन में उनके बुरे दिन भी भले
सब जगह सब काल में वे ही मिले फूले फले।।

आज करना है जिसे करते उसे हैं आज ही
सोचते कहते हैं जो कुछ कर दिखाते हैं वही
मानते जो भी है सुनते हैं सदा सबकी कही
जो मदद करते हैं अपनी इस जगत में आप ही
भूल कर वे दूसरों का मुँह कभी तकते नहीं
कौन ऐसा काम है वे कर जिसे सकते नहीं।।

जो कभी अपने समय को यों बिताते है नहीं
काम करने की जगह बातें बनाते हैं नहीं
आज कल करते हुए जो दिन गँवाते है नहीं
यत्न करने से कभी जो जी चुराते हैं नहीं
बात है वह कौन जो होती नहीं उनके लिये
वे नमूना आप बन जाते हैं औरों के लिये।।

व्योम को छूते हुए दुर्गम पहाड़ों के शिखर
वे घने जंगल जहां रहता है तम आठों पहर
गर्जते जल राशि की उठती हुई ऊँची लहर
आग की भयदायिनी फैली दिशाओं में लपट
ये कंपा सकती कभी जिसके कलेजे को नहीं
भूलकर भी वह नहीं नाकाम रहता है कहीं।

''हरि औध''

www.rohanameena.com

रचना! हुबहू अपने नाम की पर्यायवाची। जीवन के हर क्षेत्र में रचनात्मकता अपनाती रचना मीना का जन्म 22 सितंबर 1971 को राजस्थान के करौली जिले में श्रीमती जसकौर मीना व श्रीलाल मीना के घर हुआ।

उन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय से राजनीति शास्त्र में स्नातकोत्तर तक शिक्षा प्राप्त की। हिन्दी साहित्य के प्रति रूझान का यह अनमोल उपहार उन्हें अपनी माँ से संस्कार रूप में प्राप्त हुआ। रचना की भावाभिव्यक्ति की सरसता से उनके निकट सम्बन्धी व मित्र सदा से परिचित है।

रचनात्मक लेखन शैली के चलते उन्होंने मीड़िया में कई सामाजिक व राजनैतिक संगठनों के लिये लेखन कार्य किया है। उनका एक कविता संग्रह ''मन'' शीर्षक से 2010 में प्रकाशित हुआ व एक कहानी संग्रह शीघ्र प्रकाशित होने को है।

महामहिम राज्यपाल
(गोवा)
श्रीमती मृदुला सिन्हा

जसकौर मीना
एक संवेदनशील व्यक्तित्व

बेटियां तो जन्मती आई हैं। सृष्टि को जन्म देकर अक्षुण्य रखने वाली बेटियां स्वयं अजन्मी और जन्मी के बीच झूलती रहीं हैं। राजस्थान की वीर भूमि पर भी एक से एक बेटियों ने जनम लिए हैं। इतिहास बनाए हैं। कुछ जन्मते ही मार भी दी जाती रही हैं। हजारों बालिकाओं के बाल विवाह कर पढ़ने लिखने बढ़ने के अवसरों से वंचित कर दिया जाता रहा हैं। वे स्वयं माँ बनकर, फिर अपनी बेटियों के संग हूबहू अपनी माँ जैसी उपेक्षा का व्यवहार रखती हुई, सृष्टि की डोर बढ़ाती रही हैं। वैसे ही माहौल में जन्मी थीं पन्ना धाय। देश समाज की खातिर कुछ ऐसा कर गई की उनकी जीवन शैली, त्याग, बलिदान मात्र महिलाओं के लिए नहीं, हमारे समाज व देश के लिए नहीं, मानव जाति के लिए पहचान बन गया। आदर्श बन गया।

उसी भूमि पर सदियों से जन्मती, जीवन के हर क्षेत्र में महिलाएं आगे आती रही हैं। पर दौसा जिले के लालसोट तहसील के मंडावरी गाँव में स्व. श्री भगवान राम मीणा के घर, 3 मई, 1947 को जन्मी वह कन्या, यहाँ तक पहुँचेगी, स्व. श्रीमती धनकौर बाई को भी कहाँ पता था। जन्मते ही ''केहाँ केहाँ'' के क्रंदन स्वर व ताल तो वही थे, जो सभी नवजात शिशुओं के होतें हैं। माँ-बाप के प्यार में तिल-तिल भर बढ़ती, उनके संस्कार नस-नस में पिरोती स्वयं जसकौर को, न उसके माता-पिता को अनुमान रहा होगा कि वह वहाँ तक पहुंचेगी, जहाँ आज पहुँची हैं। ईश्वर द्वारा निर्मित सभी मनुष्यों के शरीर में समान ही अवयव होते हैं। उन अंगों के विशेष गुण भी निर्धारित हैं। मस्तिष्क का काम है सोचना, विचारना तो हृदय का काम सभी अंगों में जीवन रस (रक्त) का संचार करना है। पर वह रस हो कैसा? मेरे एक गीत की पंक्ति है - ''संवेदना हृदय का भूषण, उससे सजा समाज हो।'' यह तो हर व्यक्ति के हृदय से अपेक्षा है। पर जसकौर का हृदय सचमुच संवेदना से परिपूर्ण है।

सहजता से बड़ी से बड़ी बातें कह जाती है जसकौर। बड़े अधिकारियों से बातें करते हुए भी अपने ग्रामीण लहजे में सब कुछ कह जाना जसकौर की विशेषता है, बिना लाग लपेट के वे बातें जो उन्हें पसंद नहीं। अधिकारियों को भी यह राह दिखाती हैं। जिस पर चल कर ये वहां तक पहुंच सकते हैं, जहां पहुंचने की उनकी जरूरत है। दरअसल

www.arvindjeena.com

शास्त्री भवन के वातानुकूलित कक्ष में भी वे अपने चुनाव क्षेत्र और समाज के ज़रूरतमंदों की छवि अपनी नजर के सामने रखती हैं। देश की सबसे बड़ी पंचायत, संसद में भी गांव गरीब की ही आवश्यकताएं पसारती हैं। उनके प्रश्नों को उठाती, संसद की दृष्टि में अपना समाज व क्षेत्र अंटाने की कोशिश करती रहती हैं।

पहली बार संसद में बैठकर अपनी विशेष पहचान बना लेना जसकौर की विशेषता ओर उपलब्धि रही है। जसकौर को पहचाना है दल ने और कार्यकर्ता को पहचानने की विशेष दृष्टि रखने वाले तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने। उनके संगी-साथियों और अधिकारियों ने भी। उनके मंत्री रहे डॉ. मुरली मनोहर जोशी और तत्कालीन पार्टी अध्यक्ष श्री वैंकेया नायडू की ज़ुबान अपनी इस बहन की प्रशंसा करती नहीं थकती हैं। और भी पार्टी के वरिष्ठों का आशीष और छोटों का मान प्राप्त करती हैं जसकौर। जसकौर बड़ी सहजता और निर्भीकता से अपनी उपलब्धियों का श्रेय अपने जीवन साथी श्रीलाल मीणा जी को दे जाती है। और यह देख-सुन कर गद्‌गद् होते हैं श्रीलाल जी। पर पुनः लौटा देते हैं उनका आभार। उपलब्धियों को श्रेय स्वयं जसकौर को देते हैं। मानों दोनों के बीच प्रतियोगिता है तो मात्र दूसरे को अपने से अधिक योग्य मानने की। और दोनों को एक साथ देखकर देखने वालों की ही आँखें ज़ुड़ा जाती हैं। मानो जोडी एक-दूसरे के लिए नहीं, वह तो दूसरों के लिए ही बनी हो। समाज के लिए। वंचित पीड़ितों के लिए। इसीलिए आनंदित है दाम्पत्य। बांटते रहने का आनंद प्राप्त करती जोड़ी। अपना सुख, अपना समय और साधन। ओर इतना कुछ वे कर पा रही हैं सिर्फ इसलिए कि उनके हृदय में एक गहन पीड़ा है। सदा मुस्कुराते चेहरे के पीछे छुपा है एक दर्द। जो चैन से बैठने नहीं देता मनुष्य को। अपने तीन वर्षीय बेटे अनुराग को खोने की पीड़ा। यह दर्द आनंद देने वाला भी होता है। व्यक्ति को बैठने नहीं देता सोने नहीं देता। यही कारण है कि अहर्निश चलते हुए भी जसकौर मीना थकती नहीं। रूकती नहीं। श्रम का आनंद प्राप्त करती है।

मनुष्य के अंदर पहचान की भूख पेट की भूख से भी प्रबल व प्रखर होती है। किसी व्यक्ति को समाज के लिए रत्ती भर भी कर गुजरने के कारण जो पहचान मिलती है, पूछिए मत। वह अपनी उस पहचान को बनाए रखने में तन, मन, धन लगा देता है। उसकी यह भूख बढ़ती ही जाती हैं । ''पग की तृषा और बढ़ती, पड़ते जब पग में छाले हैं।'' मनुष्य में समाज के लिए कुछ करने और अपनी पहचान बनाने की भूख जगी रहनी चाहिए। व्यक्ति की इस भूख के कारण ही समाज सुंदर और सुखद बनता जाता है।

बड़ी बहन के नाते ईश्वर से उनके सहज, सक्रिय, दीर्घायु और सौभाग्यवती रहने की कामना करती हूं। उनसे बातें करके, उन्हें देख सुन कर स्वयं आनंदित होती रहती हूं। राजनीति में ऐसी ही महिलाओं की आज आवश्यकता है। दूसरों के दुख को देखकर रोती, द्रवित होती तो हैं, पर रोंदू नहीं है, दुख-दर्द दूर करने के लिए प्रयासरत हैं। दरअसल अपने छोटे-बडे दायित्वों को जो ईमानदारी से निभा जाता है, वह सबका हो जाता है।

स्व. महादेवी वर्मा ने कहा था - ''सफल साहित्यकार और सामाजिक कार्यकर्ता में एक समानता है। दोनों को अतीव संवेदनशील होना पड़ता है।'' जसकौर मीणा का हृदय एक साहित्यकार है, कार्य एक सामाजिक कार्यकर्ता का है, तभी राजनीति में सफलता हासिल करती जा रही हैं। करती जाएंगी।

2003 में जसकौर जी की पत्रिका
''जसकृति'' के लिये आशीर्वचन स्वरूप लिखित

डॉ. सुधा मलैया

समाज सेवी

राष्ट्रीय सचिव, भाजपा

जसकौर मीना ईश्वर की एक सुंदर कृति। जस की तस। राजस्थान की सौंधी मिट्टी से गढ़ी। सरल, सौम्य ऊंचाइयों को छूने की आकांक्षा रखती, किन्तु जमीन पर खड़ी। उन सबके साथ जो आस-पास हैं। आत्मीय स्वजन हों, या भाजपा परिवार के सदस्य। कार्यर्ता हों या मतदाता, स्त्रियां हों या पुरूष, सबको वे अपनी सी लगती हैं। बहुत निकट की। क्योंकि उनकी समस्याएं जसकौर की अपनी हैं। जिन्हें सुलझाने की वे प्राणपन से कोशिश करती हैं। संपूर्ण संजीदगी, ईमानदारी और प्रतिबद्धता के साथ। और यही उनकी पूंजी है। 1947 में दौसा जिले की लालसोट तहसील के मंडावरी गांव में जन्मी, इस कन्या का नाम जब जसकौर रखा गया तो कौन जानता था कि उनके कृषक पिता स्वर्गीय भगवानराम मीना जिनसे जसकौर ने भगवान के प्रति गहरी आस्था पायी, के मन में बेटी के लिए आकांक्षा थी या नहीं कि यह बेटी परिवार में बहुत सारा 'जस- लेकर आये। शायद उनकी स्व. माँ धनकौर बाई जिनसे उन्होनें कर्मठता, सहनशीलता व सबको साथ लेकर चलने का धन विरासत में पाया, भी कहां जानती थीं कि इस बेटी को जो धन व सौंप रहीं हैं, वह उसे किस रूप में चार गुना करके परिवार को देगी।

जसकौर ने भी कहां सोचा था। वह तो केवल आगे पढ़ना चाहती थी जब 23 मार्च 1967 को गांव शफीपुर में किशोरी जसकौर का विवाह पति श्रीलाल मीना से हुआ। सवाई माधोपुर के उस शफीपुरा गांव की बेटियां अधिक नहीं पढ़ती थीं, फिर बहुओं की कौन कहे। पर जसकौर तो भिन्न थी। परिवार के प्रति उनका समर्पण, पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वहन में पूर्ण दायित्व बोध और पढ़ाई के प्रति अनन्य रूचि देखते हुए, जसकौर को आगे पढ़ने से किसी ने रोका नहीं। वह एक के बाद एक प्राइवेट परीक्षा पास करती चली गई। 10वीं, इन्टर, बी.ए., एम.ए., और बी.एड, और खड़ी हो गई अपने पैरों पर। पा गई अध्यापिका की नौकरी बालिका माध्यमिक विद्यालय, करौली में। तब किसे मालूम था कि 27 वर्षों में शिक्षिका से शिक्षा विभाग के उपनिदेशक और जिला महिला बाल विकास परियोजना की सेवा का सुदीर्घ अनुभव उन्हें किस मोड़ तक ले जायेगा।

महिला शिक्षा एवं महिला विकास के लिए अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए जमीनी स्तर पर महिलाओं की समस्याओं को देखने-समझने वाले अनेक हैं किंतु निर्णायक स्थिति में बैठकर पूरे देश की महिलाओं के हित में काम करने का अवसर पाने वाले विरले है। जसकौर मीना को यह अवसर मिला।

1999 में भारतीय जनता पार्टी ने जब मीणा जाति के किसी योग्य उम्मीदवार की तलाश में उन्हें टिकट दिया और वे प्रथम बार सांसद निर्वाचित हुई तो वे कृतज्ञ थीं कि उन्हें पार्टी ने पहचाना। किंतु यह पहचान केवल जीतने की क्षमता व जाति विशेष की होने की योग्यता पर निर्भर थी। क्षमताओं का आंकलन तब हुआ जब प्रधानमंत्री ने उन्हें मंत्री बनाया। पहली बार ही तो वे सांसद बनी थीं। इतनी सारी ओर भी तो महिला सांसद थीं भारतीय जनता पार्टी की, जो अनेक बार निर्वाचित हुई थीं ओर मंत्री नहीं बन सकीं। किंतु सबके बीच उन्हें इस योग्य माना गया तो बात केवल जातिगत ओर राज्यगत समीकरणों के ही नहीं थी अपितु उनकी कर्मठता, लगन और साथी सहयोगियों, कार्यकर्ताओं और पीड़ितों के प्रति अतिरिक्त संवेदनशीलता की भी थी। अधिकारी के रूप में उसी विभाग में काम करते रहकर महिलाओं के विषय में उनके मन में विशेष आग्रह और रूचि थी और महिलाओं के सशक्तीकरण और बोध के लिए सुविचारित योजनाएं। 27 वर्षों की सरकारी नौकरी के अनुभव ने उन्हें अधिक समृद्ध बनाया तो सांसद बनकर उनकी संवेदनाऐं और अधिक प्रखर हुई। किन्तु सरलता, सौम्यता उनसे छूटी नहीं। मंत्री बनने के बाद भी कार्यकर्ताओं को अपने प्यार और ममत्व की छांव में वे उसी प्रकार समेटती रहीं। संयुक्त परिवार में जिस प्रकार से वे एक आदर्श पत्नी, मां, बहू एवं भाभी का कर्तव्य निर्वाहन करती रहीं वह भी अपने आप में बेमिसाल है। न पढ़ाई करते हुए परिवार के कर्तव्यों से विमुख हुईं और न अधिकारी रहकर। वे सदैव अपने आसपास के लोगों के लिए संबल बनी रहीं।

मैने जब उनकी बेटी से पूछा आपकी माँ को किससे प्रेरणा मिली? उसका सहज उत्तर था ''हमारी मां किससे प्रेरणा पाती। हमारा पूरा परिवार उनसे प्रेरणा पाता है। अपने देवरों की प्रिय व श्रद्धेय भाभी, वे ही पूरे परिवार का संबल हैं। उनको मैंने कभी हारते-थकते नहीं देखा।

महिला शिक्षा एवं महिला विकास के लिए अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए जमीनी स्तर पर महिलाओं की समस्याओं को देखने-समझने वाले अनेक हैं किंतु निर्णायक स्थिति में बैठकर पूरे देश की महिलाओं के हित में काम करने का अवसर पाने वाले विरले है। जसकौर मीना को यह अवसर मिला।

1999 में भारतीय जनता पार्टी ने जब मीणा जाति के किसी योग्य उम्मीदवार की तलाश में उन्हें टिकट दिया और वे प्रथम बार सांसद निर्वाचित हुई तो वे कृतज्ञ थीं कि उन्हें पार्टी ने पहचाना। किंतु यह पहचान केवल जीतने की क्षमता व जाति विशेष की होने की योग्यता पर निर्भर थी। क्षमताओं का आंकलन तब हुआ जब प्रधानमंत्री ने उन्हें मंत्री बनाया। पहली बार ही तो वे सांसद बनी थीं। इतनी सारी ओर भी तो महिला सांसद थीं भारतीय जनता पार्टी की, जो अनेक बार निर्वाचित हुई थीं ओर मंत्री नहीं बन सकीं। किंतु सबके बीच उन्हें इस योग्य माना गया तो बात केवल जातिगत ओर राज्यगत समीकरणों के ही नहीं थी अपितु उनकी कर्मठता, लगन और साथी सहयोगियों, कार्यकर्ताओं और पीड़ितों के प्रति अतिरिक्त संवेदनशीलता की भी थी। अधिकारी के रूप में उसी विभाग में काम करते रहकर महिलाओं के विषय में उनके मन में विशेष आग्रह और रूचि थी और महिलाओं के सशक्तीकरण और बोध के लिए सुविचारित योजनाएं। 27 वर्षों की सरकारी नौकरी के अनुभव ने उन्हें अधिक समृद्ध बनाया तो सांसद बनकर उनकी संवेदनाऐं और अधिक प्रखर हुई। किन्तु सरलता, सौम्यता उनसे छूटी नहीं। मंत्री बनने के बाद भी कार्यकर्ताओं को अपने प्यार और ममत्व की छांव में वे उसी प्रकार समेटती रहीं। संयुक्त परिवार में जिस प्रकार से वे एक आदर्श पत्नी, मां, बहू एवं भाभी का कर्तव्य निर्वाहन करती रहीं वह भी अपने आप में बेमिसाल है। न पढ़ाई करते हुए परिवार के कर्तव्यों से विमुख हुईं और न अधिकारी रहकर। वे सदैव अपने आसपास के लोगों के लिए संबल बनी रहीं।

मैने जब उनकी बेटी से पूछा आपकी माँ को किससे प्रेरणा मिली? उसका सहज उत्तर था ''हमारी मां किससे प्रेरणा पाती। हमारा पूरा परिवार उनसे प्रेरणा पाता है। अपने देवरों की प्रिय व श्रद्धेय भाभी, वे ही पूरे परिवार का संबल हैं। उनको मैंने कभी हारते-थकते नहीं देखा।

निराशा उनके पास फटकती नहीं। और दुख वे पालती नहीं। मैने जबसे होश संभाला है उनको सदैव कार्य करते हुए ही पाया है। अनेक कठिनाईयों के बीच मुस्कुराती रहीं हैं।

यही जसकौर मीना की पहचान है और यही पूंजी। सरलता, बातचीत में और व्यवहार में। सीधी सपाट। न लाग न लपेट न दुराव न छुपाव। जैसी जो बात है उसे बिना किसी को चोट पहुंचाये जस का तस स्पष्टता से रख देना। सहजता ऐसी कि मन छू ले।

मेरा प्रथम परिचय उनसे तब हुआ जब राष्ट्रीय महिला आयोग के स्थापना दिवस कार्यक्रम में प्रथम पंक्ति में मेरे समीप आकर बैठ गईं थीं। तब उस सीधी-सादी, सरल सी, अपने संयुक्त परिवार की सदस्या सी लगती, जसकौर मीणा को मैं भी कहां पहचान पाई थी। किसी ने बताया था, यह हमारी नई मंत्री हैं। मेरी सांसद मित्र ने उनके बारे में बताया जरूर था पर परिचय नहीं हुआ था। मैने उनसे मंच पर बैठने का आग्रह किया था। पर उन्होंने विनम्रता से इंकार कर दिया था। कार्यभार ग्रहण नहीं किया था इसलिये शपथ ग्रहण करने के बावजूद भी उन्होनें उस कुर्सी पर बैठना स्वीकार नहीं किया।

सवाई माधोपुर के पहाड़ों की तलहटी के एक वीरान गांव मैनपुरा में 'ग्रामीण महिला विद्यापीठ' की स्थापना, बालिका शिक्षा के प्रति उनके आग्रह के साथ ही एक व्यापक और गहन सोच का उदाहरण भी है। किसी एक समृद्ध दानदाता के दान से नहीं, समस्त गांव वालों के खून पसीने की कमाई से अर्जित पैसे से विद्यालय का निर्माण और विकास। जिससे वे भी उसमें अपना योगदान समझें और जानें कि विद्यालय केवल जसकौर मीना का नहीं उन सब का है और उनकी उतनी ही जवाबदारी है।

संवेदनशील जसकौर मीना स्वभाविक रूप से कवि हृदया भी हैं। राजस्थान लोकगीतों की रचना गाती, गुनगुनाती और जीती हुई। अचानक मिल गये पद के कारण अहंकार में डूबती उतराती नहीं, अपितु सरल हास-परिहास से आस-पास के वातावरण को भी सहज बनाती। महिला बाल विकास मंत्री के रूप में सवा साल की अल्पावधि में महिला बाल विकास विभाग भी उनके कुंदन स्पर्श से निखरा है। पूर्व महिला बाल विकास मंत्री श्रीमती सुमित्रा महाजन ने महिला बाल विकास विभाग को यदि ऊर्जा प्रदान की थी तो जसकौर मीना ने उसे गति देकर समस्त योजनाओं को अंजाम तक पहुंचाया। राष्ट्रीय पोषाहार मिशन का गठन, राष्ट्रीय बाल चार्टर तथा राष्ट्रीय बाल आयोग का अनुमोदन जसकौर मीना के समय ही हुआ। अनेकानेक कार्यशालाओं एवं जागरूकता कार्यक्रम के माध्यम से उन्होंने महिला बाल विकास विभाग की पहचान बनाने का बहुत बड़ा कार्य किया है। महिला बाल विकास विभाग का बजट बढ़ाने के भी प्रयास किये गये हैं और महिला सशक्तिकरण के लिए सभी संभव उपाय करने की दिशा में वे अग्रसर रहीं।

राजधानी के सत्ता के गलियारों में जहां राजभाषा घोषित किये जाने के बावजूद भी हिन्दी भाषा से सौतेले से भी बदतर व्यवहार किया जाता हो, जहां वरिष्ठ अधिकारी, तथाकथित बुद्धिजीवी, स्वयंसेवी महिला संस्थाऐं, विषयों

www.archanameena.com

के विशेषज्ञ देश की करोड़ों महिलाओं के हितों की बात अंग्रेजी में करना चाहते हों। वहां हिन्दी में अपनी सारी बात बिना किसी संकोच के सरल से सरल भाषा में कह देना उनकी विशेषता है। संसद में भी वे महिला मुद्दे और अपने क्षेत्र की समस्याओं को उठाने में कभी चूकी नहीं। महिला सरोकारों पर उनकी एक स्पष्ट सोच है। जो जमीन से जुड़ी हुई है। वे गांव में पली-बढ़ी, रहीं। समान रूप से गांव और शहर की महिलाओं की समस्याओं को करीब से जाना, इसलिए क्षेत्र के विकास के लिए विशेष चिंतित रहती हैं।

संसदीय क्षेत्र में करवाए गए अनेक कार्य इसका प्रमाण हैं। करौली जिले में 12 करोड़ रूपए के 700 विकास कार्य, 106 करोड़ की लागत की 217 स्वीकृत सड़कें, करौली एवं श्री महावीर जी में मोबाइल फोन सेवा, करौली जिले में 12 नये गए्क्चेंज, ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अंतर्गत 52 हजार शौचालय, प्रमुख रेलवे स्टेशनों पर कम्प्यूटरीकृत आरक्षण, छः नई रेलगाड़ियों का विभिन्न स्थान पर ठहराव, सवाईमाधोपुर को नए स्टेशन का दर्जा, हिन्ड़ौन में नवोदय विद्यालय, खंडार एवं करौली में 1 करोड़ रूपए की भू संरक्षण योजना आदि अनेक कार्य हैं जिन्हें उन्होंने अपने प्रयासों से अंजाम दिया है।

सवाई माधोपुर के लोगों को जसकौर का यशगान अपना जसगान लगता है। वह उनके लिए मंत्री नहीं उनकी अपनी बहू, बिटिया है। जितना स्नेह उन्होंने बांटा है उससे कहीं अधिक पाया है। उनकी लोकप्रियता की राह लोगों के दिलों से होकर निकलती है। बहुत कम समय में जसकौर मीना ने संसद और सरकार में अपने श्रम और लगन के बल पर पहचान बनाई है।

www.archanameena.com

महिला सशक्तिकरण को समर्पित पत्रिका
''ओजस्विनी'' में 2004 में डॉ. सुधा मलैया द्वारा
जसकौर जी के लिये लिखित भावनायें

श्रीमती उषा बापना

अतिरिक्त निदेशक (सेवानिवृत)

बालिका शिक्षा, राजस्थान

जैसा उन्हें मैंने जाना

कुछ दिनों पूर्व जसकौर जी की बेटी का फोन आया कि वह अपनी माँ की जीवनी के रूप में एक किताब तैयार कर रही है। चाहती है कि मैंने उन्हें बहुत निकट से देखा है, अधिकारी से लेकर व्यक्तिगत एवं पारिवारिक संबंधों को बीते कई वर्षों से जिया है, अतः जैसा मैंने उन्हें जाना है उन्हें शब्दों में व्यक्त करूं।

मन में तभी से क्या लिखूं व कैसे लिखूं इसका ताना-बाना बनने लगा। कभी मन करता प्रभावी व्यक्तित्व वाले अधिकारी से हुए परिचय से शुरू करूं या उनके सवाईमाधोपुर के घर के पिछवाड़े में मांडने मँडे आंगन की धूप में बैठकर उनके हाथ के बने आचार व मैथी के परांठे का स्वाद यादकर उन मधुर स्मृतियों को ताजा करूं।

जसकौर जी से मेरा पहला परिचय उपनिदेशक शिक्षा के रूप में जयपुर में लगभग आज से पच्चीस वर्ष पूर्व मैं जब गाँधीनगर स्कूल में प्राचार्या थी तब एक अधिकारी के रूप में हुआ था। प्रभावी व्यक्तित्व एवं मधुरभाषी वरिष्ठ अधिकारी के आपके रूप ने मुझे आपकी ओर सहज ही आकर्षित किया। सबकी बात आप बहुत धैर्य से सुनतीं व संवेदनशील अधिकारी के रूप में समस्या का निवारण करतीं थीं। मेरा भी आपसे परिचय आपके सहकर्मियों में आपकी विशेष पसन्द के रूप में अलग सा ही रहा।

जयपुर में आपका ठहराव कम समय ही रहा। आपके पृथक उद्देश्यों के कारण आपने पुनः सवाईमाधोपुर जाने का निर्णय लिया। आज मैं यह कह सकती हूँ कि नियति प्रत्येक के जीवन की दिशा पूर्व में ही निर्धारित कर देती है एवं उसी के अनुसार प्रत्येक घटना घटती रहती है। सवाईमाधोपुर में शिक्षा विभाग के साथ-साथ महिला बाल विकास, आई.सी.डी.एस., प्रौढ शिक्षा आदि विभागों का उत्तरदायित्व भी आपको सरकार ने दे दिया। बालिका एवं महिला विकास के कार्यक्रम आपकी रूचि के एवं दिल के अधिक नजदीक थे इसलिये वे पूरे मनोयोग से इनका उत्तरदायित्व निभाते हुए जनता के नजदीक होती चली गई।

आपके नेतृत्व में कमजोर तबके की बालिकाओं एवं महिलाओं को अपने पांव पर खड़े होने का विश्वास एवं अवसर प्राप्त हुआ है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा अभिभावकों की प्राथमिकता नहीं होती अपितु उनका विवाह जल्दी ही कर देते हैं। इसे ही अपनी जिम्मेदारी से मुक्त होकर उनके सुरक्षित भविष्य की एकमात्र कुंजी मानते हैं। ऐसी ही बालिकाओं के भविष्य को संवारने के लिये आपने एक आवासीय विद्यालय शुरू किया। धीरे-धीरे उसे कॉलेज, बी.एड. कॉलेज तक आगे बढ़ाया जहाँ निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था भी उपलब्ध हो रही है। यहाँ वे अपनी शिक्षा पूरी कर अपने पाँवों पर खड़ी हो रही है।

अधिकारी के रूप में मेरे संबंध जसकौर जी से बहुत कम समय रहे। जयपुर में रहते हुए जो पारिवारिक संबंध शुरू हुए थे उनमें एक दूरी रखना आवश्यक था, थोड़ा संकोच था किन्तु सवाईमाधोपुर जाने के बाद वे अधिक प्रगाढ़ होते गये। आपका स्नेहभरा आमंत्रण हमेशा आपके पास जाने का कारण बनता रहा।

कहा तो यह जाता है कि एक पुरुष की सफलता में उसकी पत्नी का बड़ा हाथ होता है किन्तु जसकौर जी के जीवन को नई दिशा देने एवं सफल होने में मीना साहब का बहुत बड़ा योगदान रहा है। आज भी वे उनकी प्रेरणा है। राजनीति में प्रवेश भी उनके प्रोत्साहन से ही हुआ। राजकीय नौकरी के दौरान विभिन्न विकास के कार्यक्रमों में काम करते हुए स्थानीय लोगों के बीच आप काफी लोकप्रिय रहीं है उसी वजह से आप पहली बार में ही सांसद का चुनाव जीत गई। हालांकि जसकौर जी का राजनीति में जाना हमारे लिये सुखद आश्चर्य था। सांसद का चुनाव जीतने के बाद आपका फोन आया कि उषा जी आप आओं बहुत सारी बातें करनी है। हम दोनों आपसे मिलने गये! चुनाव प्रचार के दौरान के अपने अनुभव हम घन्टों तक सुनते रहे! जिस भोलेपन से आप बातें कर रही थी वह मुझे आज भी याद है। मन कहता था कि राजनीति की चतुरता, दोहरापन, कूटनीति एवं दिखावे से दूर आप जैसा स्पष्टवादी व्यक्ति कैसे समयोजन कर पायेगा। आपने वहाँ भी सांसद एवं मंत्री के रूप में अपनी छाप छोडी है। उस दौरान मैं अपने आपको गौरवान्वित महसूस करती थी कि शिक्षा जगत के हमारे अपने मंत्री पद को सुशोभित कर रहे हैं।

आपने कई मुकाम हासिल किये है पर आप सबसे पहले श्रेष्ठ माँ एवं पत्नी हैं। दोनों पुत्रियों को अच्छी शिक्षा देकर अपने पांवों पर खड़ा ही नहीं किया बल्कि उन्हें भी सहज सरल एवं संस्कारित बनाया है। आज भी आप अपनी रूचियों के अनुसार कार्य करने का समय निकाल लेती हैं। यह प्रेरणा आपकी बेटियों में भी स्थानान्तरित हुई है। खेती-बाड़ी, पशु-पालन आदि का पूरा ज्ञान आपको है। प्राकृतिक वातावरण में सहज जीवन जीना आपको रूचिकर है। खाने-पीने का पूरा ध्यान आपके स्वस्थ जीवन का राज है। आपकी दिनचर्या पूरी तरह से व्यस्त एवं मुस्कुराहट भरी रहती है। मेरे लिये उनके जीवन की बहुत सी बातें अनुकरणीय है।

ईश्वर आपको एवं आपके परिवार को इसी प्रकार स्वस्थ एवं सुखी रखे। आप इसी प्रकार मुस्कराहट के साथ जरूरतमंदों की विशेषकर बालिकाओं एवं महिलाओं की सहायता करती रहें यही अभिलाषा है।

www.archanameena.com

www.archanameena.com

Copyrights & Credits

Cover Photo
© ISHITA KUMAR

Designed by
KitesDesignStudio, Jaipur

Publication - JANUARY, 2020

Self Published
jaskaurmeena@gmail.com

/ JaskaurBJP
/ JaskaurBJP
/ JaskaurBJP

जसकौर मीना

एक कर्मयोगी,
एक प्रेरणा

शिक्षित बालिका
सशक्त भारत

द्वारा
रचना मीना